निवेदन ।

इस समय संसारके अधिकांश क्षेत्रोंमें नवीन विचार-लहरियाँ उठ रही हैं। बहुतसे पुराने विचारोंकी असारता सिद्ध होती जा रही है और उनका स्थान नवीन प्रकारके विचार ले रहे हैं। विशेषतः अमेरिका इस ओर और भी शीघ्रतासे अग्रसर हो रहा है।

हमारे यहाँ भारतवर्षमें तो बहुत दिनोंसे भाग्यवादी चले ही आ रहे हैं; पर इधर कुछ दिनोंसे पाश्चात्य देशोंकी परिस्थितियाँ भी कुछ ऐसी विलक्षण हो रही हैं कि वहाँ भी बहुतसे भाग्यवादी उत्पन्न होने लग गए हैं। जबसे पाश्चात्य देशोंमें आधिभौतिक उन्नति आरम्भ हुई है, जबसे वहाँके लोगोंमें और सब प्रकारकी उपासनाओं तथा उन्नतियोंका स्थान केवल लक्ष्मीकी उपासना तथा आर्थिक उन्नतिने ले लिया है और जबसे वहाँ स्वार्थ-साधनका सिक्का जमा है तबसे वहाँकी अधिकाश जनता दिनपर दिन परम दुखी होती जा रही है। इस समय पाश्चात्य देशोंमें घोर विषमता देखनेमें आती है। एक ओर तो थोड़ेसे ऐसे धन-कुबेर दिखाई देते हैं जिन्हें धन रखनेकी जगह नहीं मिलती और दूसरी ओर बहुत अधिक सख्या ऐसे दरिद्रोंकी दिखाई देती है जो दिन रात कठोर परिश्रम करनेपर भी भरपेट भोजन नहीं पा सकते। एक ओर तो ऐसे सम्पन्न हैं, जिनके पास सैकड़ों मकान बल्कि बड़े बड़े प्रासाद हैं और दूसरी ओर करोड़ों ऐसे निर्धन हैं जिनके पास घोर शीत और वर्षामें क्षण भर विश्राम करनेके लिए एक टूटी झोंपड़ी भी नहीं है। बहुतसे दरिद्रोंको थोड़ेसे धनवानोंका भीषण दासत्व करना पड़ता है और उनके संकेतपर तरह तरहके नाच नाचने पड़ते हैं। वहाँ सम्पत्ति तो अवश्य बहुत बढ़ गई है; परन्तु उस सम्पत्तिसे जनसाधारणको कोई विशेष लाभ नहीं हो रहा है। जो कुछ लाभ हो रहा है वह समाजके एक विशिष्ट वर्गका ही हो रहा है। समाजका शेष बहुत बड़ा अंश सदा बहुत ही दुखी और चिन्तित रहता है। किसी प्रकारकी उन्नति

करना तो दूर रहा अधिकांश लोग अपनी उदरपूर्त्तिका भी कोई ठीक ठीक मार्ग नहीं पाते हैं। ऐसी अवस्थामें यदि उनका सारा उत्साह नष्ट हो जाय, यदि वे अपने जीवनसे उदासीन हो जायँ, अनेक प्रकारके पाप और दुराचार और यहाँ तक कि आत्महत्या भी करने लग जायँ तो यह कोई आश्चर्यकी बात नहीं है।

इसी प्रकारके लोगोंकी बहुत अधिक संख्या देखकर अमेरिकामें एक नवीन विचार-धारा चल पड़ी है। इस विचार-धाराके सिद्धान्त आदि ऐसे हैं जो निरुत्साह तथा निर्जीव दीन-दुखियोंमे नवीन उत्साह तथा नवीन जीवनका संचार करते हैं। इस शाखाके लोगोंका मूल सिद्धान्त यह है कि लोगोंको कभी निराश नहीं होना चाहिए, सदा उत्साहित रहना चाहिए, सबके साथ प्रेमपूर्ण व्यवहार करना चाहिए और इस प्रकार समस्त संसार—समस्त मानव समाज—की उन्नति करनेमे सबको योग देना चाहिए। इस शाखाके लोग परमात्मापर पूरा पूरा विश्वास रखते हैं और आत्माको उसीका अश समझते हैं। फलतः वे यह भी कहते हैं कि जो आत्मा स्वयं उस परमात्माका अंश है उसके लिए न तो कभी निराश या दुखी होनेकी आवश्यकता है और न उसके लिए ससारमें कोई कार्य असम्भव है। ये लोग यह भी कहते हैं कि जिस प्रकार मनुष्यको कभी दुखी होनेकी आवश्यकता नहीं है, उसी प्रकार उसे रोगी होनेकी भी कोई आवश्यकता नही है। परमात्माने हमारे शरीरमें ही ऐसे तत्त्व उत्पन्न कर दिए हैं, जो हमारे शरीरके रोग भी दूर करते रहते हैं और उसके टूटे-फूटे अशोंकी मरम्मत भी करते रहते हैं। तात्पर्य यह कि मनुष्य शारीरिक, आर्थिक और नैतिक दृष्टिसे स्वयं पूर्ण है और यदि वह प्राकृतिक नियमोंका ठीक ठीक पालन करे, तो न तो वह रोगी हो सकता है, न दुखी हो सकता है और न दरिद्र रह सकता है। इस प्रकारके नवीन विचारोंका प्रचार करनेके लिए अमेरिकामें सैकड़ों पुस्तकें पुस्तिकाएँ, मासिक पत्रिकाएँ और समाचारपत्र आदि प्रकाशित होने लग गए हैं। इस प्रकारके साहित्यका वहाँ बहुत शीघ्रतासे प्रचार हो रहा है और उसका बहुत कुछ शुभ फल भी देखनेमे आता है।

अमेरिकाके श्रीयुक्त डा० ओरिसन स्वेट मार्डेन इस शाखाके एक बहुत बड़े प्रवर्तक और लेखक हैं। आपने इन नवीन और उत्साहपूर्ण विचारोंसे भरी हुई पचीसो बहुत अच्छी अच्छी पुस्तके प्रकाशित की हैं जिनका अमेरिका तथा युरोपमे बहुत अधिक आदर है। भारतवर्षमें भी इन पुस्तकोंके कुछ विशि

और स्वतन्त्र संस्करण प्रकाशित हुए हैं और उनके अनुवाद भी अनेक देशी भाषाओंमें हो गए हैं। हिन्दीमें भी डा० मार्डेनकी कई अच्छी अच्छी पुस्तकोंके अनुवाद प्रकाशित हो चुके हैं जिनका हिन्दी पाठकोंने अच्छा आदर किया है*। उन्हीं डा० मार्डेनकी सुप्रसिद्ध पुस्तक Peace, Power and Plenty× के आधारपर हिन्दीमें यह पुस्तक प्रस्तुत करके पाठकोंकी सेवामें उपस्थित की जाती है। आशा है, हिन्दीके पाठक भी इन नवीन विचारोंसे यथेष्ट लाभ उठावेंगे और अपनी आत्मिक, नैतिक, ऐहिक और शारीरिक उन्नति करके सब प्रकारसे सुखी होंगे।

काशी ज्येष्ठ शुक्ला २, सं० १९८४	निवेदक रामचन्द्र वर्म्मा।

* स्वेट मार्डेनकी भाग्य-निर्माण, दिव्य जीवन, दरिद्रतासे बचनेके उपाय, और सफलताका मार्ग ये चार पुस्तकें हमारी जानी हुई हैं। इनके सिवाय संभव है, उनकी और भी कुछ पुस्तकें हिन्दीमें हो गई हों। —प्रकाशक।

× जिस समय यह पुस्तक प्रकाशित हुई, उस समय इसकी इतनी अधिक माँग हुई—लोगोंने इसे इतना अधिक पसन्द किया कि लगभग दो वर्ष तक अमेरिकामें हर महीने इसकी एक एक आवृत्ति प्रकाशित होती रही और फ्रान्स, इँग्लैण्ड, जर्मनीमें जो आवृत्तियाँ निकलीं, वे जुदा ही। —प्रकाशक।

विषय-सूची

सामर्थ्य समृद्धि और शान्ति ।

१–शरीर और मन ।

धर्मार्थकाममोक्षाणां मूलमुक्तं कलेवरम् ।

—भावप्रकाश ।

शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम् ।

—कालिदास ।

वास्तवमें मन और शरीरमें कुछ भी भेद नहीं है। जिस प्रकारके परमाणुओंसे मन बना है, ठीक उसी प्रकारके परमाणुओंसे यह शरीर भी बना है।

—विवेकानन्द ।

हमारा यह शरीर हमारे मनको ढकने और उसकी रक्षा करनेवाला ऊपरी कवच है। वास्तवमें मन और शरीरमें किसी प्रकारका भेद नहीं है। जिस प्रकार सीपके अन्दर रहनेवाले प्राणीका उसके ऊपरी प्रावरण, सीपके साथ घनिष्ठ सम्बन्ध होता है, ठीक उसी प्रकार मनका भी शरीरके साथ सम्बन्ध होता है। इसी प्रकारका शंख जातीय एक और छोटा कीड़ा होता

है, जो इधर उधरसे कुछ सृष्ट पदार्थ लेकर अपनी पीठपर अपने रहनेके लिए घर बनाता है। वही घर मानो उसका शरीर होता है। उन दोनोमे गुणका कोई भेद नहीं होता, केवल रूपका भेद होता है। ठीक यही बात हमारे मन और शरीरके सम्बन्धमे भी है। जब एक बार यह बात अच्छी तरह हमारी समझमे आ जाती है तब फिर हम यह भी अच्छी तरह समझने लगते हैं कि मनका शरीरपर और शरीरका मनपर क्या प्रभाव होता है। हमारे जड़ शरीरकी रचना करनेवाले तत्त्व, जड़ और दृश्य है और उन्हीं तत्त्वोके सूक्ष्म और अदृश्य स्वरूपसे हमारे सूक्ष्म शरीरकी रचना हुई है। इसलिए इन दोनोमे केवल इतना ही भेद है कि इनमेसे एक दृश्य है और दूसरा अदृश्य। साधारण पानी जड़ और दृश्य स्थितिमे होता है और उसीसे बननेवाली भाप सूक्ष्म और अदृश्य होती है। पानी और भापमे जो अन्तर होता है वह गुणमूलक नही होता, केवल रूपमूलक होता है। ठीक यही बात हमारे शरीरकी भी है। हमारे जड़ शरीर और सूक्ष्म शरीरमे कोई ऐसा भेद नहीं है जो गुणमूलक हो। इसी लिए मनका सदा शरीरपर और शरीरका सदा मनपर प्रभाव हुआ करता है। जब शरीरमे ज्वर या इसी प्रकारका और कोई विकार उत्पन्न होता है, तब हमारा मन भी ज्वरित और उदास हो जाता है। और जब हमारे मनको किसी प्रकारका कष्ट होता है या उसमे कुछ उदासी आती है, तव हमारा शरीर दुःखी और उदास हो जाता है।

सर्कसमे काम करनेवाले खिलाड़ियोका सदाका यह अनुभव है कि जब कोई खेल करनेके कारण उनको किसी प्रकारकी बहुत कड़ी पीड़ा होती है अथवा जब वे यो ही कभी बीमार पड़ते है, तब यदि उन्हें [illegible]मे आना पड़ता है और वहाँ आकर वे बैंड बजता हुआ सुनते

हैं, तो वे मानो उस समय अपनी सारी पीड़ा या रोग बिलकुल भूल जाते है, और अनेक प्रकारके ऐसे आश्चर्यजनक कौशल दिखलाने लगते है जिनमे शरीरको बहुत अधिक कष्ट होता है। उस समय उनके मन-मेसे इस वातका विचार बिलकुल निकल जाता है कि हमारे पैरमे बहुत दर्द है और अभी पाँच ही मिनट पहले हमसे अच्छी तरह चला भी नही जाता था। उस समय सिवा खेल दिखलानेके और किसी प्रकारका विचार उनके मनको छू भी नहीं जाता।

अपने कार्यके प्रति प्रेम, उच्चाकांक्षा और दर्शकोकी उत्सुकता आदि बातोके योगसे अच्छे नट भी अपने शारीरिक कष्टो और रोग आदिको तुरन्त भूल जाते है और अपना कार्य सदाकी अपेक्षा और भी अच्छी तरह कर दिखलाते है।

अच्छे अच्छे वक्ताओ, कथा कहनेवाले पौराणिको और गवैयो आदिका भी ऐसा ही अनुभव है।

चाहे हमारी इच्छा हो, और चाहे न हो पर उग्रतर और अपरिहार्य आवश्यकतामे ही इतनी अधिक शक्ति है कि उसके सामने सामान्य शारीरिक वेदनाएँ और कष्ट तत्काल दूर हो जाते है। कभी कभी कोई ऐसा बिकट प्रसग आ जाता है कि हम समझने लगते है कि इससे पार पाना असम्भव है। इतनेमे वह बिकट अवसर आ भी पहुँचता है। उस समय जब हमे प्रत्यक्ष रूपसे उस विकट अवसरका सामना करना पड़ता है, तब हम अपने हृदयकी उस आवश्यकताकी अमोघ और चक्रवर्तिनी शक्तिका अनुभव करने लगते है। हम लोगोमेसे प्रत्येक व्यक्तिके हृदयमे एक अदृश्य और सुप्तप्राय शक्ति रहती है। वही शक्ति ऐसे अवसरोपर खड़बड़ाकर जाग उठती है, झपटकर हमारी सहायता करनेके लिए आगे बढ़ती है, और उसीके बलसे हम चटपट

कोई ऐसा दुष्कर कार्य भी कर दिखलाते है, जो हमे पहले बिलकुल असम्भव जान पड़ता था।

यदि हम ध्यानपूर्वक देखेंगे तो हमे जान पड़ेगा कि सर्कसमे काम करनेवाले खिलाड़ी, नट, उपदेशक तथा इसी प्रकारके और ऐसे लोगोके लिए जो सदा अपना काम समान भावसे और निरन्तर किया करते है, सहसा कभी यह कहनेका अवसर ही नही आता कि आज बिलकुल लाचार होनेके कारण हम अपने कामपर नहीं आ सकते। नौकरीपेशा लोग पहले चाहे छुट्टियाँ आदिके लिए कितने ही उत्सुक क्यो न रहते हों, पर, जब बड़ी बडी तातीले या छुट्टियाँ उनके सामने आ जाती है, तब उनके कारण उनकी तबीयत बिलकुल उकता जाती है, और उनके मनमे एक तरहकी घबराहट पैदा होने लगती है। मतलब यह कि काम करनेवाला आदमी जल्दी खाली रह ही नही सकता। खाली होनेकी दशामे उसे एक प्रकारका कष्ट होता है। पर जब वह काममे लगा रहता है, तव उसे बीमार पड़ने या उकताने घबरानेका मौका ही नही मिलता। घबराहट तो सिर्फ छुट्टीके दिनोमे खाली रहनेपर ही होती है।

यदि इस प्रकार बराबर काम करनेवाले यह कहे कि हम तो कभी बीमार पड़ते ही नहीं, क्योकि बीमार पड़ना हमारे भाग्यमे ही नहीं लिखा है, तो इसमें कोई अत्युक्ति नहीं हो सकती। उनके लिए परिस्थिति ठीक ऐसी ही होती है, इसके विपरीत नही। इस प्रकारके लोगोके जीवनमे अनेक ऐसे अवसर आते है कि यदि वैसे अवसर किसी ऐसे आदमीके जीवनमे आवे जो निकम्मा हो और कोई काम धन्धा न करता हो, तो वह मजेमे अपने आपको बीमार वतलाने लगेगा और चुपचाप .ई'र पड़ जायगा। परन्तु, जो लोग कामकाजी होते है, उनके

मनमे इसी प्रभावशाली आवश्यकताकी महाशक्तिके विलक्षण बल्के कारण, इस प्रकारका क्षुद्र विकार, क्षणभर भी नहीं ठहर सकता।

अमेरिकाके सान् फ्रान्सिसको नगरमें एक बार बहुत बडा भूकम्प आया था, जिसके कारण वहाँ बहुत कुछ हानि और नाश हुआ था। उस समय वहाँ एक ऐसा आदमी था जो पन्द्रह वर्षोंसे बीमार पड़ा हुआ था। पर उस भूकम्पके भयानक धक्केका उस बीमारपर ऐसा प्रभाव पड़ा कि वह चटपट उठकर चलने फिरने लगा। उस समय उक्त नगरमे इसी प्रकारकी और भी अनेक विलक्षण घटनाएँ हुई थीं। उस समय वहाँ और भी बहुतसी ऐसी स्त्रियाँ और पुरुष थे, जो बरसोंसे बीमार पड़े हुए थे और चल फिर नहीं सकते थे। बल्कि बहुत से लोग तो ऐसे थे जो बहुत कुछ उद्योग करने पर भी जरासा उठकर खडे भी नही हो सकते थे। जब अचानक वह भयानक भूकम्प आया तब मानो उन लोगोंमें किसी अपूर्व और अद्भुत शक्तिका संचार हो गया। वे लोग चटपट उठ खड़े हुए और अपने अपने बाल बच्चोको गोदमे उठाकर घरसे बाहर निकल पडे। केवल यही नहीं बल्कि उन लोगोंने अपने घरका सब सामान उठाकर सुरक्षित स्थानोपर पहुँचाया और इसी प्रकारके और भी अनेक आश्चर्यजनक कार्य किये। इसी प्रकारके और भी अनेक उदाहरण प्रसिद्ध हैं। एक उपन्यासमे यह भी कहा गया है कि एक बार भयानक आग लगनेके कारण एक गूँगी स्त्री सहसा अच्छी तरह बोलने लग गई थी। यदि ढूँढे जायँ तो इसी प्रकारके और भी अनेक उदाहरण मिल सकते है। इस प्रकारके बहुत से उदाहरण लोगोको माळूम भी होगे।

जब तक सामने कोई बहुत बडा संकट आकर उपस्थित नही होता, तब तक किसीको अपनी सहनशीलता और सामर्थ्यका सच्चा और ठीक

अन्दाज नहीं लग सकता। अपने पति और सन्तानको प्राणसे भी बढ़-कर प्रिय समझनेवाली स्त्रियाँ, जल्दी अपने मनमे उनकी मृत्युकी कल्पना भी नहीं कर सकतीं। इस प्रकारकी कल्पना भी उनके लिए असह्य वेदना उत्पन्न करती है। वे समझती है कि यदि ईश्वर न करे कभी ऐसा विकट प्रसंग आ ही जाय, तो हम क्षण भर भी न जी सकेंगी। परन्तु फिर भी इस प्रकारकी बहुतेरी स्त्रियाँ अपने पति या पुत्र आदिकी मृत्युके उपरान्त बरसो तक जीती और अपना समय बिताती हुई देखी जाती हैं। उनमेसे कुछ स्त्रियाँ तो ऐसी भी होती है, जो अपने समस्त कुलका, कुलकी प्रतिष्ठाका और सर्वस्वका नाश हो जाने पर भी बहुत अच्छी तरह रहती हुई देखी जाती है। अनेक प्रकारके रोगोंमें रोगियोकी अवस्था इतनी भयंकर हो जाती है कि यदि कोई उन्हें एक बार दूरसे या आड़मेसे जरा सा भी देख ले, तो उसकी अव-स्थाका वह भीषण और हृदय कँपानेवाला चित्र बहुत समय तक आँखोके सामने बार बार आकर चित्तको उद्विग्न और उदास किए रहता है। परन्तु, जब वैसा ही कोई प्रसग स्वयं अपने ऊपर आ पड़ता है, तब आदमी उसे जैसे तैसे चुपचाप सहन करता ही है। इतनी सब बाते कहनेका तात्पर्य केवल यही है कि प्रत्येक मनुष्यमे इतनी अधिक सामर्थ्य होती है कि चाहे कितना ही बिकट प्रसंग क्यो न आ पड़े, वह उसे निबाह ले जाता है; और यह बात प्रायः चारो ओर देखनेमे भी आती है।

स्त्रियाँ अपने नामके साथ अबला, भीरु तथा इसी प्रकारके और भी अनेक विशेषण लगाया करती हैं। परन्तु, अब तक बहुत सी स्त्रियाँ गई हैं जो अपने पतिकी मृत्यु होने पर, शान्त चित्तसे उसकी ...मे प्रवेश कर गई हैं और अब भी, इस प्रकारकी बहुत सी स्त्रियाँ

देखनेमे आती है। यह तो सभी लोग जानते हैं कि बालिकाओका हृदय कितना भीरु और कोमल होता है। कुछ दिनोकी बात है कि दक्षिणके बोरगाँव नामक स्थानमे एक बार रेल लड़ गई थी। उस समय एक ब्राह्मण-बालिका विलक्षण धैर्यके साथ, विपद्ग्रस्तो और पीड़ितोंकी सहायता करती हुई देखी गई थी। समाचारपत्रोमे प्रायः इस प्रकारके समाचार निकला करते है कि अमुक स्त्रीने एक दुष्ट आक्रमण-कारीकी बड़ी वीरतासे हत्या की अथवा अमुक स्त्रीने डाकुओका इस प्रकार सामना किया अथवा इस प्रकार चोरोको पकड़ा। इसमे सन्देह नहीं कि, जब कोई भारी संकट अनिवार्य रूपसे आ पड़ता है, तब उसे सहन करनेकी अनिर्वचनीय शक्ति और धैर्य सभी लोगोमे होता है अथवा आपसे आप कहींसे आ जाता है। भावी संकट कभी उतना अधिक भयंकर नहीं हो सकता। हाँ, उस संकटके सम्बन्धमे पहलेसे होनेवाली चिन्ता अवश्य बहुत भयानक रूप धारण कर लेती है। लोग समझने लगते है कि जब यह संकट आ पड़ेगा, तब न जाने क्या होगा, कैसे होगा, आदि आदि। वास्तवमे यही अनिश्चय हृदयवेधक, स्वास्थ्यका नाश करनेवाला और दुःखदायी होता है। अर्थात् संकटका वास्तविक भय और दुःख स्वयं संकटमे नहीं होता, बल्कि उसके सम्बन्धमें होनेवाली कल्पना और उसके अनिश्चयमे ही होता है।

विकटसे विकट प्रसंगो और संकटोको भी सहन करानेवाली यह अज्ञात और अनिर्वचनीय शक्ति हमारे दैवी स्वरूपका ही एक लक्षण है, और वह मनोमय ही है।

आजकलकी सभ्यतामे चाहे और कितने ही अधिक गुण या दोष क्यो न हो, पर इसमे सन्देह नहीं कि मनुष्यके हृदयमेसे, अपनी उस नैसर्गिक शक्ति परसे श्रद्धा जल्दी जल्दी नष्ट होती जा रही है, जिसके

द्वारा वह रोगों या विपत्तियों आदिका धैर्यपूर्वक सामना करनेमें समर्थ होता है। आजकल बड़े बड़े शहरोमे रहनेवाले और ऊँचे दरजेके अमीर लोगोमे वीमार पड़ने अथवा वने रहनेका मानो फेशन सा चल पड़ा है। ऐसे लोग पहले तो यह अनुभव करने लगते है कि हमारी तवीयत कुछ ठीक नहीं मालूम होती। वे सन्देह करने लगते हैं कि कहीं हम वीमार तो नहीं है अथवा शीघ्र ही वीमार तो न पड़ जायँगे और यही सोचते सोचते तथा इसी प्रकार डरते डरते अन्तमे वे वीमार ही पड़ जाते है। बाजारोमें डाक्टरो, वैद्यो, हकीमो और दवा-फरोशोकी दूकानोकी तो कोई कमी है ही नहीं। जहाँ किसीको अपनी तवीयत खराव होनेका जरा भी सन्देह होता है, वहाँ चट किसी डाक्टरके पास जाकर एक डोज लेनेकी इच्छा और प्रवृत्ति वरावर दिनपर दिन वढती ही जा रही है और साथ ही साथ इसके लिए उपयुक्त सुभीते भी वढते जा रहे हैं। इसका परिणाम यह हो रहा है कि रोग-निवारणके कार्यमे हम लोग बराबर परावलम्वी होते जा रहे है। वस इसी लिए हमे पहलेसे ही ऐसे संयमसे रहनेकी आदत नहीं रहती कि रोग उत्पन्न ही न हो सके, अथवा उत्पन्न होता हो, तो बीचमे ही रुक जाय। और, जव उत्पन्न हो जाता है, तव उस रोगका सामना करने और उसे सहनेकी शक्ति हममे नहीं रह जाती। रोगको रोकने और उसे दूर करनेकी शक्तिका दिनपर दिन ह्रास होता जाता है।

इस समय भी बहुत से ऐसे वृद्ध मिलेंगे, जिन्हे यह बात स्मरण होगी कि किसी समय बहुत से गाँवोमे कोई एकाध गाँव ऐसा होता था, जिसमे कोई हकीम वैद्य या और कोई चिकित्सक रहता था। उन दिनो कुछ सक्रामक रोग आजकलकी अपेक्षा भले ही अधिक प्रमाणमे और ...सक रूपमे हुआ करते हो, परन्तु, और रोगोका लोगोपर बहुत

ही कम प्रमाणमे आक्रमण होता था, और उनकी चिकित्सा भी प्रायः बहुत कुछ सीधी सादी और नैसर्गिक हुआ करती थी।

आजकल भी वहुत सी ऐसी जातियाँ है, जो जंगली समझी जाती है। यदि, इन जातियोकी ओर ध्यान दिया जाय, तो उनमे भी यही बात देखनेमे आवेगी। ऐसी जातियोका आयुर्वेदिक अथवा चिकित्सा-शास्त्र-सम्बन्धी ज्ञान वहुत ही अल्प हुआ करता है। उन्नतिके शिखरपर पहुँची हुई, आजकलकी अनेक पाश्चात्य जातियोका चिकित्सा-शास्त्रसम्बन्धी ज्ञान यद्यपि बहुत अधिक वढ़ा चढा है, तथापि वह ज्ञान अपने अनुयायियोकी चिकित्सासम्बन्धी आवश्यकताओकी पूर्तिमे जितना अधिक समर्थ है, उतना ही अधिक जंगली लोगोका चिकित्साशास्त्रसम्बन्धी ज्ञान भी उनकी आवश्यकताओकी पूर्तिके लिए समर्थ है। यही नही वल्कि यदि ध्यानपूर्वक देखा जाय, तो उनका ज्ञान कुछ वातोमे अपेक्षाकृत और भी अधिक समर्थ तथा श्रेष्ठ सिद्ध होगा। जंगली लोगोको प्रायः साँप आदि जहरीले जानवर या इसी प्रकारके और दूसरे जंगली जानवर काटते है और उनके रोगोमेसे इसी प्रकारके रोग मुख्य है। परन्तु, ऐसे रोगोपर उनकी ओपधियाँ केवल शाब्दिक अतिशयोक्तिमे ही नही वल्कि गुणकी दृष्टिसे भी सचमुच रामवाण हुआ करती है। और प्रकारके रोग या तो उन्हें जल्दी होते ही नही और यदि होते भी है, तो उनका शमन वहुधा स्वयं प्रकृतिके ही द्वारा हो जाया करता है।

पशु पक्षियोंमे भी सवसे वड़ी चिकित्सा करनेवाली प्रकृति ही देखी जाती है।

डाक्टरो और वैद्यो आदिके पास वार वार दौड़कर जानेकी आदत हम लोगोमे आजकल बहुत तेजीके साथ वढ़ रही है। आजकलके युवकों और वालकोमे शारीरिक सामर्थ्यका जो शोचनीय अभाव देखा जाता है,

उसका यह एक मुख्य कारण है। जहाँ किसी वालककी तवीयत जरा भी खराब हुई कि प्रायः माताएँ और उनके साथ साथ वहुत से पुरुप भी दवाओंकी भरमार करना ही सवसे अधिक आवश्यक समझते है। वहुत से लोग तो ऐसे होते है जो केवल दूसरोकी देखा देखी ही अपने वालकोंके लिए भी किसी शानदार नाम और चमकीले भड़कीले लेवलवाली शीशी शुरू करना आवश्यक समझने लगते हैं। इसके लिए वे अपने वालकोमे ऐसे ऐसे रोगोका आरोप करने लगते है, जो उनमे विलकुल नहीं होते। कोई कहता है कि हमारा लड़का अन्न नहीं खाता, कोई कहता है उसे दूध हजम नही होता, कोई कहता है कि माताका दूध उसके लिए यथेष्ट नही होता, आदि आदि। इसी प्रकारके अनेक कारण वतलाए जाते है। वहुत सी स्त्रियाँ तो यहाँ तक समझने लगती है कि वच्चेको किसी प्रकारकी दवा न देनेसे हमारी योग्यतामे कमी समझी जायगी इन सब बातोका स्वाभाविक परिणाम यही होता है कि वालक अनेक प्रकारके रोगो, डाक्टरो और दवाओ आदिके वातावरणमे ही पलने लगता है। उसका रक्त मास औपधमय हो जाता है; जिसका दुष्परिणाम उसे आगे चलकर जन्म भर भोगना पड़ता है।

प्रकाश और अन्धकारका साहचर्य जितना अधिक अनुचित और अनिष्टकर ह, उसकी अपेक्षा कहीं अधिक, वालको और औपवोका साहचर्य अनुचित और अनिष्टकर है। आगे चलकर कभी न कभी एक ऐसा समय भी आवेगा, जब कि माता पिता अपने बालकोको विना किसी विशेष आवश्यकताके केवल झूठ मूठकी चिन्ताके कारण या दूसरोकी देखा देखी करनेकी घातक इच्छाके कारण समय कुसमय औषध देनेमें लज्जाका अनुभव करने लगेगे। जब बालकोका पालन ।, प्रेम, सत्य और शान्तिसे परिपूर्ण विचारोंके वातावरणमें होगे

और उन्हे सद्विचारों तथा आरोग्यवर्धक आचार व्यवहारोका महत्त्व अच्छी तरह समझा दिया जायगा, तब फिर उन्हे कदाचित् ही कभी डाक्टरो और औषधो आदिकी आवश्यकता पड़ेगी।

भला यह समझना कितनी छोटी बुद्धिका काम है कि ईश्वर अपनी सृष्टिके मनुष्योका आरोग्य, सुख और हित केवल वैद्योके सान्निध्य सरीखी क्षुद्र, परावलम्बी और केवल घुणाक्षर न्यायसे होनेवाली बातपर अवलम्बित रखता है!

हम लोग यह समझते है कि ईश्वरकी सारी सृष्टिमे मनुष्य ही सबसे श्रेष्ठ प्राणी है। ऐसी अवस्थामे यह समझना कैसी नासमझीका और अयुक्तियुक्त काम है कि ऐसे श्रेष्ठ प्राणीका आरोग्य, जीवन और सुख केवल यदृच्छावश किसी वनस्पति अथवा और द्रव्यके सेवनपर अवलम्बित है अथवा किसी ऐसे पदार्थपर अवलम्बित है जिसकी उत्पत्ति और अस्तित्व पूर्णतः पराधीन है और जिसके अनेक गूढ गुण धर्मोंका पूरा पूरा पता लगना प्रायः असम्भव है अथवा निष्ठुर दैव और मनमौजी यदृच्छा पर ही मनुष्यके जीवनका सर्वस्व अवलम्बित है।

ऐसी बातोके माननेकी अपेक्षा तो यह मानना कहीं अधिक युक्ति-युक्त और वास्तविक परिस्थितिके अनुरूप होगा कि मानव शरीरमे होने-वाले एक अथवा अनेक प्रकारके रोगोको दूर करनेका रामबाण उपाय उस विश्ववत्सल कृपासागर जगदीश्वरने स्वयं मनुष्यमे ही उसके मन और शरीरमे ही बीज रूपसे रख दिया है। नित्य असंख्य मनुष्य अनेक प्रकारके रोगोके कारण मरते है। भला ऐसे रोगोको दूर करने-वाली औषध वह ईश्वर स्वयं मनुष्यके शरीरमे न रखकर इस अमर्याद पृथ्वीके कोनो अंतरोंमे छिपाकर रक्खेगा? नहीं, कदापि नहीं। यदि वह

ऐसा करे तो मानो उसके दयामय वात्सल्य भाव और दूरदर्शितामें क
समझी जायगी। उस ईश्वरने अपनी वहुत वड़ी कृपालुताके कार
मनुष्यके वास्तविक सुखोंके स्वाभाविक साधन स्वयं उसके शरीरमे
गुप्त रूपसे रख दिए है और साथ ही उसे सदसद्विवेक भी दे दिया है
उसी सदसद्विवेकके द्वारा वह उक्त साधनोका ज्ञान प्राप्त कर सकता
और उनके अनुसार अपना आचरण रखकर सुखी और सामर्थ्यवान् भ
हो सकता है। इन सव वातोके लिए उसके वास्ते द्वार खुला हुआ है
परन्तु फिर भी वहुत से लोग ऐसे होते हैं जो अपने पास होनेवाले ऐ
साधनोंका ज्ञान प्राप्त करनेका प्रयत्न नहीं करते। और जिन लोगों
ऐसे साधनोका ज्ञान हो जाता है उनमेसे भी वहुतेरे ऐसे होते है ज
अविचारके कारण अथवा जान वूझकर उन साधनोका दुरुपयोग अथ
अतिक्रम करते है। मनुष्योंको जो अनेक प्रकारके शारीरिक और मान-
सिक आदि दुःख होते हैं अथवा जो उन्हे अनेक प्रकारकी व्याधिये
आदि होती है उन सवका मुख्य कारण यही है। इस सम्वन्धमे नीचे
लिखा हुआ श्लोक वहुत ही मार्मिक और सदा ध्यानमे रखनेके
योग्य है।

रोगशोकपरीतापवन्धनव्यसनानि च।
आत्मापराधवृक्षाणां फलान्येतानि देहिनाम्॥

प्रत्येक मनुष्यमे एक ऐसी अपूर्व और अद्भुत शक्ति रहती है ज
जरा मरण आदि सव प्रकारके विकारोसे रहित है और जो नितान्त
आरोग्यमयी है। यदि इस शक्तिका ठीक तरहसे विकास किया जाय,
तो यह शक्ति स्वयं ही सब प्रकारकी आध्यात्मिक, आधिदैविक और
आधिभौतिक व्याधियोको दूर करने अथवा उनका नाश करनेमे समर्थ
हो सकती है। यदि हम अपने इस उच्चतर स्वरूपको पहचान लें, तो

र यही संसारके सब प्रकारके घावोपर बहुत अच्छी तरह काम देने-
ली मरहम बन जायगा।

जब घरमे किसी प्रकारका उत्सव या विवाह आदि मंगल कार्य होता
तब यह प्रायः देखनेमे आता है कि घरमे काम करनेवाले प्रधान
ग बहुत अधिक काम करनेके कारण अथवा और किसी प्रकार जल्दी
मार नही पड़ते। वल्कि जो लोग कुछ बीमार होते है वे भी सहसा
राम हो जाते है और बहुत अच्छी तरह घरके सब काम करने लग
ते है। यहाँ तक कि रोगी पुरुप, अशक्त स्त्रियाँ और छोटे छोटे
लक बालिकाएँ भी ऐसे अवसरो पर वड़े उत्साहसे और बहुत सहजमे
से वड़े बड़े काम भी कर डालते है जो साधारण अवसरोपर उनकी
क्तिके बाहरके समझे जाते है।

जो लोग बहुत दिनोसे बीमार होनेके कारण बिस्तरपर पड़े रहते
और किसी प्रकारका काम धन्धा करनेमे असमर्थ समझे जाते
उनपर भी जब कोई ऐसा महत्त्वपूर्ण और उत्तरदायित्वका
ाम आ पड़ता है जिसका करना अनिवार्य होता है तो वे लोग भी
ायः नीरोग मनुष्योकी भाँति बहुत अच्छी तरह सब काम करते हुए
खे जाते है। जब कभी किसी घरका बड़ा मालिक, कमानेवाला या
धान व्यक्ति मर जाता है, सहसा किसी वड़ी सम्पत्ति या आय-मार्ग-
का नाश हो जाता है अथवा इसी प्रकारकी कोई और बहुत वड़ी आव-
श्यकता आ पड़ती है, तब अपने ऊपर सारा भार आता हुआ देखकर
बहुत दिनोके रोगी मनुष्य भी बिलकुल नीरोग मनुष्योकी भाँति उठकर
चलने फिरने और सब काम करने लग जाते है। उस समय उन्हे स्वयं
अपनी शारीरिक असमर्थताके सम्बन्धमे विचार करनेका अवसर तक

नही मिलता। उस समय मानो कोई ऐसा यन्त्र या मशीन चल पडत
है जो उनके निजी रोगोकी चिन्ता या चिकित्सा आदिके विचारको एक
दम वन्द कर देती है। उस दुर्वल तथा रोगी मनुष्यको अपनी दुर्वल
या रोग आदिका कुछ भी ध्यान नहीं रह जाता और वह संसारके रण
-क्षेत्रमें वहादुर जवानोकी तरह कूद पड़ता है।

प्रत्येक समाजमे वहुतसी ऐसी विधवाएँ तथा अन्यान्य स्त्रियाँ दे
जाती है जो अनेक प्रकारके परिश्रम करके और वहुतसी झझटें उठाव
स्वय भी जीवन निर्वाह करती हैं और अपने आश्रितोका भी भली भाँ
भरण पोपण करती है। ऐसी स्त्रियोको देखकर कभी कभी लोगोको वहु
आश्चर्य होता है। यदि उन्हे आवश्यकता इस प्रकार काम करनेप
विवश न करती तो बहुत सम्भव था कि वे वरसो पहले मर गई होतीं
जिस दुर्घटना या कुप्रसंगके कारण उन स्त्रियोको अनेक प्रकारका परिश्र
करना पड़ता है, यदि वह दुर्घटना न हुई होती या वह कुप्रसग न आय
होता तो शायद वे इस प्रकारका परिश्रम एक दिन भी न कर सकती
यदि वे अच्छी स्थितिमे होतीं तो उन्हे अनेक प्रकारके रोग आ घेर
और वे चुपचाप विस्तरपर पड़ी पड़ी कराहा करती। परन्तु चक्रवर्ति
आवश्यकता आकर उन्हे कहती है—"उठो और काम करो। न
तो तुम्हे और तुम्हारे आश्रित बालबच्चोको भूखो मरना पड़ेगा।" र
आवश्यकता, यह उत्तरदायित्व ही उनके सब प्रकारके रोगोका सबसे ब
और रामवाण औपध सिद्ध होता है।

सभी जगह ऐसे सैकडो हजारो आदमी दिखलाई देते है जिन्हें आ
श्यकता ही उठकर सब प्रकारके काम करनेके लिए विवश करती है। य
उन्हे आवश्यकता आकर न घेरती तो शायद वे दिन रात बिस्तर

ही पड़े रहा करते और कहा करते कि आज हमारी तवीयत ठीक नहीं है, आज हमारा जी अच्छा नहीं है। परन्तु भूखसे व्याकुल होनेवाला पेट, जाड़ेसे ठिठुरनेवाला शरीर और अनेक प्रकारके विपयोपभोगोकी ओर लगी हुई उनकी लालसा उन्हे एक दिनके लिए भी वीमारीका मजा लेनेकी फुरसत नहीं देती। अपने रोग और अपनी दुर्वलताका विचार उन्हें विवश होकर विलकुल छोड़ देना पड़ता है और अपने वाल बच्चोंके उदर-निर्वाह तथा भरण-पोपणकी चिन्ता करनी पड़ती है। उनका जी चाहे या न चाहे, उन्हे झख मारकर काम करना ही पड़ता है और काम करनेकी शक्ति भी उनमे न जाने कहाँसे आपसे आप चली ही आती है।

जिस समय मनुष्यके सामन जीवन-मरणका प्रश्न उपस्थित होता है, जिस समय वाह्य जगतसे सहायता मिलनेकी एक भी जगह वाकी नहीं रह जाती, जिस समय चारो ओर भीपण निराशा ही मुँह वाए हुए दिखलाई पड़ती है, उस समय इस सार्वभौम आवश्यकताके कठोर शासनमें मनुष्य क्या नहीं कर सकता? इस निष्ठुर, अनिवार्य और विकट आपत्तिके कठोर शासनमे संसारके वहुत से अद्भुत कार्य हुए है, और वरावर होते रहते हैं।

यही आवश्यकता, कोई आपत्ति आ पड़ने पर उत्पन्न होनेवाली आवश्यकता, मनुष्योसे वड़े वड़े अमानुपी कृत्य करा डालती है, और उन्हें ऐसी ऐसी कठिनाइयोंसे पार करती है जो साधारण अवस्थामे किसी प्रकार पार की ही नहीं जा सकतीं। मनुष्य कहलानेवाले प्रत्येक प्राणीमे एक ऐसी प्रवल शक्ति वास करती है जो उसे सदा उद्योगमे रत रखती है और सदा उन्नतिके पथपर अग्रसर करती रहती है। मनुष्यको

चाहे उसका ज्ञान हो और चाहे न हो, परन्तु यह हृदयस्थ स्वामिनी सद उसे अपने कर्तव्यका पालन करनेके लिए बाध्य करती रहती है।

यही आपत्ति हमारे काँपते हुए पैरोको जोर देती है, हमे निद्रासे जगाती है, हमारा आलस्य दूर करके हमे काम करनेके योग्य बनाती है, हमे दरिद्रता, कठिनाइयो और संकटोके सहन करनेमे समर्थ करती है; जिस समय चुपचाप आरामसे पड़े रहना चाहते हैं उस समय हमसे अविश्रान्त परिश्रम कराती है, और हमारी दुर्वलता तथा रोग आदिका नाश करके हममे अद्भुत सामर्थ्य उत्पन्न करती है।

२—आरोग्यका रहस्य

चित्ताक्रान्तं धातुबद्धं शरीरम्,
नष्टे चित्ते धातवो यान्ति नाशम्।
तस्माच्चित्तं सर्वदा रक्षणीयं,
स्वस्थे चित्ते बुद्धयः सम्भवन्ति ॥

क्या कभी किसीने इस प्रश्नपर भी विचार किया है कि हम वीमार यों पड़ते है ? क्या कभी किसीने यह सोचनेका भी प्रयत्न किया ! कि आरोग्य किसे कहते है और रोग किसे कहते है ? क्या कभी क़ेसीने यह जाननेका भी प्रयत्न किया है कि आदमी कभी रोगी और कभी नीरोग क्यो रहता है ?

यदि कभी कोई आदमी वीमार हो जाय और आप उससे पूछे कि तुम कैसे वीमार हुए, तो सम्भवतः वह उत्तर देगा कि मुझे सरदी लग गई थी, या मै पानीमे भीग गया था, या यो ही मुझे बुखार आ गया। यदि कोई अधिक भावुक या ईश्वरनिष्ठ व्यक्ति होगा, तो वह कह देगा कि ईश्वरकी मरजी; या संभव है कि वह कह दे कि हमारे भाग्यमे ही वीमार होना वदा था।

परन्तु इनमेसे एक भी वात ठीक नही है। यदि वास्तविक दृष्टिसे देखा जाय तो जान पड़ेगा कि रोग वास्तवमे एक प्रकारका दंड है। वड़ी शेखीसे यह कहना कि उस वार हम छः महीने तक वीमार थे, यह कहनेसे कम नही है कि अमुक अवसर पर हम छः महीने तक जेलमे थे। इसका कारण यह है कि जव कभी कोई आदमी वीमार पड़ता है तो

वह अपने किसी न किसी दोष या अपराधके कारण ही बीमार पडता है। और वह दोष या अपराध जितना ही बडा होता है उतने ही बड़े रोगके रूपमे उसका हृदयस्थ न्यायाधीश उसे दंड देता है। इस प्रकार रोगी होना भी मानो नैतिक कारावासका दंड भोगना है।

प्रत्येक व्यक्तिको यह बात बहुत अच्छी तरह समझ रखनी चाहिए कि वह अपने मनमे किसी रोगका जो कारण समझता है अथवा उसको वैद्य या डाक्टर जो जो बतलाता है वे सब कारण बिलकुल ग़लत हैं। उनमेसे एक भी कारण ठीक नहीं है।

ऐसी दशामें प्रश्न हो सकता है कि रोगका वास्तविक कारण क्या है। इसका उत्तर यह है कि रोगके वास्तविक कारण स्वय तुम ही हो। तुम्हे जितने रोग होते हैं उन सबके लिए स्वय तुम ही जिम्मेवार हो। किसी कविने बहुत ठीक कहा है—

सुखस्य दुःखस्य न कोपि दाता परो ददातीति कुबुद्धिरेषा।

अपनी अच्छी और बुरी सभी दशाओके लिए स्वयं तुम ही उत्तरदाता हो। तुम्हारी जो वासना विचारके रूपमे प्रकट होती है वह तुम्हारे मनकी शक्ति है, और उसीसे तुम्हारा जीवनक्रम बनता है। मन ही तुम्हारे जीवनक्रमका गर्भाशय है। किसी मनुष्यके जी[illegible] जितने प्रसंग होते हैं, उन सबकी सृष्टि और निर्माण उसी गर्भाशयमें होता है। मतलब यह कि तुम्हारी जितनी अच्छी और बुरी अवस्थाएँ है वे सब स्वयं तुम्हींसे उत्पन्न होती है। तुम्हारे सब प्रकारके विकार, विचार, आशा, आकांक्षा, सुख, दुःख, भय आदि उसी गर्भाशयमेंसे उत्पन्न होते है। वही उनका बीज बोया जाता है, और जब ठीक समय आता है तब वह अपने अंग निकालकर सर्वांगपूर्ण बन जाता है और

तब उसमेसे बालकोके रूपमे वे परिस्थितियाँ उत्पन्न होती है जो तुम्हारे जीवनक्रमपर सुखद या दुःखद आघात करती है।

हम जो कुछ विचार करते है उससे हमारे शरीरमे एक प्रकारका जल सींचा जाता है, जिससे हमारे शरीरमेकी पेशियोमे जीवन या चैतन्य उत्पन्न होता है। मनुष्यके शरीरमे इस प्रकारकी असख्य पेशियाँ होती है। इनमेसे प्रत्येक पेशी सजीव गुणधर्मयुक्त एक स्वतन्त्र वस्तु है, और किसी मनुष्यके जैसे विचार होते हैं, उन्हींके रूपो और गुणोके अनुसार उन पेशियोके भी रूप और गुण होते है।

ये पेशियाँ छोटे छोटे घटको या कोपोसे बनी हुई होती है। उनकी रचना बहुत छोटे छोटे परमाणुओसे होती है। उनमेसे प्रत्येक परमाणुमे जीवनतत्त्वका अश भरा हुआ होता है। ये परमाणु बराबर मलके रूपमे कुछ न कुछ द्रव्य वाहर फेका करते हैं, और अन्नके रूपमे कुछ और अधिक द्रव्य ग्रहण करते है। इसी क्रियासे उन परमाणुओका आकार बढ़ता है। उन परमाणुओंको रक्तसे परिपोपक द्रव्य मिलता रहता है। इन परमाणुओंका गुणधर्म दो बातोके योगसे निश्चित होता है। उनमेसे एक तो रक्तका रासायनिक स्वरूप है और दूसरा मनुष्यकी वासनाओका स्वरूप है। विचारो और विकारोकी जो निरन्तर गति होती रहती है, उससे नित्य असख्य परमाणुओका नाश होता रहता है। बल्कि यो कहना चाहिए कि हर दम बहुत से पुराने कोपो या शरीर-घटकोंका नाश होता रहता है और उनके स्थानपर नए कोष या शरीर-घटक बनते रहते है। पर जब मनुष्य किसी प्रकारका कोई अनुचित कार्य करता है, किसीपर क्रोध करता है, खान पान या विहार आदिका अतिरेक करता है अथवा उसके मनमे कोई तीव्र मनोविकार उत्पन्न होता है अथवा जब वह भाँग गाँजे शराब आदि मादक द्रव्यो या तम्बाकू आदि उत्तेजक

पदार्थोंका सेवन करता है तब इन कोषोका बहुत ही भयंकर प्रमाणमें नाश होने लगता है।

यद्यपि ये परमाणु बहुत ही सूक्ष्म होते है तथापि वे उस परम स्वरूपके प्रत्यक्ष अंश होते है जिसके सम्बन्धमे कहा गया है—

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः ।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः ॥

जिस प्रकार मनुष्यके वीर्यके सूक्ष्म बिन्दुमे मानव-शरीरके सभी अंग बीज रूपसे और अव्यक्त दशामे वर्तमान रहते है, उसी प्रकार इन सूक्ष्म शरीर-घटकोंमे वह पूर्ण वैभवसम्पन्न परम स्वरूप उपस्थित रहता है। हमे जितने चेतन पदार्थ दिखाई देते है वे सब इसी प्रकारके घटकोंसे बने हुए होते है। जीवके लिए ये घटक परम आवश्यक और उसके जीवनका मुख्य आधार होते है। उनमे लिंगभेद भी होता है—कुछ घटक स्त्रीलिंग होते है, कुछ पुल्लिंग, कुछ दोनो लिंगोसे युक्त होते हैं और कुछ नपुंसक। उन घटकोके बनने और नष्ट होनेकी क्रिया बराबर होती रहती है। नष्ट घटक किसी न किसी प्रकारसे मलके रूपमें बाहर निकलते रहते हैं और नए घटक अपना पोषक द्रव्य ग्रहण करके बराबर बढ़ते रहते हैं। ये घटक या परमाणु स्वयं ही अन्य घटको या परमाणुओकी सृष्टि करते रहते हैं। एक परमाणुसे दो, दोसे चार और चारसे आठ, इस प्रकार बराबर नए परमाणु उत्पन्न होते रहते हैं। वैज्ञानिकोने हिसाब लगाकर निश्चय किया है कि एक परमाणुसे चौबीस घंटेमे प्रायः १,७०,००,००० नए परमाणु उत्पन्न होते है। ज्यो ज्यो नए परमाणु बनते जाते है त्यो त्यों पुराने परमाणुओकी चेतना शक्ति होती जाती है। उन परमाणुओका चैतन्य रिक्त या मुक्त होने

लगता है। इसलिए उनमे किसी प्रकारसे नया चैतन्य प्रेरित करनेकी आवश्यकता हुआ करती है। प्रकृतिने हमारे शरीरमे इस बातकी बहुत अच्छी व्यवस्था कर रक्खी है। हमारे शरीरके जिस अंगमे पोषक द्रव्य खूब भरपूर होता है उस अंगके परमाणु मन्द, भारी और आलसी होते है। ऐसे परमाणु स्त्री जातिके होते है। परन्तु जो परमाणु ऐसी परिस्थितिमे नहीं होते और जिन्हे अपने लिए पोषक द्रव्य प्राप्त करनेमे अधिक प्रयत्न करना पड़ता है वे अधिक चपल होते है और सूक्ष्मसे सूक्ष्म संवेदन भी ग्रहण कर लेते हैं। ऐसे परमाणु नर जातिके होते है। जिन परमाणुओको सहजमे और अधिक पोपक द्रव्य मिलता रहता है वे मन्द और जड़ हो जाते है। ऐसे परमाणुओसे जो परमाणु उत्पन्न होते है, वे भी मन्द और जड़ ही रहते है। पर जिन परमाणुओको सहजमे यथेष्ट पोपक द्रव्य नहीं मिलता और सदा क्षुधित रहनेके कारण चंचल और गतिशील रहते है, उनसे उत्पन्न होनेवाले परमाणु भी उन्हींके समान चंचल और गतिशील होते है। परन्तु इन दोनो प्रकारके परमाणुओकी ये अवस्थाएँ बिलकुल नैसर्गिक हुआ करती है। उनमेसे एक तो अधिक श्रम करनेके कारण और दूसरे अधिक आलस्यके कारण शीघ्र ही नष्ट हो जाते है। परन्तु इस अनर्थका परिहार करनेके लिए प्रकृतिने एक और व्यवस्था कर रक्खी है। जिस समय भूखा परमाणु पोषक द्रव्यकी तलाशमे इधर उधर दौड़ता है, उस समय यदि कहीं रास्तेमे किसी स्त्री परमाणुसे उसकी भेट हो जाती है तो दोनोका संयोग हो जाता है। इस नए संयोगके कारण उस मन्द और जड़ परमाणुको एक नई चेतना शक्ति प्राप्त होती है और उधर उस भूखे परमाणुको दूसरे स्त्री परमाणुसे पोपक द्रव्य मिलता है। इस प्रकार उनके विनाशका भय जाता रहता है और दोनोको नवीन चेतना शक्ति प्राप्त

हो जाती है। इस प्रकार उनका नाश तो बन्द हो जाता है और नए नए परमाणुओकी उत्पत्ति होती रहती है।

जो बालक झोपड़ोमे जन्म लेते है उनकी अपेक्षा राजमहलोमें जन्म लेनेवाले बालकोकी अवस्था बहुत भिन्न और अनेक अशोमे अनुकूल हुआ करती है। झोपड़ोमें जन्म लेनेवाले गरीबोके बालकोको आरम्भसे ही अनेक प्रकारकी कठिनाइयोका सामना करना पड़ता है; परन्तु बड़े बंडे महलोमे और अमीरोके यहाँ जन्म लेनेवाले बालकोको आरम्भसे ही सब प्रकारके सुभीते रहा करते है। मानव-शरीरमे उत्पन्न होनेवाले इन परमाणुओकी भी ठीक वही दशा है। मनुष्य अपने मनोविकारो और मनोवृत्तियोके वातावरणमे इन परमाणुओकी वृद्धि करता रहता है। इस प्रकार वह इन परमाणुओको या तो झोपड़ोमे और या राजमहलोमे जन्म देता है। मानव शरीरके आधार, ये परमाणु रक्तसे अपना पोपक द्रव्य प्राप्त करते हैं और प्रत्येक मनोविकार या विचारसे रक्तका रासायनिक गुण धर्म और परिणाम बदलता रहता है। परमाणुओका पोषण उसी रक्तके द्वारा होता है, इसलिए वे परमाणु भी ऐसे रक्तका गुण और धर्म ग्रहण करते हैं। उस समय वे उन्ही मनोविकारोके दास बन जाते है जिनका हमारे हृदयमे राज्य होता है। इसलिए जब मनुष्य बहुत अधिक क्रोध करता है तब उसके शरीरमे असंख्य नवीन परमाणु उत्पन्न हो जाते है जो उसके रक्तके साथ सारे शरीरमे घूमने लगते है। उन परमाणुओके उत्पन्न होनेके समय मनुष्यके हृदयमे जो मनोवृत्ति प्रबल होती है वह शरीरमें बहुत कुछ स्थायी हो जाती है और बहुत समय तक बनी रहती है। यही मानो दरिद्रकी झोपड़ीमे उत्पन्न हुए रोगी और निर्जीव परमाणु होते है। इसी लिए जिन लोगोके हृदयमे बराबर क्रोध ...े विकार उत्पन्न हुआ करते हैं, उनके शरीरमे हर दम इसी तरहके

असंख्य परमाणु बनते रहते है और इसका परिणाम यह होता है कि शरीरमे रोगी, निर्बल, विकृत और अशुद्ध परमाणुओका शैतानी साम्राज्य स्थापित हो जाता है। दुष्ट मनोविकारोसे दुष्ट परमाणुओकी उत्पत्ति होती है। इन मनोविकारोको हम उन परमाणुओका जनक और भीति तथा असमानता आदिको उनकी माता कह सकते है। इन सब दुष्ट परमाणुओसे फिर आगे भी इसी प्रकारके दुष्ट परमाणुओकी सृष्टि होती है और ऐसे परमाणुओकी सृष्टिका सहज तथा स्वाभाविक परिणाम यह होता है कि मनुष्यका शरीर दुर्बल, अस्वस्थ, रोगी और दीन हो जाता है, उसकी वृद्धावस्था तथा मृत्यु बहुत समीप आती जाती है और अन्तमे इन परमाणुओकी यहाँ तक प्रबलता हो जाती है कि वह मनुष्यके दैवी अंशको बिलकुल दबा लेती है।

ये दुष्ट परमाणु सन्तोष, आरोग्य और प्रेम आदि अधिकारियोको पदच्युत करके दुःख, रोग और मृत्यु आदिको उनके स्थानपर आरूढ करा देते है। इस प्रकार इन अतिशय सताए हुए दीनोंकी सहायताके लिए अन्तमें स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण आते हैं और इस कारागारसे छूटनेका सामर्थ्य, समृद्धि और शान्तिका राजमार्ग दिखलाते है। कहा है—

मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः।

अर्थात् भगवान् श्रीकृष्ण इस बन्धनसे मुक्त होनेका यही उपाय बतलाते है कि तुम अपना मन शुद्ध करो और ये व्यर्थके झगड़े दूर करो।

भगवान् श्रीकृष्णकी भाँति ईसा मसीहने भी इस बन्धनसे मुक्त होनेका यही मूल मन्त्र बतलाया है। उन्होंने कहा है—

As a man thinketh in his heart, so is he.

अर्थात् अपने हृदयमे जो जैसे विचार रखता है वह वैसा ही होता है।

इन सब बातोसे यही अभिप्राय निकलता है कि यदि मनुष्यको सबसे

वढ़कर किसी चीजकी चिन्ता रखनेकी आवश्यकता है तो वह अपने मनकी। यदि तुम अपने मनपर पूरा पूरा अधिकार रक्खोगे और उसमे किसी प्रकारके दुष्ट मनोविकार या दोष आदि उत्पन्न होने न दोगे तो फिर तुम अपने भाग्यके स्वय ही विधाता वन जाओगे। ईश्वरने कभी दुर्भाग्य और विपत्ति आदिकी गठरी वॉधकर तुम्हारे सिरपर नही लादी है। तुम खिलाड़ी लड़केकी भॉति विद्यालयका मार्ग छोड़कर व्यर्थ इधर उधर भटक रहे हो और जो कुछ बुरी वाते तुमको सामने दिखाई देती हैं, उन्हे अपने शरीरमे भरते जा रहे हो। परिणाम यह होता है कि उनके असह्य भारसे तुम्हारा सिर और कमर झुक जाती है। तुम उससे बचना चाहते हो, परन्तु बच नहीं सकते और इसी लिए तुम दूसरोको, ईश्वरको और भाग्यको दोषी ठहराते हो।

यह वात अच्छी तरह मनमे समझ रक्खो कि स्वयं तुम्हीं अपने सबसे बड़े राजाधिराज हो और शरीरका संगठन करनेवाले, ये असख्य परमाणु, तुम्हारी प्रजा है। यदि तुम अपने राज्यका कार्य मूर्खतासे चलाओगे, तो फिर वह प्रजा तुम्हारी आज्ञा नही मानेगी, उसमे विद्रोहका भाव उत्पन्न हो जायगा और अन्तमे वह तुम्हारे विरुद्ध उठ खड़ी होगी। उसके इस प्रकार विद्रोह करनेका परिणाम यह होगा कि तुम पदच्युत हो जाओगे और तुम्हारे शरीर त्याग करनेकी बारी आ जायगी। यदि तुम यह चाहते हो कि तुम्हारे पदच्युत होनेका अनिष्ट प्रसंग न आवे और तुम्हारा सार्वभौम पद अटल रहे, तो इसका मुख्य उपाय यही है कि ऊपर जो वाते वतलाई गई है, 'उन्हे तुम भली भॉति हृदयगम कर लो। पर उन बातोको केवल हृदयगम करनेसे ही काम न चलेगा, बल्कि अपने सब व्यवहारोमे भी तुम्हे उनका पूरा पूरा आचरण करना पड़ेगा और जव तुम वरावर उनका आचरण करते रहोगे तो कुछ समयमे वे बातें तुम्हारे

स्वभावका ही एक अंग हो जायँगी। परन्तु इसके लिए तुम्हे वहुत ही सचेष्ट और सतर्क होकर और अश्रान्त दक्षतापूर्वक प्रयत्न करना पड़ेगा; उनका निरन्तर अभ्यास, चिन्तन और व्यवहार करके अनेक वार उनकी पुनरावृत्ति करनी पड़ेगी। मनोनिग्रह करना वहुत ही कठिन और कष्ट-साध्य होता है। इसीसे आध्यात्मिक उन्नति होती है। परन्तु इसक लिए वहुत वड़े अभ्यासकी आवश्यकता है। अभ्यास ही एक ऐसी चीज है जिसके द्वारा मनुष्य कठिनसे कठिन और विलकुल असम्भव जान पड़नेवाले काम भी अन्तमे कर ही डालता है। किसीने कहा है:—

करत करत अभ्यासके, जड़मति होत सुजान।
रसरी आवत जातते, सिलपर परत निसान॥

३—दरिद्रता

जीवन्तोऽपि मृताः पंच व्यासेन परिकीर्तिताः ।
दरिद्रो व्याधितो मूर्खः प्रवासी नित्यसेवकः ॥

—सुभाषित ।

दारिद्र्यान्मरणाद्वा मरणं मे रोचते न दारिद्र्यम् ।
अल्पक्लेशं मरणं दारिद्र्यमनन्तकं दुःखम् ॥

—मृच्छकटिक ।

दरिद्रता कोई नैसर्गिक या स्वाभाविक चीज नहीं है । वह मनुष्यकी स्वाभाविक वृत्तिके कभी अनुकूल नहीं है । वह मनुष्यके दैवी अंशके विकासमे प्रतिबंध डालनेवाली है । परमात्माने कभी ऐसी योजना नही की है कि मनुष्य सदा दासतामे हताश और दरिद्र रहे । उसे सदा पेट भरनेकी चिन्तामें ही पड़े रहनेकी आवश्यकता नही है, बल्कि उसके लिए इसकी अपेक्षा कहीं अधिक उच्च और महत्त्वके बहुत से काम पड़े हुए है ।

जो मनुष्य चारो ओरसे दरिद्रतासे जकड़ा हुआ हो, वह कभी कोई अच्छेसे अच्छा काम करके नही दिखला सकता, वह अपने सर्वोत्कृष्ट गुणोका कभी पूरा पूरा विकास नही कर सकता । यदि वह चारो ओ-रसे इसी प्रकारकी चिन्ताओ और कष्टोसे घिरा रहे, तो वह कभी अच्छे अच्छे काम करनेका अवसर ही नही पा सकता ।

जिसे दिनरात इस बातकी चिन्ता लगी रहेगी कि मै किस प्रकार अपना पेट भरूँ, वह कभी स्वतन्त्र नही हो सकता । वह कभी अपना जीवन सुव्यवस्थित और सुसंगत नही रख सकता । प्रायः

ऐसे अवसर भी आते है कि वह निर्भीकतापूर्वक अपने स्वतन्त्र विचार प्रकट नहीं कर सकता। यदि वह किसी अच्छे और स्वच्छ स्थानमे रहना चाहता हो तो नही रह सकता। मतलब यह कि दरिद्रता मनुष्यको बहुत ही छोटा और तुच्छ बना देती है और उसकी सब प्रकारकी आकांक्षाओ और कामनाओका नाश कर देती है। दरिद्रावस्थामें न तो कोई आनन्द रह जाता है, न कोई आशा रह जाती है और न उन्नति करनेका कोई अवसर ही रह जाता है। इससे मनुष्यमें अनेक प्रकारकी बुराइयाँ और दोप उत्पन्न हो जाते हैं, यहाँ तक कि जिन लोगोको सदा आपसमे बहुत ही प्रसन्नतापूर्वक हिलमिलकर जीवन निर्वाह करना चाहिए उन लोगोके पारस्परिक प्रेमका नाश इसी दरिद्रताके कारण हो जाता है।

यदि मनुष्य घोर दरिद्रावस्थामे हो तो उसका वास्तविक अर्थमे मनुष्य बनना भी बहुत कठिन हो जाता है। जिस समय मनुष्य चारो ओर तकाजे करनेवाले साहूकारोसे घिरा हुआ हो, पैसे पैसेसे मोहताज हो और उसके बाल-बच्चे भूखो मर रहे हो, उस समय उसके लिए मान मर्यादाका निर्वाह करना प्रायः असम्भव हो जाता है जिसके द्वारा वह ससारमें सब लोगोंके सामने निर्भीकता और स्वतन्त्रतापूर्वक सिर उठाकर देख सकता है। इसमे कोई सन्देह नहीं कि कुछ थोड़ेसे ऐसे महानुभाव और महात्मा भी हो गए है जिन्होने घोर दरिद्रावस्थामे भी रहकर ऐसे सुन्दर उदाहरण उपस्थित किए है जिन्हे ससार कभी भूल नहीं सकता; परन्तु फिर भी हमे यह देखना चाहिए कि इस दरिद्रताके कारण कितने अच्छे अच्छे जीवन किस बुरी तरहसे नष्ट हुए है।

हमे इस दरिद्रताके कष्टदायक परिणाम सदा अपने चारो ओर दिखाई देते है; धनके अभावके कारण हम बहुत से लोगोको बहुत ही

दुर्दशाकी अवस्थामे पाते है। जो लोग दरिद्रावस्थामे उत्पन्न होते और बढ़ते हैं वे न तो बलवान् हो सकते है और न प्रसन्न रह सकते है। वे समय आनेसे बहुत पहले ही बूढे हो जाते है और सदा चिन्तित तथा उदास रहते है। इस दरिद्रताके कारण अनेक अच्छी अच्छी आकांक्षाओंका बहुत ही बुरी तरहसे नाश हो जाता है और बहुत से लोगोकी परम उपयोगी तथा उत्कट योग्यता मिट्टीमे मिल जाती है।

संसारमे कुछ ऐसे लोग भी मिलेगे जो दरिद्रताकी स्तुति करते हुए दिखाई देगे; परन्तु उनमेसे अधिकाश ऐसे ही लोग होगे जो स्वयं उस दरिद्रतासे बचे हुए होगे। वे जब खूब अच्छी तरहसे खा पीकर खड़े होगे, तब पेटपर हाथ फेरते हुए कहेंगे—भाई आजकल समय बड़ा कठिन होता जा रहा है। न जाने गरीब लोग किस प्रकार निर्वाह करते होगे। लेकिन नही, फिर भी हम लोगोसे गरीब ही अच्छे है। उन लोगोको किसी प्रकारका झगड़ा बखेड़ा नहीं होता; न किसी प्रकारकी चिन्ता होती है। हम लोगोको तो दिन रात अनेक प्रकारकी चिन्ताएँ लगी रहती है और अपनी प्रतिष्ठाका निर्वाह करना कठिन हो जाता है। परन्तु यदि ऐसे आदमियोसे कोई कहे कि आप भी अपना सारा वैभव परित्याग करके गरीबोकी अवस्थामें आ जाइए, तो वे कभी इसके लिए तैयार न होगे। उनका यह कथन उतना ही तिरस्करणीय और निन्दनीय है जितना कि तोपोकी मारसे बहुत दूर खड़े होकर अपना बचाव करते हुए युद्धका दृश्य देखना और गोलो गोलियोसे घायल होनेवाले सैनिकोके साहस और वीरताकी प्रशंसा करना।

हम तो चाहते है कि प्रत्येक युवकको यह बात बहुत अच्छी तरह समझा दे कि संसारमे दरिद्रतासे बढ़कर भीषण कष्टदायक और सदा

बचने योग्य कोई दूसरी चीज़ है ही नहीं । वह लज्जा, शान्ति, शील, संकोच और मर्यादा आदि सबका नाश करनेवाली है । कहा है—

> निर्द्रव्यं पुरुपं सदैव विकलं सर्वत्र मन्दादरम्,
> तातभ्रातसुहृज्जनादिरपि तं दृष्ट्वा न सम्भापिते ।
> भार्या रूपवती कुरंगनयना स्नेहेन नालिङ्गते,
> तस्माद्द्रव्यमुपार्जयाशु सुमते द्रव्येण सर्वे वशाः ॥

जिस दरिद्रताका किसी प्रकार निवारण न किया जा सके, उसमे तो कोई अप्रतिष्ठाकी बात है ही नही । जो लोग शारीरिक अस्वस्थता अथवा और किसी प्रकारसे दुर्भाग्यके कारण दरिद्र होते है, उनका समाज आदर करता है और उनपर दया दिखलाता है । वास्तविक अप्रतिष्ठाकी बात तो तब है जब कि हम लोगोको इस प्रकारकी दीन हीन अवस्थामे देखे और उनकी दीनता तथा दरिद्रता दूर करनेका कोई प्रयास न करे । हम जिस दरिद्रताको निन्दनीय बतलाते है, वह ऐसी दरिद्रता है जिसका किसी न किसी प्रकार निवारण किया जा सकता है । ऐसी दरिद्रता प्रायः अनाचारपूर्ण जीवन व्यतीत करने, निठल्ले बैठे रहने या ठीक ढंगसे काम न करने आदिके कारण होती है । ऐसी दरिद्रता या तो उद्यमके अभावमे होती है और या ठीक तर-हसे विचार और कार्य न करनेके कारण होती है । यही वह दरिद्रता है जिसका सहजमे निवारण हो सकता है और इसी प्रकारकी दरिद्र-ताके कारण लोग समाजमे घृणित तथा तुच्छ बने रहते है और स्वय भी अनेक प्रकारके कष्ट भोगते है । इस प्रकारकी दरिद्रतामे होनेके कारण प्रत्येक स्त्री और पुरुषको लज्जित होना चाहिए, क्योकि उस दरिद्रताका निवारण करना उनके हाथमे है । यदि वह सामर्थ्य रहते भी उस दरि-द्रताका निवारण नहीं करता तो मानो अपनी अयोग्यता और अकर्म-

ग्यता सिद्ध करता है। ऐसे लोगोकी ओर समाज तो ध्यान देता ही नहीं वल्कि उन्हे स्वयं भी अपनी दशापर ध्यान देनेका वहुत कम अवसर मिलता है।

भारतवर्षमें जिधर देखिए उधर भीषण दरिद्रताका दृश्य दिखाई देता है। यहॉके अधिकाश निवासियोकी आकृतिसे उनकी घोर दरिद्रताका पता चल जाता है। यहॉके युवक युवावस्थामे ही वृद्ध से जान पड़ने लगते है और असमयमे ही मर जाते है। वे शारीरिक दृष्टिसे तो निर्वल होते ही है; पर साथ ही उनमे नैतिक वलका भी नितान्त अभाव रहता है। इन सव बातोका मुख्य कारण यही है कि वे जन्मसे ही वहुत दरिद्र होते है। न तो उन्हे वाल्यावस्थामे ही कोई सुख मिलता है और न युवावस्थामे ही। वहुत ही छोटी अवस्थासे उन्हे कोल्हूके वैलकी तरह दिनरात कठिन परिश्रम करना पड़ता है। यदि वे इस प्रकार परिश्रम न करे तो उन्हे रातको आधे पेट रोटी भी न मिले। वे वेचारे न तो कुछ सीख सकते है और न समझ सकते है। इस प्रकार दरिद्रताके कारण उनका सारा जीवन ही नष्ट हो जाता है। उच्च और उदात्त आकाक्षाओ तथा उत्कृष्ट योग्यताओकी कली खिलनेसे पहले ही कुम्हला जाती है। भारतवासियोकी इस दरिद्रताके अनेक कारण है। उनमेसे कुछ कारण निवार्य है और कुछ देशकी वर्तमान अवस्थाके कारण अनिवार्य भी हैं। जो कारण अनिवार्य हैं उनके सम्बन्धमे तो यहॉ हमें कुछ कहना ही नहीं है। पर जो कारण निवार्य है और सहजमें दूर किए जा सकते है, उन कारणोका वर्तमान रहना और दूर न किया जाना स्वयं उन दरिद्रोके लिए भी और समाजके धनिक लोगोके लिए भी बहुत वड़ी लज्जाकी बात है। बहुत से लोग कुछ काम करना तो ाहते हैं, पर दरिद्रताके कारण न तो किसी कामकी शिक्षा प्राप्त कर

सकते है और न कोई काम आरम्भ ही कर सकते हैं। इस प्रकार वे लोग देशकी दरिद्रताको और भी बढ़ानेके कारण होते है। ऐसे लोगोको अनेक प्रकारके कार्योंकी शिक्षा देना और उन्हे कुछ काम करनेके योग्य बनाना इस देशके प्रत्येक धनी, समर्थ, शिक्षित, और योग्य व्यक्तिका मुख्य कर्तव्य होना चाहिए। और यदि वे लोग इस बातका कोई उद्योग नहीं करते है तो यह उनके लिए सबसे बड़ी लज्जाकी बात है।

दरिद्रोके लिए सबसे बड़ी कठिनता यह होती है कि वे सहजमे इस बातपर विश्वास ही नहीं कर सकते कि हमारी यह दरिद्रता किसी प्रकार दूर हो सकती है। विशेषतः भारतवासी तो और भी अधिक भाग्यवादी है। वे सोचते है कि जो कुछ भाग्यमे बदा होता है वही होता है। यदि हमारे भाग्यमे धनवान् होना बदा होता तो हम पहले ही किसी धनवानके घरमे जन्म लेते, एक दरिद्रके घरमे जन्म ही क्यो लेते? इसके अतिरिक्त वे अपने चारो ओर यह भी देखते हैं कि बस लक्ष्मीका ही साम्राज्य है और बिना धनके संसारका कोई काम होता ही नहीं। लोगोमे यह भी एक कहावत प्रचलित है कि "धनको धन खींचता है" वे कहते हैं—"मायाको माया मिले दोनो हाथ पसार।" इसी लिए वे स्वयं किसी प्रकारका कार्य आरम्भ करनेका विचार भी नहीं कर सकते। अपने चारो ओरकी परिस्थितियोको देखते हुए वे और भी उत्साहहीन हो जाते हैं और समझ लेते है कि इन परिस्थितियोमे हमारे किए कोई काम हो ही नहीं सकता। इस प्रकार स्वयं अपनी शक्ति तथा योग्यता परसे उनका विश्वास उठ जाता है और अपने आप-परसे यह विश्वास उठ जाना ही मनुष्यके लिए बहुत नाशक होता है।

आजकल पाश्चात्य सभ्यताकी कृपासे संसारमे चारो ओर ऐहिक सुख और ऐहिक लाभके लिए ही सबसे अधिक प्रयत्न किया जाता है और

लोग संसारमे धनको ही सबसे बढ़कर समझते है । इस समय संसारकी परिस्थिति भी ऐसी ही हो गई है कि विना धनके कोई काम चल ही नहीं सकता । इसी लिए पाश्चात्य देशोंके लोग दरिद्रताको एक ऐसी दृष्टिसे देखते है जिस दृष्टिसे हमारे देशके प्राचीन विद्वानो और आचार्यों आदिने नहीं देखा था । आजकल पाश्चात्य देशोके लोग संसारकी वदली हुई परिस्थितिके कारण ही दरिद्रताकी वहुत अधिक निन्दा करते है । वल्कि आजकलकी सभ्यता तो मानो यह कहती हुई जान पड़ती है कि इस संसारमे दीनो और दरिद्रोके लिए कोई स्थान ही नहीं है। जो लोग इस संसारमे रहना चाहते हो उन्हे धन उपार्जन करना चाहिए । यदि वे धनका संग्रह नहीं करने है तो उन्हे नष्ट हो जानेके लिए तैयार रहना चाहिए। परन्तु जैसा कि किसीने कहा है—"प्रत्येक बुरी वातमे भी कुछ न कुछ गुण, कुछ न कुछ भलाई, हुआ करती है।" इसी लिए दरिद्रतासे भी कुछ न कुछ अच्छी वात निकाली जा सकती है। दरिद्रावस्थामे मनुष्यके साहस, सहनशीलता और अध्यवसाय आदिका अच्छा विकास हो सकता है। इसके अतिरिक्त जो व्यक्ति कुछ समय तक दरिद्रावस्थामे रह चुकता है उसमें जन्मसे अमीर रहनेवालोकी अपेक्षा परोपकार, दया, सहानुभूति आदिका भाव अपेक्षाकृत कहीं अधिक होता है । किसीने कहा है,—

> शक्तिं करोति सञ्चारे शीतोष्णे मर्षयत्यपि ।
> दीपयत्युदरे वह्निं दारिद्र्यं परमौषधम् ॥
> ऐश्वर्यतिमिरं चक्षुः पश्यन्नपि न पश्यति ।
> तस्य निर्मलतायां तु दारिद्र्यं परमौषधम् ॥

लेकिन ये सब वातें मानते हुए भी अन्तमें यही कहना होगा कि दरिद्रतासे जहाँ तक हो सके मनुष्यको बहुत बचना चाहिए । और ...तः उसे स्वयं तो ऐसे काम नहीं करने चाहिए जिनके कारण वह

अच्छी आय होते हुए भी दरिद्र वना रहे। यही दरिद्रता सवसे अधिक भयानक और सवसे अधिक कष्टदायक होती है। यही मनुष्यको कायर वनाती है, यही उसके आत्मविश्वास और आत्मगौरवका नाश करती है और यही उसे सदा घोर विपत्तियोमे डाले रहती है। अतः ऐसे लोगोका तो यह मुख्य कर्तव्य है ही कि वे अपनी आर्थिक स्थिति सदा ठीक रक्खें; परन्तु जो लोग जन्मसे ही विलकुल दरिद्र हो और जिनके खाने तकका भी ठिकाना न हो, उन लोगोको भी कमसे कम कभी हताश और निराश न होना चाहिए। क्योकि संसारमे ऐसे भी हजारो लाखो आदमी हो गये है जिनका जन्म तो घोर दरिद्रतामे हुआ था परन्तु जो अपने परिश्रम, अध्यवसाय और वुद्धिमत्तासे वहुत धनी हो गये है। ऐसे लो-गोकी अवस्थासे गरीवोको अच्छी शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए और पूर्ण उत्साह तथा मनोयोगपूर्वक वर्तमान विकट परिस्थितिसे निकलकर अपनी अवस्था सुधारनेका प्रयत्न करना चाहिए।

जव मनुष्यमे अपनी योग्यता और शक्तिपर विश्वास नही रह जाता, तव धीरे धीरे उसमें उन गुणोका भी ह्रास होने लगता है जिनके कारण वह सफलमनोरथ हो सकता है अथवा उन्नति कर सकता है और ऐसी अवस्थामे उसका जीवन दूभर हो जाता है। तव न तो उसमे किसी प्रकारकी उच्चाकांक्षा रह जाती है, न कार्य करनेकी शक्ति रह जाती है, न अपने सम्बन्धमे विशेप चिन्ता रह जाती है, न काम करनेका ढग रह जाता है और न कोई दूसरी ऐसी वात रह जाती है जिससे सफल होनेमे सहायता मिलती है। परिणाम यह होता है कि वह एक ऐसे ढालुए स्थान पर पहुँच जाता है जहाँसे वह वरावर नीचे ही गिरता जाता है और उठकर ऊपर नहीं जा सकता। अतः दरिद्रोके लिए सवसे अधिक आवश्यक वात यही है कि वे अपने आपको उस

ढालुए स्थानपर पहुँचनेसे बचावे और अपनी मानसिक अवस्था ऐसी न बना ले जिसमे फिर किसी प्रकारकी उन्नति करनेकी स्वप्नमे भी आशा नही रह जाती ।

स्वयं दरिद्रता उतनी भयानक और नाशक नहीं है जितना भयंकर और नाशक दरिद्रताका विचार है । यह समझना कि हम दरिद्र है और सदा दरिद्र ही बने रहेगे, मनका यही भाव सबसे अधिक नाशक होता है । ऐसे भावका परिणाम यही होता है कि मनुष्य सदा दरिद्रताकी ओर इतनी दीनताके साथ बढ़ता जाता है कि उसे उसकी ओरसे पराङ्मुख होकर उससे पीछा छुड़ानेका साहस ही नहीं होता । यही बिलकुल उलटी दिशाकी ओर बढ़ना है । इससे न तो मनुष्यमे किसी प्रकारकी आकांक्षा रह जाती है और न कार्य करनेकी कोई शक्ति । आदमी जब तक अपने मनमे इस प्रकारके भाव रखता है और जब तक वह दरिद्रताके वातावरणसे घिरा रहता है, तब तक उसका कार्यक्षेत्र बहुत ही परिमित रहता है और वह उस संकुचित सीमाके बाहर निकल ही नहीं सकता ।

जब तक कोई आदमी अपने आपको दीन हीन भिखारी समझता रहता है और अपनी उसी दीन हीन अवस्थाके विचारोंमे मग्न रहता है, तब तक वह सिवाय भिखारी होनेके और कुछ हो ही नहीं सकता । जब तक वह विफलताका ही विचार और भाव अपने मनमे रखता है, तब तक वह कभी सफल हो ही नहीं सकता । यदि हम दरिद्रताके भयसे सदा भयभीत रहेगे, सदा इस बातकी शंका किया करेगे कि वृद्धावस्थामे हमें भूखो मरना पड़ेगा तो हमारे दरिद्र बने रहने और वृद्धावस्थामें भूखो मरनेकी सम्भावना बनी ही रहेगी । क्योकि यह भय

और आशंका सदा हमारे साहसका नाश किया करेगी, सदा हमारे आत्मविश्वास और आत्मगौरवपर आघात किया करेगी और हमें कठिनाइयोका वीरतापूर्वक सामना करनेमें उत्तरोत्तर असमर्थ करती रहेगी।

चुम्बक सदा बिलकुल ठीक अवस्थामे रहना चाहिए और उसके ठीक होनेका यही प्रमाण है कि वह अपने जैसी चीजोको बराबर अपनी ओर खींचा करे। मनुष्यके शरीरमें केवल एक ही ऐसा उपकरण है जो संसारकी सब चीजोंको अपनी ओर बराबर खींचा करता है और वह उपकरण मन है। परन्तु मन सदा वैसा ही बना रहता है जैसे कि विचार हुआ करते हैं। यदि हम सदा भयभीत रहेंगे और मनमे दरिद्रताका ही भाव बनाए रक्खेंगे तो फिर हम चाहे कितना ही अधिक परिश्रम क्यो न करें, न तो हम कभी साहसी हो सकेंगे और न कभी धनवान् बन सकेंगे। दरिद्रताका विचार सदा दरिद्रताको ही अपनी ओर आकर्षित करता रहेगा।

हम जिस ओर अपना मुँह रक्खेगे उसी ओर अग्रसर होंगे। यह कभी सम्भव नहीं है कि हम मुँह तो रक्खे पश्चिमकी ओर और चले पूर्वकी ओर। ठीक इसी प्रकार यदि हम अपना मुँह दरिद्रताकी ओर रक्खेंगे तो हम कभी धनवान् न हो सकेंगे। जब कि हमारा हर एक कदम उसी सड़कपर पड़ेगा जो हमे विफलताकी ओर ले जाती है, तो हमे कभी सफलता-मन्दिर तक पहुँचनेकी आशा न करनी चाहिए।

यदि हम अपने मनमे बसनेवाली दरिद्रतापर विजय प्राप्त कर ले, तो फिर हमे बाह्य दरिद्रतापर विजय प्राप्त करनेमे कुछ भी देर न लगेगी। क्योंकि ज्यों ही हम अपना मानसिक भाव बदल लेंगे त्यो ही

हमारी शारीरिक शक्तियोमे भी उसीके अनुसार परिवर्तन हो जायगा । दरिद्रताके विचार हमे सदा दरिद्रतासे ही सम्बद्ध रखते है और हमारे लिए दरिद्रतापूर्ण परिस्थितियाँ ही उत्पन्न करते है । क्योकि जब हम दिन रात दरिद्रताका ही विचार करते है, दिन रात उसीके सम्बन्धमे बात चीत करते हैं और दिन रात उसीमे जीवन व्यतीत करते है, तब हम मानसिक दृष्टिसे भी बिलकुल दरिद्र हो जाते है और यही सबसे अधिक निकृष्ट दरिद्रता है ।

यदि हम धनवान् होना चाहते हों तो हमे अपने विचारोको भी सम्पन्नताकी ओर ही प्रवृत्त करना चाहिए । पर जब हमारी दृष्टि दरिद्रतापर हीं गड़ी होगी तब हम सम्पन्नता तक कैसे पहुँच सकते है । आजकल ऐसे बहुत से पढ़े लिखे और सशक्त आदमी दिखलाई पड़ते हैं, जो यदि अपने विचारोको ठीक रक्खे और अपनी शक्तियोका ठीक ठीक उपयोग करे, तो ससारमे बहुत कुछ काम कर सकते है । और यदि कोई बहुत बड़ा काम न करें तो भी कमसे कम अच्छी तरह अपनी जीविकाका प्रबन्ध कर सकते है । परन्तु उनमे अपनी दरिद्रता, हीनता और असमर्थता आदिका भाव इतना कूट कूटकर भरा होता है कि वे भूखो मरते हैं और दर दर मारे मारे फिरते हैं । दस महीने दस रुपए महीनेकी नौकरी ढूँढ़ते है, पर नौकरी कहीं पेड़ोमे फलती तो है ही नहीं, जो हर एक आदमीको सहजमे मिल जाया करे । ऐसे लोगोके हृदयमे न तो अपनी योग्यताके प्रति विश्वास होता है और न अपनी सफलतापर । वे बिलकुल अनमने होकर और बहुत ही हताश तथा निरुत्साह होकर दो चार छोटे मोटे कामोमे हाथ भी डालते है, पर उनके मनका भाव ऐसा होता है कि वे कुछ कर ही नहीं सकते और अन्तमे विफल होकर कहने लगते है कि हमारे भाग्यमे सफलता बदी ही

नहीं है, ईश्वरने हमे सदा दरिद्र दीन और दुःखी रहनेके लिए ही बनाया है। बस, चलो हो चुका। भला ऐसे लोग संसारमे क्या काम करेंगे और कैसे सफलता प्राप्त करेंगे। परन्तु यदि वही लोग अपने मनका भाव बदल दे और समझने लग जायँ कि हमारा जीवन सफल होनेके लिए ही है और हम जिस काममे हाथ डालेंगे उसीमे सफलमनोरथ होगे, तो सफलता उनके आगे दासीकी भाँति हाथ बाँधकर आ खड़ी होगी। इसके लिए आवश्यकता है केवल अपने मनका भाव बदलनेकी और उत्साहपूर्वक काममे लग जानेकी। पर न जाने क्यो लोग इसीसे सबसे अधिक घबराते है।

एक सज्जन थे जिन्होने बहुत परिश्रम करके और बहुत कठिनतासे पहले बी० ए० की उपाधि प्राप्त की थी और तब किसी प्रकार वकालत भी पास कर ली थी; परन्तु इतना सब कुछ होने पर भी वे किसी प्रकार अपना निर्वाह नहीं कर सकते थे। न तो उनके किए वकालत ही हो सकती थी और न कहीं उन्हे छोटी मोटी नौकरी ही ढूँढ़े मिलती थी। यद्यपि उन्होने कालेजमे रहकर अनेक बहुत बड़ी बड़ी बातोका ज्ञान प्राप्त कर लिया था; परन्तु यह सीधी सी बात उनकी समझमे अभी तक नहीं आई थी कि ईश्वर केवल पात्रापात्रोका विचार करके ही किसीको कुछ देता है। जब वे चारो ओर व्यर्थ भटककर बिलकुल निराश हो गए, तब अन्तमे एक दिन एक ज्योतिषीके पास जा पहुँचे। उन्होने ज्योतिषीसे कहा—महाराज मैने बहुत से काम किए, पर मुझसे कोई काम पूरा न हो सका। न किसीमे यश ही मिला और न धन ही। अब तो मुझे यही जान पड़ता है कि मै जन्मदरिद्री हूँ। मेरा जीवन दरिद्रतामे ही बीतनेको है। मैने अब तक जो कुछ पढ़ा लिखा, वह सब व्यर्थ गया। मुझे तो ऐसा जान पड़ता है कि इस जीवनमे मै कभी

सुखी हो ही नहीं सकता। आप भी जरा मेरी जन्मकुडली और ग्रहो-पर विचार कर देखे। ज्योतिषीजी बहुत चालाक और समझदार थे। वे थोड़ी देर तक उसकी कुंडली देखते रहे और कुछ थोड़ी बहुत गणना करते रहे और अन्तमे उन्होने उससे कह दिया कि—हाँ भाई, मुझे भी कुछ ऐसा ही जान पडता है। और वास्तवमे ज्योतिपीजीका कहना बहुत ठीक भी था, क्योकि जो व्यक्ति मानसिक दरिद्रतासे पूरी तरहसे परास्त हो चुका है, उसे ज्योतिषी इसके सिवा और कुछ कह ही क्या सकता है?

सबसे पहली बात तो यह है कि यदि तुम सम्पन्न होना चाहते हो तो तुम्हे सब प्रकारकी शंकाओसे अपना पीछा छुड़ाना चाहिए। जब तक तुममे और तुम्हारी आकांक्षाओके बीचमे शंकाका व्यवधान रहेगा, तब तक तुम उन आकांक्षाओकी पूर्त्ति तक पहुँच ही नहीं सकते। सफलमनोरथ होनेके पहले तुम्हे इस बातका पूरा पूरा विश्वास और निश्चय होना चाहिए कि तुम सफल होगे और अवश्य होगे। परन्तु जब तक तुम्हारी यह धारणा रहेगी कि हम कभी सफल न होगे या जब तक यह समझते रहोगे कि हम कभी धनवान् न होगे, तब तक तुम न तो सफल ही हो सकते हो और न धनवान् ही। जो लोग सदा हर बातमे यही कहा करते है कि यह काम तो हमसे न हो सकेगा, उनसे फिर सचमुच कभी कोई काम नहीं हो सकता। एक आत्मविश्वास ही ऐसी जादूकी कुंजी है जिससे सफलताके सब द्वार खुल सकते है। 'क्या करें कैसे करें' के अष्टाक्षरी मन्त्रके जपसे लक्ष्मी कभी प्रसन्न नहीं हो सकती।

जो लोग अपने रोजगारके सम्बन्धमे सदा यही कहा करते हो कि इस रोजगारमें कुछ मिलगत नहीं है, इसमे कुछ रक्खा नहीं है, इसमें कुछ

बचत नहीं है, ऐसे लोग कभी उस रोजगारसे लखपती या करोड़पती नही हो सकते। जो आदमी सदा नीचेकी ही ओर देखता रहेगा, वह भला ऊपरकी ओर कैसे जा सकेगा? आज तक जितने बड़े आदमी हो गए हैं वे कभी यह कहते हुए नही सुने गए कि—क्या कहे, आजकलका वक्त ही खराब हो रहा है; सब जगह नुकसान ही नुकसान दिखाई देता है। आदि आदि। जिस आदमीका हृदय और विचारक्षेत्र ही संकुचित होगा उसकी अवस्था क्या सुधरेगी? धन तो सदा साहसी, परिश्रमी, उद्योगी और उदार तथा व्यापक मनोवृत्तियोवाले लोगोको मिला करता है। किसीने लक्ष्मीकी उपमा शेरनीके दूधसे देते हुए कहा है कि शेरनीका दूध पहले तो जल्दी किसीको मिलता ही नही और यदि सौभाग्यवश किसीको मिल भी गया, तो फिर सोनेके बरतनके सिवा और किसी बरतनमे ठहरता ही नही, वह तुरन्त फट जाता है। ठीक यही दशा धनकी भी है। पहले तो वह किसीको जल्दी मिलता ही नही और यदि संयोगवश किसी प्रकार उत्तराधिकार आदिके द्वारा किसीको मिल भी गया तो वह उपयुक्त पात्रके पास ही रह सकता है, अपात्र या कुपात्रके पास नहीं ठहर सकता। इसलिए जो लोग दरिद्रतासे पीछा छुड़ाकर सम्पन्न बनना चाहते हो उन्हें उचित है कि वे पहले अपने आपमे पात्रता उत्पन्न करनेका उद्योग करे। क्योकि बिना पात्रता आए लक्ष्मी कभी आ ही नहीं सकती और यदि किसी प्रकार आ भी जाय तो ठहर नही सकती। अतः जो लोग सम्पन्न होना चाहते हो उन्हें सब प्रकारकी आशकाएँ, भय, सोच और दुष्ट विचारोका परित्याग करके अपने आपमे पात्रता उत्पन्न करनेका प्रयत्न करना चाहिए।

एक आदमी था जो पहले बहुत दिनों तक बहुत गरीब था और जिसके खाने तकका कोई ठिकाना नहीं था। पर कुछ दिनो बाद वह बहुत

धनवान् हो गया। एक बार पूछने पर उसने मूल पुस्तकके लेखकसे कहा था कि जब बहुत दिनो तक परम दरिद्र रहनेके कारण मै उकता गया, तब मैने अपने मनमे यह दृढ निश्चय कर लिया कि अब मैं कभी दरिद्र न रहूँगा और अवश्य धनवान् बन जाऊँगा। मैंने उस समय यह बात बहुत अच्छी तरह समझ ली थी कि दरिद्रता और कुछ नहीं, वास्तवमे एक मानसिक रोग है और जिस प्रकार हो सके मुझे उससे अपना पीछा छुड़ाना चाहिए। इसके उपरान्त उसने अपनी शक्तियोपर विश्वास करने और सदा धनवान् होनेकी बात सोचनेका अभ्यास आरम्भ किया। वह अपने हृदयमे बराबर यही समझने लगा कि मै अवश्य सम्पन्न होनेमे समर्थ हूँ और मै भी संसारमे कोई विशिष्ट स्थान प्राप्त करनेके लिए उत्पन्न किया गया हूँ। इस प्रकार निरन्तर प्रयत्न करके उसने अपने मनसे दरिद्रताका भाव निकालकर बिलकुल दूर कर दिया। वह कभी स्वप्नमे भी इस बातका विचार नहीं करता था कि मैं किसी काममे विफल होऊँगा। वह सदा सफलता और सम्पन्नताकी ही बाते सोचा करता। उसने विफलताकी ओरसे मुँह फेर लिया और सफलता तथा सम्पन्नताकी ओर अग्रसर होना आरम्भ कर दिया। मानसिक भावोमे इस प्रकारके परिवर्तनका परिणाम यह हुआ कि बहुत शीघ्र ही वह धनवान् हो गया। परन्तु पाठकोको यह न सोचना चाहिए कि अपने मनका इस प्रकार भाव बदलनेसे ही वह सम्पन्न हो गया। नहीं, उसने इसके अतिरिक्त अपने आपमे लक्ष्मीके पात्र होनेकी योग्यता भी सम्पादित कर ली। जहाँ तक हो सकता था वह सदा छोटी छोटी रकमे भी बचानेका प्रयत्न करता था। पहले वह बहुत ही सस्ती और साधारण चीजे खाया करता था और आवश्यकता पड़नेपर मीलो पैदल चला जाता था; कभी गाड़ी या ट्राम आदिपर न बैठता था; परन्तु जबसे उसने

अपने मानसिक भाव वदलनेका प्रयत्न आरम्भ किया तवसे वह अच्छे अच्छे भोजनालयोमे भोजन करनेके लिए जाने लगा और भले आदमियोकी तरह अच्छे मकानोमे रहने लगा। वह सदा अच्छे अच्छे लोगोसे मिलने लगा और समाजमें अपनी प्रतिष्ठा वढानेका प्रयत्न करने लगा। इन सव वातोका परिणाम यह हुआ कि उसे वहुत सी नई नई वाते माळूम होने लगी और वहुतसे लोगोसे उसे अनेक प्रकारकी सहायता मिलने लगी। अव उसे यह वात अच्छी तरह माळूम हो गई कि पहलेके मेरे सव कष्टोका कारण मेरे संकुचित विचार ही थे जो मुझे किसी प्रकार आगे वढने ही न देते थे। इन सव वातोका परिणाम यह हुआ कि थोड़े ही दिनोमे वह वहुत ही सम्पन्न हो गया। उसने अपने हृदयसे दरिद्रताको निकालकर भगा दिया था और इसी लिए अव दरिद्रता उसके पास भी न आ सकती थी।

जिन लोगोका हृदय सदा वहुत ही संकुचित और दुःखी रहता है वे कभी सम्पन्न नही हो सकते। यदि ऐसे लोग कभी कुछ धन एकत्र भी कर लेते है तो वह वहुत ही कंजूसी करके और अनेक प्रकारके शारीरिक तथा मानसिक कष्ट झेलकर। पर इस प्रकार कुछ धन एकत्र कर लेना भी सदा निर्धन वने रहनेके ही समान है। यदि हमारे पास धन है और हम उसका कोई सुख नही उठा सकते, तो हमारे लिए उस धनका होना और न होना दोनो वरावर है। यदि आप अपने समाजमे ढूँढेंगे तो आपको कुछ ऐसे आदमी भी मिल जायँगे जिनके पास हजारो लाखो रुपये होंगे, पर जो स्वयं वीमार पड़ने पर अथवा अपनी स्त्री या वच्चेके वीमार पड़ने पर एक पैसा भी खर्च करनेके लिए तैयार न होगे। ऐसे लोग भी मिलेगे जो पासमे यथेष्ट धन होने पर भी जाड़ेमे अच्छा नया और गरम कपड़ा नही वनवाते और पुराने रद्दी और फटे हुए

कपड़ोमे ही बड़े कष्टसे दिन विताया करते हैं। ऐसे लोग भी मिलेंगे जो मर जाना भी अच्छा समझेंगे पर पासके दस पाँच रुपए कभी न खरचेंगे । यदि वास्तविक दृष्टिसे देखा जाय तो उनमे और परम दरिद्रोमें कोई अन्तर नहीं है। यदि कोई अन्तर है तो वह केवल यही कि दरिद्रके पास बिलकुल धन नही होता और कंजूस सम्पन्नके पास अपने हृदयको बोध करनेके लिए कुछ धन होता है । और नहीं तो जिस प्रकार एक दरिद्र अपने पास कुछ भी धन न होनेके कारण सदा अनेक प्रकारके शारीरिक और मानसिक कष्ट उठाया करता है, उसी प्रकार वह कंजूस सम्पन्न भी कष्ट उठाया करता है। दूसरी वात यह है कि कंजूस सम्पन्न धनहानिके भयसे अधिक सम्पन्न भी नहीं हो सकता। उसे तो सदा यही चिन्ता लगी रहती है कि कहींसे मेरा एक पैसा निकल न जाय और जहाँ तक हो सके, कौड़ी कौडी करके ही सही, इसमे कुछ और वृद्धि हो जाय। परन्तु ध्यान रखना चाहिए कि जिन लोगोके इस प्रकारके विचार होते है, वे आर्थिक दृष्टिसे यो देखनेमे भले ही कुछ सफल जान पड़ते हो; पर वास्तवमें अपेक्षाकृत वहुत ही कम सफल होते है। यदि वही लोग अपना स्वभाव थोड़ा वदल दें और अपना हृदय कुछ उदार और विस्तीर्ण कर ले, तो थोड़े ही दिनोमे बहुत अधिक सम्पन्न हो सकते है । वास्तविक बात यही है कि केवल विशाल और उदार हृदय ही धनको यथेष्ट मात्रामे अपनी ओर आकृष्ट करता है । संकुचित और दुःखी हृदयसे तो वैभव आप ही कोसो दूर भागता है। सदा प्रसन्न रहिए, सदा अपने हृदयमे अच्छी अच्छी आशाएँ रखिए, आपको अवश्य सफलता होगी । सदाशा ही मानो सफलताकी जननी है। कदाशासे तो उसका नाश ही होता है।

सदाशा ही मानो मनुष्यका वास्तविक जीवन है। मनुष्यको सुखी और सफल बनानेके लिए जितने तत्त्वोकी आवश्यकता होती है, वे सब सदाशामे बीज रूपसे वर्तमान रहते हैं। इसके विपरीत कदाशा या निराशा परम नाशक है और उसकी उपमा मृत्युसे दी जा सकती है। यदि दुर्भाग्यवश किसी आदमीकी सारी सम्पत्ति नष्ट हो जाय, उसकी तन्दुरुस्ती भी जवाब दे दे, यहाँ तक कि उसकी मान मर्यादा भी न रह जाय; परन्तु यदि उसे अपनी शक्तियोका भरोसा होगा और उसकी दृष्टि सदा ऊँची रहेगी, तो कभी न कभी वह फिर सफल सम्पन्न होगा, उसके दिन फिर फिरेंगे। अतः प्रत्येक मनुष्यको सदा अपने हृदयमे अच्छी और ऊँची आशाएँ रखनी चाहिए। कभी निराश न होना चाहिए और कभी यह न समझना चाहिए कि अब मुझसे कुछ भी न हो सकेगा और मेरे नाशके दिन आ गए है।

जब तक हमारे हृदयमे निराशा और सन्देह बना रहेगा, तब तक हमारा विफलमनोरथ होना भी निश्चित रहेगा। अतः यदि आप दरिद्रतासे अपना पीछा छुड़ाना चाहते हो और सम्पन्न होना चाहते हों, तो आपको उचित है कि आप अपने हृदयकी उत्पादक शक्तिका नाश न होने दे। इसके लिए केवल इसी बातकी आवश्यकता है कि आप सदा अच्छी आशा रक्खे, सदा प्रसन्न रहे और सदा अच्छी अच्छी बातोका ही विचार किया करें। कारीगर जब कोई मूर्ति बनाना चाहता है तब पहले वह उसका एक साँचा या ढाँचा बना लेता है। यदि आप सम्पन्नता और सफलता प्राप्त करना चाहते है तो आपको भी पहले अपने मनमे उसका एक साँचा या ढाँचा तैयार करना पड़ेगा। यदि आप अपने पुराने दरिद्रतापूर्ण संसारको छोड़कर नए सम्पन्नतापूर्ण संसारमे जाकर रहना चाहते है, तो पहले आपको उस संसारका स्वरूप अपनी दृष्टिके

सामने खडा करना चाहिए। जो लोग सब प्रकारसे निराश हो चुके हों, उन्हे सबसे पहले इस बातका ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिए कि अपने विचारोमे थोड़ा सा शुभ परिवर्तन करते ही हम बहुत बड़ी शक्ति सम्पादित कर सकते है, और जब उन्हे इस बातका ज्ञान हो जायगा तब उनका सारा जीवनक्रम ही बदल जायगा और वे एक नए ससारमे नए उत्साह तथा नए जीवनके साथ प्रवेश कर सकेगे।

विलायतमे एक परिवार था जिसके सदस्योंने इसी प्रकार अपनी मानसिक अवस्थामे परिवर्तन करके अपनी संसारिक अवस्थामे आश्चर्यजनक परिवर्तन कर लिया था। पहले वे लोग बहुत ही दुर्दशाग्रस्त थे और अपनी दुर्दशा तथा दुरवस्थासे इतने अधिक निराश हो गए थे कि वे समझने लगे थे कि सफलता और सम्पन्नता केवल दूसरोंके लिए ही है, हमारे लिए उसकी सृष्टि ही नहीं हुई है। उन्हे इस बातका दृढ विश्वास हो गया था कि हम सदा दीन हीन दशामे ही रहनेके लिए बनाये गए है। इसका परिणाम यह हुआ था कि वे लोग दरिद्रता और दुर्भाग्यके मूर्तिमान् स्वरूप जान पड़ते थे। यहाँ तक कि वे जिस मकानमे रहते थे, वह मकान भी स्वयं दरिद्रताका ही आवास जान पडता था। बहुत ही प्रसन्नचित्त आदमी भी उस मकानमे या उन लोगोंके बीचमे पहुँचकर परम दुखी हो जाता था। उन लोगोमे अथवा उनके मकानमे एक भी बात ऐसी न थी जो किसीके हृदयमे कुछ भी प्रसन्नता उत्पन्न कर सकती। भला ऐसी परिस्थितिमे रहकर वे क्या उन्नति कर सकते थे और कैसे अपनी अवस्था सुधार सकते थे! अन्तमे एक दिन लड़कोकी माताने कहीं पढा कि दरिद्रता अधिकांशमे एक प्रकारका मानसिक रोग है। सिर्फ इतनी सी ही बातका उसपर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा और उसने अपनी आदत तथा अपने विचार बदलनेका प्रयत्न आरम्भ

किया। धीरे धीरे उसने अपने हृदयसे सब प्रकारकी निराशाओ, सब प्रकारकी बुरी भावनाओ, सब प्रकारके दुःखो और सब प्रकारके बुरे विचारोको निकाल वाहर किया और वह सदा प्रसन्न रहने तथा अच्छी अच्छी आशाएँ करने लगी। इन सब वातोका परिणाम यह हुआ कि उसमे और उसके वाल बच्चोमे एक नए प्रकारका जीवन और नए प्रकारका उत्साह संचार करता हुआ दिखलाई देने लगा। अब उन लोगोको देखकर किसीका हृदय सहसा दुखी न होता था। धीरे धीरे सारा घर प्रसन्नतापूर्ण जान पड़ने लगा। मानो सारा घर किसी घोर अन्धकारमेसे निकलकर वहुत ही सुदर प्रकाशमे आ गया। कदाशा या दुराशाका स्थान सदाशाने ले लिया। अब घर भरकी सभी आदते और सभी वाते वदल गईं। सव लोग प्रसन्नचित्त और साफ सुथरे रहने लगे। मकानकी भी वहुत कुछ सफाई हो गई। इस प्रकार अन्दर वाहर सब स्वच्छ हो गया। सब लोगोने दरिद्रता और विफलताकी विकराल मूर्तिको अपने हृदयसे भी और अपने घरसे भी निकालकर बाहर फेक दिया और प्रसन्नता तथा उत्साहपूर्वक लक्ष्मी देवीका आवाहन आरम्भ कर दिया।

मानसिक भावो और वाह्य परिस्थितियोके वदलते ही धीरे धीर सब लोग उस अवस्थाको पहुँचने लगे जिस अवस्थाको साधारणतः संसार सौभाग्यपूर्ण मानता है। वहुत अच्छी तरह रहनेके कारण लड़कोका पिता अधिक और अच्छा काम करने लगा जिससे जल्दी ही उसकी वहुत कुछ तरक्की हो गई। लड़कोके सम्बन्धमे भी यही बात हुई। दो ही तीन वर्षोंमे स्वयं उन लोगोका भी और उनके घरका भी स्वरूप इतना अधिक परिवर्तित हो गया कि सहजमे कोई उन्हे पहचान ही न सकता था। घर और उसमे रहनेवालोका बिलकुल काया-पलट हो गया,

दुःख तथा दरिद्रताका नाश हो गया और सुख तथा सम्पन्नताने आकर घरमे डेरा डाल दिया । और यह सारी करामात केवल विचारोके परिवर्तनकी ही थी ।

हम जो कुछ वनना चाहते हों उसीके अनुसार हमें अपना कार्य आरम्भ कर देना चाहिए । यह कार्य आरम्भ करना ही मानो उस वातका अभ्यास करना है । यदि हम धनवान् होना चाहते हो तो हमे अपने आपको धनवान् समझने लगना चाहिए और अपने हृदयके भावोंको धनवानोके भावोके समान वनाना चाहिए । हमे यह वात अच्छी तरह प्रमाणित करके दिखला देनी चाहिए कि हम धनवान् होनेके उपयुक्त हैं और वरावर धनवान् होते जा रहे है । इस वातको और अधिक स्पष्ट करनेके लिए हम छोटासा उदाहरण देते हैं । मान लीजिए कि कोई वहुत अच्छा नट है जो रंगभूमिमे एक ऐसे व्यक्तिका नाट्य करना चाहता है जो वहुत ही उन्नतिशील है और जिसका हाथ लगते ही मिट्टी भी सोना हो जाती है । अव यह नट वहुत ही फटे पुराने कपड़े पहने हुए, सिर झुकाए हुए, निराशहृदय और विलकुल मुरदा सा होकर रंगभूमिमे आता है और आकर डरता तथा झिझकता हुआ कहने लगता है—मैंने जो काम अपने ऊपर उठाया है वह बहुत वड़ा है और मै समझता हूँ कि मै इस कामके लिए विलकुल ही उपयुक्त नहीं हूँ । मैंने अपने ऊपर यह भार लेकर वहुत वड़े दुस्साहसका काम किया है । और लोग तो धनवान् हो चुके है, पर मै तो सदासे यही समझता आ रहा हूँ कि मै कभी सम्पन्न या धनवान् नहीं हो सकता । मैं बहुत साधारण आदमी हूँ और मैने संसारका कुछ बहुत अधिक अनुभव भी नहीं प्राप्त किया है । स्वय अपने आपपर और अपनी शक्तियोपर भी मेरा विश्वास नहीं है । मेरा यह सोचना ठीक नहीं है कि मै कभी संसारमे सम्पन्न या धनवान् हो सकूँगा । आदि

आदि । भला बतलाइए तो सही कि ऐसे नटके इस प्रकारके कथनका दर्शकोपर क्या प्रभाव पड़ेगा ? क्या वे कभी यह समझ सकते हैं कि यह आदमी धनवान् हो सकेगा या अपनी शक्तियोंका पूरा पूरा उपयोग कर सकेगा ? क्या उसके इस कथनसे लोग यह समझ सकेंगे कि यह लक्ष्मीका पात्र होनेके योग्य है ? क्या सब दर्शक लोग अपने मनमे यह न कहेगे कि यह आदमी कभी सम्पन्न न हो सकेगा और सदा दरिद्र बना रहेगा ? क्या वे उसकी धनवान् होनेकी कामनापर न हँसेगे और उसके साहसको दुस्साहस न समझेगे ?

मान लीजिए कि कोई ऐसा नवयुवक है जो धनवान् तो होना चाहता है, पर सदा अपने मनमे यही सोचा करता है कि मै कभी धनवान् न हो सकूँगा । वह सबके सामने अपनी अयोग्यता और असमर्थताका ही बखान किया करता है और लोगोसे कहता फिरता है कि मेरा भाग्य बहुत ही खराब है और मै सदा दरिद्र बना रहूँगा । भला आप ही बतलाइए कि क्या ऐसा आदमी कभी धनवान् हो सकता है ? जो आदमी दिन रात दरिद्रताकी ही बाते सोचा और कहा करता हो और सब बातोंमे सदा दरिद्र ही बना रहता हो, वह कब सफलता या लक्ष्मीके मन्दिर तक पहुँच सकता है ?

हम जिस प्रयासमे लगे हो उसकी सिद्धिके लिए सबसे पहली और आवश्यक बात यह है कि हम अपनी मानसिक स्थिति और प्रवृत्ति भी उसीके अनुकूल बनावे । यदि हम धनवान् होना चाहते है तो हमे सबसे पहले यह दृढ विश्वास कर लेना चाहिए कि हमारी सृष्टि ही धनवान् होनेके लिए हुई है । उसे समझ लेना चाहिए कि हममे एक ऐसा दैवी अश है जो हमे सदैव सिद्धि प्राप्त कराता रहेगा और हमे अवश्य ही सम्पन्न बनाकर छोड़ेगा ।

प्रत्येक व्यक्तिको अपने मनसे सब प्रकारकी आशंकाएँ और सब प्रकारके भय निकाल डालने चाहिए और अपने हृदयमे दरिद्रता या विफलताकी छाया भी न रहने देनी चाहिए। जब एक बार अपने विचारोपर हमारा आधिपत्य हो जायगा, जब एक बार हम अपने मनपर प्रभुत्व स्थापित करना सीख लेगे, तब हम देखेगे कि सफलता हमारे सामने हाथ जोड़े खड़ी है और हमारे सब काम आपसे आप होते चले जा रहे है। उत्साह और विश्वासका अभाव, शका, भय आदि ऐसे भीपण कीटाणु है जिन्होने हजारो लाखो आदमियोकी सम्पन्नता और सुखका समूल नाश कर दिया है। यदि सब दरिद्र और दुखी लोग एक बार दरिद्रता और दुःखकी ओरसे अपना मुँह मोड ले, अपने मनमे यह बात अच्छी तरह बैठा ले कि हमारी दरिद्रताका नाश हो गया और सदा प्रसन्न तथा सुखी रहने लगे, तो थोड़े ही समयमे इस संसारमे बहुत बड़ा परिवर्तन दिखलाई देने लगेगा।

प्रत्येक बालकको जन्मसे ही यह शिक्षा देनी चाहिए कि वह धनवान् और भाग्यवान् होगा और उसके मनमे यह बात जमा देनी चाहिए कि संसारकी जितनी अच्छी चीजे है वे सब उसके लिए मौजूद है। यदि बाल्यावस्थासे ही बालकोको इस प्रकारकी शिक्षा दी जाया करे, तो वे युवक होने पर कभी दुखी या दरिद्र न रह सकेगे। सम्पन्नता और सुखकी सृष्टि सबसे पहले स्वयं मस्तिष्कमे होनी चाहिए। जब पहले वह विचारमे आ जाती है तभी प्रत्यक्षमे भी आती है।

जब कोई युवक वैद्य हकीम या डाक्टर आदि बनना चाहता है, तो वह आरम्भसे ही इस तरहके लोगोके पास रहकर चिकित्साशास्त्रकी शिक्षा प्राप्त करने लगता है। वह अपना अधिकांश समय औपधोके गुण

आदि जानने, उनके सम्बन्धमें जानकारोसे वाते करने और उसके शास्त्रके अध्ययनमे ही व्यतीत करता है। यदि वह वनना तो चाहता हो वैद्य हकीम या डाक्टर और पढने बैठ जाय कानून, और सग साथ भी वकीलो वैरिस्टरो आदिका रक्खे तो वह चिकित्साशास्त्रका ज्ञाता कैसे हो सकता है? इसी प्रकार जो आदमी सुखी और सम्पन्न होना चाहता हो, उसे भी दिन रात सुख और सम्पन्नताकी ही वाते सोचनी चाहिए। यदि ऐसा न करके वह सदा अपनी दरिद्रता दीनता और दुःख आदिकी ही वाते सोचा करेगा, तो वह फिर कभी सुखी और सम्पन्न नही हो सकता। ऐसा होना नितान्त असम्भव है और प्रकृतिके नियमके विपरीत है।

दरिद्रता और दुःखके विचारोसे हमे सदा दृढतापूर्वक अपनी रक्षा करनी चाहिए और परिस्थितियोपर अपना प्रभुत्व स्थापित करना चाहिए। अपने मनम यह विश्वास रखना चाहिए कि हम बुरीसे बुरी परिस्थितियोपर भी विजय प्राप्त करनेके लिए ही है। हमे यह समझ लेना चाहिए कि हम परिस्थितियोके दास नही है, वल्कि स्वामी है। हमे यह सोचना चाहिए कि संसारमे वहुत सी अच्छी अच्छी चीजे है और उनमे हमारा भी हिस्सा है। हम विना दूसरोको किसी प्रकारकी हानि पहुँचाए अथवा वंचित किए उन अच्छी चीजोपर अपना अधिकार कर सकते है। इसे हमे अपना जन्मसिद्ध अधिकार समझना चाहिए और वह अधिकार प्राप्त करनेके लिए हमे कटिवद्ध हो जाना चाहिए।

दरिद्रताके जितने विचार और लक्षण आदि है, हमे उन सबको निर्मूल कर देना चाहिए; यहाँ तक कि अपने वस्त्रो और आचार व्यवहार आदिमें भी कोई चिह्न न रहने देना चाहिए। हमे अपने कार्योंसे लोगो-

पर यह भी प्रमाणित कर देना चाहिए कि हमने सम्पन्न और सुखी होनेका इतना दृढ निश्चय कर लिया है कि संसारकी कोई शक्ति हमे सफलमनोरथ होनेसे नहीं रोक सकती। जब हम इतना सब कुछ कर चुकेगे तब हम देखेगे कि हममे एक नई शक्ति और नया जीवन आ गया है। उस समय हम एक ऐसे नए संसारमें पहुँच जाँयगे जिसमे सदा सफलता ही सफलता होती है और विफलताका कोई नाम भी नहीं जानता।

४—सम्पन्नता।

एक देशी देहाती कहावत है कि "ईश्वर शकरखोरेको शकर ही देता है।" इस कहावतमे सम्पन्नताका बहुत बड़ा तत्त्व भरा हुआ है। यदि सब लोग यह तत्त्व अच्छी तरह समझ ले तो संसारकी बहुत सी दरिद्रता और दुःखपरम्परा बिलकुल नष्ट हो जाय। कहा है—

यादृशीं भावनां कुर्यात्सिद्धिर्भवति तादृशी।

अपने ध्येय तक पहुँचनेका एक ही मार्ग है और वह यह कि हम अपने उस ध्येयका ही श्रवण करे, उसीका मनन करे और यहाँ तक कि स्वयं ध्येयमय हो जायँ। हमे अपने मनमे खूब अच्छी तरह यह बात समझ लेनी चाहिए—

न हि कल्याणकृत् कश्चित् दुर्गतिं तात गच्छति।

और साथ ही इस बातका दृढ विश्वास रखना चाहिए कि

तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्।

समृद्ध होनेका बस यही सबसे अच्छा और वास्तविक मार्ग है। हमें समझ लेना चाहिए कि जब स्वयं भगवान् श्रीकृष्णने हाथ उठाकर यह उपदेश दिया है, तब फिर हम दरिद्र और दुःखी क्यो रहे। और यदि इतनेपर भी हम दरिद्र और दुःखी ही रहे तो इसमे स्वयं हमारा ही दोष है, किसी दूसरेका नहीं। हमे इस अनन्त विश्वमे व्याप्त पोषक शक्तिसे तादात्म्य कर लेना चाहिए। यह तादात्म्य ही सुख और समृद्धि है और इसके विपरीतकी अवस्था दरिद्रता और दुःख है। यदि हम उस शक्तिसे अपना तादात्म्य नहीं करते और अपने आपको उससे अलग समझते हैं, यदि हम अपने आपको इस विश्वका एक तुच्छ और विच्छिन्न परमाणु समझते है और यह मानते हैं कि हममे कोई सृजन शक्ति नहीं है, तो हम कभी सुखी

और सम्पन्न नही हो सकते। न जाने कहाँसे लोगोके मनमे यह घातक सिद्धान्त बैठ गया है कि समृद्धि और सुख बहुत थोड़े से लोगोके भाग्यमे बदा होता है। जान पड़ता है कि लोगोने यह सिद्धान्त स्थिर करते समय यह सोचा होगा कि सब लोगोके लिए धनवान् और सम्पन्न होना असम्भव है। उन्होने समझा होगा कि संसारमे अच्छी और इष्ट वस्तुएँ बहुत थोड़ी है और उन्हे प्राप्त करनेकी इच्छा रखनेवाले सभी लोग है। इसलिए जो लोग दूसरोके साथ धूर्ततापूर्वक लड़ झगड़कर उन्हे परास्त कर सकेगें, वही सुखी और सम्पन्न हो सकेगे। परन्तु यह समझना केवल भ्रमपूर्ण ही नही है बल्कि व्यक्तियो और जातियोकी उन्नति और सुख समृद्धि आदिके लिए बहुत ही घातक है।

विधाताने इस पृथ्वीपर जितने आदमी उत्पन्न किए है उतने ही आदमियोंके लिए बल्कि उनसे भी कही ज्यादा आदमियोके भरण पोप-णकी सामग्रीकी पहलेसे ही व्यवस्था कर रक्खी है। यदि हम यह समझते है कि उसने बहुत ही थोड़ेसे आदमियोके लिए सुख समृद्धिकी व्यवस्था की है तो मानो हम उसकी सर्वशक्तिमत्ता पर बड़ा भारी लाञ्छन लगाते है और यह वतलाना चाहते है कि उसमे अधिक आदमियोको सुखी करनेकी योग्यता ही नहीं है। ससारमे सब लोग जिन जिन पदार्थोंकी कामना करते है वे सभी चीजे यहाँ बहुत अधिकतासे उप-स्थित है। स्वय उन चीजोकी कमी नहीं है; क़मी है हमारे अध्यवसाय और प्रयत्नकी, हमारी योग्यता और सामर्थ्यकी।

सबसे पहले भोजनको ही लीजिए, जो हमारे जीवनके लिए सबसे अधिक आवश्यक पदार्थ है। क्या कोई कह सकता है कि ससा-रमे खाद्य पदार्थोंकी कमी है? स्वयं अपने देश भारतवर्षको ही लीजिए अनेक कारणोंसे इस समय बहुत दरिद्र हो रहा है। अब

भी इस देशमे इतना अधिक अन्न होता है कि यदि इस देशके सब निवासी अच्छी तरह भर पेट खा ले, तो भी बहुत कुछ बचा रहे। यह बात दूसरी है कि देशकी पराधीनताके कारण वह अन्न देशमे नही रहने पाता और दूसरे दूसरे देशोको चला जाता है। परन्तु इसमे कोई सन्देह नहीं कि अन्न होता बहुत अधिक है। यही हाल कपास, चीनी, तेल, घी आदि अन्यान्य आवश्यक वस्तुओका भी समझ लीजिए। पहले लोग तेलहनसे तेल निकालकर जलाया करते थे। जब पृथ्वीकी आबादी बहुत बढ गई और यथेष्ट परिमाणमे तेल मिलनेमे दिक्कत होनेकी नौबत आने लगी, तो उससे बहुत पहले ही मिट्टीका तेल निकल आया। वैज्ञानिकोने हिसाब लगा-कर देखा कि सारे संसारमे मिट्टीका तेल इतना है और यह इतने दिनोमे समाप्त हो जायगा। अभी सैकड़ो वर्षोंके लिए तेल था ही कि लोग चिन्ता करने लगे। उसी समय बिजली निकल आई और तेलकी सारी दिक्कत हल हो गई।

पाठक सुप्रसिद्ध विद्वान् न्यूटनसे परिचित होगे। जब वह मरने लगा तब लोगोने उससे पूछा कि आपने संसारकी समस्त विद्यामेसे कितनी विद्या प्राप्त की है? न्यूटनने उत्तर दिया कि अभी तो उसके अथाह और अनन्त सागरमेसे मुझे पूरा एक कण भी नही मिला है। न्यूटनके सम-यसे अब तक विज्ञानमे बहुत कुछ उन्नति हो चुकी है। परन्तु अब भी बड़े बड़े वैज्ञानिक यही समझते है कि हमे उस अथाह तथा अनन्त सागरमेसे एक बूँद भी पूरी नही मिली है। ऐसी दशामे यह समझना कि संसारमे अमुक पदार्थ बहुत ही कम मानमे है और वह सब लोगोको नही मिल सकता, मूर्खता नही तो और क्या है?

सब प्रकारके विज्ञान और विद्याएँ दिन परदिन उन्नति करतीं जा रही हैं और लोगोके लिए अधिकाधिक द्रव्य उत्पन्न करनेकी चिन्तामे

लगी हुई है। पहले जितनी भूमिसे दस मन अन्न उत्पन्न होता था अब उतनी ही भूमिसे सौ मन अन्न उत्पन्न करनेके उपाय सोचे और निकाले जा रहे है और तिसपर अभी आधुनिक विज्ञानकी दृष्टिसे कृषिविद्याका बिलकुल आरम्भ ही है । यही बात अन्यान्य द्रव्योके सम्बन्धमे भी समझ लीजिए। तात्पर्य यह कि उस अनन्त ईश्वरकी इस सृष्टिमे सभी चीजे अनन्त और आवश्यकतासे कही अधिक है। स्वयं ईश्वर ही हम सबी लोगोको सुखी और सम्पन्न बनाना चाहता है और उसने हमारे लिए पहलेसे ही आवश्यकतासे बहुत अधिक सामग्रीकी व्यवस्था कर रक्खी है। मनुष्य जितनी चीजोकी कामना कर सकता है, वे सब चीजे और उनके अतिरिक्त और भी बहुतसी चीजे इस पृथ्वीमें बहुत पहलेसे ही मौजूद है। हम जितनी चीजें अपने उपयोगमे ला सकते हैं उससे कहीं अधिक चीजे परमात्मा या प्रकृति पहलेसे ही उत्पन्न कर रखती है। यदि किसी बहुत बड़े राजा महाराजा या सम्राट्का राजकुमार बहुत ही दीन हीन अवस्थामे पहाड़ो और जंगलोमे भटकता फिरता हो, तो हमें समझ लेना चाहिए कि उसके सम्बन्धमें कुछ न कुछ विपरीत बात हुई है। कोई न कोई ऐसी खराबी आई है जिसके कारण उसे ऐसा करना पड़ रहा है। इसी प्रकार जिन लोगोके लिए परमात्माने इतने अधिक पदार्थोंकी व्यवस्था कर रक्खी है, वे लोग यदि अन्न बिना कष्ट उठावे और भूखो मरे तो समझ लेना चाहिए कि उनमे भी कोई न कोई दोष या खराबी आ गई है। जब हम इतने सम्पन्न संसारमे रहकर भी अपने जीवन-निर्वाहकी अच्छी तरह व्यवस्था न कर सके, तो इसमें अवश्य हमारा कुछ न कुछ दोष है।

हमारी सृष्टि सदा प्रसन्न और सुखी रहनेके लिए ही हुई है। परन्तु यदि हम दुखी और दरिद्र रहते है तो इसका कारण यही है कि हम बात ् विश्वास नहीं करते कि प्रकृतिने हमारे लिए अनन्त द्रव्योकी

व्यवस्था कर रक्खी है। इस प्रकार मानो हम अपना वह द्वार ही बन्द कर लेते है जिस द्वारसे प्राकृतिक पदार्थ हमारे पास तक पहुँचते है। दूसरे शब्दोमे हम यह बात इस प्रकार कह सकते है कि हम आकर्षणके नियमोका पालन नही करते। हममे अविश्वासकी मात्रा इतनी अधिक होती है कि हम अपनी ओर आती हुई चीजोको भी ग्रहण करनेके योग्य नहीं रह जाते। पदार्थोंके आधिक्य और प्राप्तिके ये नियम उतने ही ठीक और निश्चित हैं जितने कि गणितके सिद्धान्त हैं। यदि हम उन नियमोका ठीक तरहसे पालन करते हैं तो हम सब चीजे बहुत अधिक मात्रामें प्राप्त कर सकते है और यदि हम उन नियमोका पालन नहीं करते तो मानो आती हुई लक्ष्मी और वैभवका तिरस्कार करते है। संसारमे किसी बातकी कमी नहीं है। सब चीजे बहुत अधिक मात्रामे है। आवश्यकता है केवल इस बातकी कि हम उनकी अधिकतामे विश्वास करे और उन्हे प्राप्त अथवा ग्रहण करना सीखे। यदि हम उन्हे प्राप्त और ग्रहण करना सीख ले तो फिर हमारे लिए इस संसारमे किसी चीजकी कमी नहीं रह सकती।

आजकल सब लोग यही समझते है कि संसारमे प्रतिद्वन्द्विताका राज्य है। वे समझते है कि इस प्रतिद्वन्द्वितामे जो ठहर सकता है वही सफल हो सकता है और जो प्रतिद्वन्द्वितामे न ठहर सकता हो उसके लिए इस संसारमे कोई स्थान नहीं है। इसी लिए प्रतिद्वन्द्विताके सम्बन्धमे बहुतसी कहावते बन गई हैं जिनमेसे एक यह भी है कि प्रतिद्वन्द्विता ही रोजगारकी जान है। परन्तु यदि हमे एक बार इस बातका विश्वास हो जाय कि ईश्वरने सब चीजे आवश्यकतासे बहुत अधिक उत्पन्न की है तो फिर हमे किसी प्रकारकी प्रतिद्वन्द्विता करनेकी आवश्यकता नहीं रह जाती। हम अपने आपको ईश्वरीय शक्तिसे बिलकुल

पृथक् समझते है और इसी लिए इतने भयभीत रहते है । हमारी दशा, ठीक उस बालकके समान है जो अपनी मातासे बिछुड़ जाता है और अकेला पड़ जानेके कारण डरने लगता है। जब हमे मालूम हो जायगा कि अपने आपको ईश्वरीय शक्तिसे पृथक् समझना बड़ी भारी भूल बल्कि अपराध है, तब हम अच्छी तरह यह भी जान जायँगे कि प्रकृतिके अनन्त कोषसे किस प्रकार अपनी आवश्यक चीजे प्राप्त करनी चाहिएँ । जब हम अपने आपको उसी परमेश्वरका एक अंग समझने लगे, तब न तो हमे किसी प्रकारका भय रह जायगा और न किसी पदार्थकी आवश्यकता रह जायगी । हमारी आवश्यक चीजे आपसे आप हमे मिलने लगेगी । क्योकि उस दशामे हम स्वय उस अनन्त भंडारके मध्यमे पहुँच जायँगे, हमे अपने चारो ओर सब चीजे आवश्यकतासे अधिक मानमे दिखलाई देने लगेगी ।

जो मनुष्य स्वय ईश्वरका अंश और प्रतिकृति है उसके लिए विफल होना या दरिद्र रहना नितान्त असम्भव है । मनुष्य सदा सम्पन्न रहनेके लिए बनाया गया है और ऐसी परिस्थितिमे उत्पन्न किया गया है जिसमे उसके लिए कभी कोई चीज घटे ही नहीं । परन्तु फिर भी बहुतसे लोग सदा दीन दुखी और दरिद्र बने रहते हैं। उन्हे कभी किसी काममे सफलता होती ही नही । इसका कारण यही है कि सफलता प्राप्त करने और सम्पन्न होनेके जितने मार्ग या द्वार हैं उन सबको वे अपने भय, आशंका और चिन्ता आदिसे बन्द किए रहते है । उनकी सफलता और सम्पन्नता बिलकुल अवरुद्ध रहती है । उनके मनकी अवस्था ही ऐसी रहती है जिसमे वे कभी सफलमनोरथ हो ही नहीं सकते । सम्पन्नता तो वास्तवमे उसीको प्राप्त होती है जिसके मनमे उत्पादन या सृजन करनेकी शक्ति होती है । भयभीत और सशंकित रहनेवाला हृदय भला सम्पन्नता तक कैसे पहुँच सकता है !

यह बात ठीक है कि कोई आदमी स्वयं यह नहीं चाहता कि आया हुआ सुअवसर चला जाय अथवा आती हुई लक्ष्मी लौट जाय। परन्तु फिर भी उनकी मानसिक अवस्था ही ऐसी होती है जिसमे आया हुआ अवसर और लक्ष्मी उनके अनजानमे ही आपसे आप चली जाती है। इस प्रकार हमारी आशंकाएँ और भय ही हमे सदा दरिद्र बनाए रहते हैं। हमारा हृदय चाहे कितना ही विस्तृत क्यो न हो और हमारा मस्तिष्क चाहे कितना ही बलवान् क्यो न हो, पर यदि हम सम्पन्नता और सुखकी ओरसे मुँह मोड़े रहेगे तो हम कभी उसे संपादित न कर सकेंगे। हमारे मार्गमे जितनी बाधाएँ होती है वे सब हमारे मनसे ही उत्पन्न होती है और इसी लिए हम गंगाके मध्यमे रहकर भी प्यासे रहते है। हमे आवश्यकतासे कम चीजे इसी लिए मिलती है कि हम माँगते ही कम है और हम सब चीजोको बहुत अधिक मात्रामे प्राप्त करनेसे डरते है। सम्पन्नता तो स्वय हमे ग्रहण करनेके लिए तैयार रहती है, पर अपनी अज्ञानताके कारण हम स्वयं ही उससे दूर रहते है।

हमारी प्रकृति कभी दरिद्र बने रहनेके अनुकूल नहीं है। परन्तु अपनी शक्तियो और परिस्थितियोका ठीक ठीक ज्ञान न होनेके कारण ही हम दरिद्र बने रहते है। हम बराबर यही समझते है कि सम्पन्नता सब लोगोंके लिए नहीं है, केवल उन्हीं लोगोके लिए है जिनमे कुछ विशिष्ट गुण और विशिष्ट योग्यता होती है अथवा जिनका भाग्य बहुत प्रबल रहता है। परन्तु यह समझना बहुत ही भ्रमपूर्ण है और यही हमारी दरिद्रताका कारण है। जो लोग सम्पन्नताके नियमसे परिचित हो जाते है वे कभी दरिद्र या दुःखी नहीं रह सकते; परन्तु जो लोग उस सिद्धान्तसे परिचित नहीं होते वे सदा दुखी और दरिद्र बने रहते है।

सम्पन्न होनेका मूल तत्त्व यही है कि हम सदा अपने आपको सम्पन्न समझा करें और कभी किसी प्रकारकी दरिद्रता या आवश्यकताका अनुभव ही न किया करे। कुछ लोग ऐसे होते है जिनके लिए मानो संसारमे दरिद्रताका अस्तित्व ही नहीं होता। वे जिससे बातें करते है वह भी अपने आपको धनवान् और सम्पन्न समझने लगता है। उन्हे अपने चारो ओर सभी चीजे आवश्यकतासे कहीं अधिक दिखाई पडती है। वे सब लोगोके साथ प्रेमका व्यवहार करते हैं और सब लोग उनके साथ प्रेमका व्यवहार करते हैं। वे सदा प्रसन्न रहते है और उन्हे कभी किसीसे किसी बातकी शिकायत करनेका मौका ही नहीं रहता। चाहे देखनेमें ऐसे लोग आर्थिक दृष्टिसे बहुत ही साधारण कोटिके जान पड़ते हो; परन्तु फिर भी उनका हृदय इतना सम्पन्न रहता है कि उनके सान्निध्यसे और लोग भी अपने आपको सम्पन्न समझनें लगते है। इसके विपरीत कुछ लोग ऐसे भी होते है जिनके पास यथेष्ट सम्पत्ति होती है; परन्तु फिर भी जो न तो स्वयं अपनी सम्पन्नताका अनुभव करते है और न सारे विश्वका धन पाकर भी वे सन्तुष्ट हो सकते है। इसका कारण यही है कि उनका हृदय स्वार्थ और लालचसें भरा हुआ होता है और उसमेसे माधुर्य बिलकुल निकल जाता है। यदि हम सब कुछ पाकर भी अपने आपको दुखी और दरिद्र ही समझतें रहे, तो फिर संसारकी कोई शक्ति हमे सुखी और सम्पन्न नहीं कर सकती। उस समय मानो दरिद्रता और दुःख हमारे हृदयमे घर कर लेता है और सुख शान्ति तथा सन्तोष आदिको अन्दर घुसने नहीं देता। परन्तु यदि हमारे हृदयमे सन्तोष, प्रसन्नता और सुख है और लालच या स्वार्थका हमपर अधिकार नहीं है, तो उस दशामे हम अपेक्षाकृत कम सम्पन्न रहने पर भी ऐसे लोगोकी अपेक्षा कहीं अधिक

सम्पन्नताका अनुभव कर सकते है। स्वयं सम्पन्नता तक पहुँचनेके पहले हमे अपने हृदयमे सम्पन्नताका भाव उत्पन्न करना चाहिए। और नही तो फिर सारे ससारका वैभव भी हमे सम्पन्न न वना सकेगा।

सवसे पहले हमे यह भी समझ लेना चाहिए कि हमे जितनी चीजोकी आवश्यकता है उनमेसे एक भी चीज ऐसी नही है जो हमसे वाहर हो और इस वातका दृढ विश्वास कर लेना चाहिए कि स्वयं हमारे हृदयमे ही वह दैवी स्रोत है जिससे सव प्रकारकी प्यास बुझ जाती है। जव यह तत्त्व हमारी समझमे भली भाँति आ जायगा तव फिर हमे किसी पदार्थकी आवश्यकता ही न रह जायगी। उस समय हम स्वयं उस अनन्त भांडारके मध्यमे पहुँच जायँगे और जव हम अपनी मानसिक स्थिति इस प्रकारकी वना लेंगे, तव हमारी वाह्य या सांसारिक परिस्थिति भी आपसे आप ठीक इसके अनुकूल हो जायगी। क्योंकि अपनी परिस्थिति-योकी सृष्टि हम स्वय ही करते हैं। यदि हम अपने हृदयमे केवल दरि-द्रताका ही अनुभव करे, तो हम अपनी परिस्थितियोको भी उसी दरिद्र-ताके अनुकूल वना लेगे। क्योकि उस समय तो हम केवल यही सोचा और समझा करेगे कि हम विलकुल ही अयोग्य और असमर्थ है और ससारका वैभव या सुख हमारे लिए नही है। और जहाँ हममे यह अस--मर्थता और अयोग्यताका भाव आया कि हम वैभवके योग्य होते हुए भी अयोग्य हो जायँगे। परन्तु यदि हम अपने हृदयमे सम्पन्नता और वैभवके भावकी अच्छी तरह स्थापना कर लेंगे और यह समझने लगेंगे कि हम सव प्रकारसे समर्थ और योग्य है और संसारका सारा सुख और वैभव औरोंके साथ साथ हमारे लिए भी है, तो फिर हम वहुत सह-जमे सुखी और सम्पन्न हो सकेगे। हमे सवसे पहले यह समझना चाहिए कि हम भी उसी ईश्वरके उत्पन्न किए हुए है जिस ईश्वरने ससा--

रके वड़े वड़े धनवानो और लक्ष्मीपात्रोंको उत्पन्न किया है और स्वस्थ, प्रसन्न तथा सम्पन्न रहना हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। वस, अपने मनमें यही भाव रखते हुए हमे सम्पन्नता और सुखकी ओर अग्रसर होना चाहिए। उस समय हम देखेगे कि सम्पन्नता और सुख हमे अपनी गोदमें लेनेके लिए स्वयं आगे वढता हुआ चला आ रहा है। इसके लिए हमे और किसी प्रकारका प्रयत्न करनेकी आवश्यकता नही है। आवश्यकता है केवल अपने मनका भाव वदलनेकी।

ससारमें ऐसे वहुत से लोग होते है जो अपना सारा जीवन सुखी और सम्पन्न होनेकी चिन्तामे ही विता देते हैं; परन्तु जिन्हें कभी जरा भी सुख नहीं मिलता। वे सदा यही अनुभव करते रहते है कि हम अकेले है, हमारा कोई संगी साथी या मित्र नहीं है और हम वड़े ही अभागे है. उनका सारा समय दुनियाकी शिकायत करनेमें ही वीतता है। उनके लेखे मानो ससारमे कोई चीज है ही नहीं, सव चीजोंका टोटा पड़ गया है। अपने सारे प्रयत्नोको वे निरर्थक समझते है। ऐसे लोग भला कव सुखी या सम्पन्न हो सकते है? वे आकांक्षा तो करते हैं किसी और वातका और प्रयत्न करते है किसी और वातका। यदि ऐसे लोग कभी सुखी न हो सके तो इसमें किसीको कुछ आश्चर्य न होना चाहिए। जव हम स्वयं ही अपने आपको दरिद्रताके संकुचित कारागारमे वन्द कर लेगे, तव हम सुखी और सम्पन्न क्या होगे? हमारी दशा ठीक उस पक्षीके समान हो जाती है जो जान वूझकर अपने आपको पिंजड़ेमे वन्द कर लेता है और फिर उससे निकलनेके लिए व्यर्थ पर फड़फड़ाया करता है। वह उसी पिंजड़ेके सीखचोंपर अपने पर और सिर पटकता रहता है, परन्तु उससे वाहर नहीं निकल सकता।

कुछ लोगोंकी प्रकृति ही ऐसी होती है कि उन्हे संसारमे सभी चीजे अच्छी और बहुत अधिक दिखलाई देती है। बस ऐसे ही लोग अपने लिए जो कुछ चाहते है वह सब बहुत ही सहजमे प्राप्त कर लेते है। अपने लिए सभी आवश्यक पदार्थ प्राप्त कर लेना उनके लिए उतना ही सहज होता है जितना कि साँस लेना। उन्हे न तो किसी प्रकारकी शंका होती है, न किसी प्रकारका भय होता है और न अपनी शक्तियोपर अविश्वास ही होता है। वे दृढ, निर्भय, उत्साही और पराक्रमी होते है। उन्हे स्वप्नमे भी इस बातका ध्यान नही होता कि जिस चीजकी हमे आवश्यकता होगी वह हमे न मिलेगी। यदि हमारी प्रकृति ऐसी न हो बल्कि इसके विपरीत हो, तो हमे यही उचित है कि हम भी अभ्यास करके अपनी प्रकृति ऐसी ही बना ले। जब तक हम अपनी प्रकृतिको ठिकानेपर न लावेंगे और अपनी प्रकृतिको ठीक मार्गपर न लगावेगे, तब तक हमे किसी प्रकारकी सफलता हो ही नहीं सकती।

हमे अपने हृदयकी संकीर्णता और अनुदारताका परित्याग कर देना चाहिए और उनके स्थानपर विशालता तथा उदारता ग्रहण करनी चाहिए। हमे यह समझ लेना चाहिए कि हमारी मानसिक स्थिति ही हमे सुखी और सम्पन्न बनानेमे समर्थ है। दीनता और दरिद्रता आदिके विचारोसे हमे अपने आपको बिलकुल दूर रखना चाहिए। हमे विश्वास रखना चाहिए कि हमे जब जिस चीजकी जितनी आवश्यकता होगी तब उतनी चीज हमे स्वयं ईश्वरकी ओरसे मिल जायगी। हम उस परम सम्पन्न और उदार पिताकी प्यारी सन्तान हैं, जो कभी हमें कष्टमे नहीं रखना चाहता और सदा हमारी सब प्रकारकी आवश्यकताएँ पूरी करनेके लिए तैयार रहता है।

जब हमारे मनमें यह भाव अच्छी तरह आ जायगा, तब फिर हम किसी प्रकारके कष्ट या आवश्यकता आदिका कोई अनुभव न करेंगे।

ईश्वरने सबको सम्पन्न और सुखी रहनेके लिए ही बनाया है। उसकी इच्छा यही है कि सब लोग बहुत ही सुखी और सन्तुष्ट रहे। चाहे आज और चाहे दस दिन बाद, वह समय अवश्य आवेगा जब कि संसारके सब लोग राजाओंके समान सुखी और सन्तुष्ट रहेंगे। परन्तु यह बात तभी होगी जब मनुष्यके तुच्छ और संकीर्ण भाव नष्ट हो जायँगे और उसमें परम उच्च भावोंका प्रचार होगा। जब उसमेंसे पशुत्व निकल जायगा और वास्तविक अर्थमें मनुष्यत्व आ जायगा, तब संसारमें कहीं दुःख या दरिद्रताका नाम भी न रह जायगा। इस समय जो लोग सबसे अधिक दुखी और दीन समझे जाते हैं वे भी उस समय सबसे अधिक सुखी और सम्पन्न हो जायँगे। यदि ऐसा न हो तो उस सर्व शक्तिमान् ईश्वरकी सृष्टिका सारा उद्देश्य ही विफल हो जाय।

५—निद्रा ।

मानस शास्त्रके बड़े बड़े ज्ञाता हमे बतलाते है कि जिस समय हम सोने लगते है, उस समय हमारे मनमे जो विचार रहते है वे हमारे सो जाने पर मनमें और भी अधिक वेगपूर्वक संचरण करने लगते हैं। वे यह भी कहते है कि हमारे चेहरेपर जो झुर्रियाँ या बुढ़ापेके दूसरे चिह्न दिखलाई पड़ते है, वे जिस प्रकार हमारी जाग्रत् अवस्थामे बनते है उसी प्रकार हमारे सोनेकी दशामे भी बनते है। इन सब बातोंसे यही निष्कर्ष निकलता है कि सोनेके समय हमारी जो मानसिक अवस्था होती है अथवा हमारे मनमें जो विचार होते हैं, उनका भी हमारे शरीरपर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है।

बहुतसे लोग ऐसे होते है जो दिन भरकी अपनी चिन्ताओ तरद्दुदो और कष्टोकी ही मानसिक वेदनाएँ साथ लेकर सोने जाते है। इसका परिणाम यह होता है कि रातको भी उनका शरीर स्वस्थ और सुखी नही रहने पाता। बल्कि वे चिन्ताएँ आदि रातके समय शरीरपर अपना और भी अधिक घातक प्रभाव डालती है और इस प्रकार वे लोग अन-जानमें ही अपना स्वास्थ्य बहुत बुरी तरहसे बिगाड़ लेते है, और अपनी आयु बराबर क्षीण करते चलते हैं।

हर जगह हजारो लाखो आदमी ऐसे होते है जो दिन भर अपने काममे आवश्यकतासे बहुत अधिक निमग्न रहते है। वे इतना अधिक परिश्रम करते है कि उनका जीवन बिलकुल प्रकृतिविरुद्ध और कृत्रिम सा हो जाता है। ऐसे लोग जब अपना दिनभरका काम समाप्त करके रातको सोनेके लिए जाते है, तब दिन भरकी चिन्ताओ और तरद्दुदोसे

अपना पीछा नहीं छुड़ा सकते। ऐसे लोगोंको या तो जल्दी नींद आती ही नहीं और यदि आती भी है, तो बिलकुल अन्तमें; उस समय आती है जब कि उनका दिमाग हदसे ज्यादा थक जाता है, उनके दिमागका दिवाला निकल जाता है। ऐसे लोग अपने व्यापार व्यवसाय आदिकी इतनी अधिक चिन्ता करते है कि अन्तमे वे यह बात भूल जाते है कि किस तरह आराम करना चाहिए। वे सोनेके समय अपनी सारी चिन्ताएँ भी बिस्तरपर अपने साथ ही ले जाते है। सोनेके समय उनका शरीर और मस्तिष्क चिन्ताओंके बोझसे ठीक उसी तरह दबा रहता है जिस तरह रेगिस्तानमे बोझसे लदा हुआ ऊँट सोया करता है। इसका परिणाम यह होता है कि ऐसे लोग निद्रासे होनेवाले लाभोसे बिलकुल वंचित रह जाते हैं। दिन भरके कठोर परिश्रमके उपरान्त होनेवाला आराम भी उनके लिए आराम नहीं रह जाता।

निद्राका शरीरके लिए सबसे बड़ा उपयोग यह होता है कि दिन भरकी जितनी थकावट होती है वह सब दूर हो जाती है। शरीरके जो अंग दिन भर काम करते करते बिलकुल शिथिल और बेकाम हो जाते हैं, वे निद्राके समय फिरसे सशक्त और काम करनेके योग्य बनते हैं। पर शरीरको निद्रासे होनेवाला यह लाभ तभी पहुँच सकता है जब कि सोनेके समय हमारा दिमाग फिक्रो और तरद्दुदोंकी वजहसे परेशान न हो। परन्तु यदि हम रातके समय भी अनेक प्रकारकी चिन्ताएँ करते करते ही सोएँ, तो परिणाम यह होगा कि रातको सोनेसे पहलेकी हमारी थकावट तो बनी ही रह जायगी और सवेरे जब हम सोकर उठेंगे, तब और भी ज्यादा थके हुए और शिथिल होंगे। परन्तु होना यह चाहिए कि रात भर सोनेके बाद जब हम सबेरे उठें, तब पहले दिनकी हमारी शारीरिक त्रुटियोंकी पूर्ति हो जाय और हममे कार्य करनेके लिए नया

उत्साह तथा नया वल आ जाय। सोनेसे शरीरको जो लाभ होना चाहिए, वह चिन्तित दशामे सोनेसे विलकुल नहीं होने पाता, वल्कि उसका परिणाम और भी उलटा होता है; निद्रा हमारे शरीरको लाभ पहुँचानेके वदले उलटे और भी हानि पहुँचाती है। प्रत्येक समझदार मनुष्यको इस प्रकारकी हानिसे सदा वचनेका प्रयत्न करते रहना चाहिए और ऐसा अभ्यास डालना चाहिए जिसमे शरीर निद्रासे पूरा पूरा लाभ उठा सके।

निद्राके लिए शरीरकी अपेक्षा मनको तैयार करनेकी वहुत वड़ी आवश्यकता होती है। शारीरिक स्नानकी अपेक्षा मानसिक स्नान कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण और आवश्यक होता है। सोनेके समय हमारा सवसे पहला कर्तव्य यह होना चाहिए कि हम दिन भरकी सव प्रकारकी चिन्ताओ और विचारों आदिसे अपना पीछा छुड़ा ले। दिन भर तो इन चिन्ताओ और विचारो आदिका शरीरपर घातकपरिणाम होता ही रहता है, परन्तु रातके समय हमे उनसे विलकुल दूर रहना चाहिए। दिन भर सोचते सोचते दिमागमे जो कूड़ा करकट जमा हो जाता है, रातके समय वह सव निकाल डालना चाहिए और अपना मस्तिष्क विलकुल स्वच्छ कर लेना चाहिए। चिन्ताएँ हमारे मस्तिष्कमे जो अनेक प्रकारकी विकराल मूर्तियाँ ला खड़ी करती हैं, उन मूर्तियोंको हमें अपने मस्तिष्कसे निकाल डालना चाहिए और उनके स्थानपर प्रसन्नतापूर्ण और उत्साहवर्धक मूर्तियोंकी स्थापना कर लेनी चाहिए।

दिन भर चाहे हम कितने ही अधिक चिन्तित, व्यग्र और दुखी क्यों न रहे हों; परन्तु सोनेके समय हमे कभी चिन्तित, व्यग्र और दुःखी न रहना चाहिए। उस समय न तो हमे किसी प्रकारका क्रोध होना चाहिए, न ईर्ष्या होनी चाहिए, और न इस प्रकारका और कोई हानि-कारक भाव होना चाहिए। सोनेके समय कभी त्योरीपर वल नहीं होना

चाहिए और न चेहरेपर किसी प्रकारकी चिन्ता या व्यग्रताका भाव होना चाहिए। हमारी मानसिक शान्तिमें बाधा डालनेवाली जितनी बातें हों उन सबको सोनेके समय दूर भगा देना चाहिए और पूर्ण रूपसे शान्त तथा प्रसन्न होकर सोना चाहिए। केवल इसी प्रकार सोनेसे हम निद्राका पूरा पूरा लाभ उठा सकते हैं। और यदि हम ऐसा न करे तो उस दशामे होनेसे होनेवाला लाभ तो होता ही नहीं उलटे और अनेक प्रकारकी हानियाँ होती है।

यदि दिनके समय कोई अप्रिय या उत्तेजक बात हो जाय, तो उस समय तुम्हे क्रोध आ सकता है या दुःख पहुँच सकता है। परन्तु वह क्रोध कुछ देर बाद शान्त हो जायगा और वह दुःख कुछ देर बाद दूर हो जायगा। पर अब सोनेके समय तुम व्यर्थ उस बातका फिरसे स्मरण करके क्रुद्ध, दुखी या क्षुब्ध क्यो हो? तुम क्यो व्यर्थ अपनी निद्राका नाश करो और क्यो अपने सुखमे बाधक हो? अकारण ही अपने आपको दुखी और क्षुब्ध करनेसे क्या लाभ? दुःख और क्षोभका शरीरपर बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ता है, इससे तो किसीको इन्कार हो ही नही सकता। फिर जान बूझकर वह बुरा प्रभाव और अधिक मात्रामें क्यो ग्रहण किया जाय? जीवन बहुत ही अल्प है। उसका एक क्षण भी व्यर्थ नष्ट नहीं होना चाहिए। और विशेषतः ऐसी बातोंमें तो और भी नष्ट न होना चाहिए जिनका हमारे स्वास्थ्य और मस्तिष्कपर बुरा प्रभाव पड़ता हो और फिर भी जिनका कोई अच्छा नतीजा, कोई शुभ फल न होता हो। उचित तो यह है कि हम अपना सारा समय शान्तिमे ही व्यतीत करे। परन्तु यदि हम किसी कारणसे ऐसा न कर सकते हों, तो कमसे कम सोनेके समय तो शान्त और स्वस्थ रहा करे। जो विचार हमारे सुख और शान्तिके शत्रु हो, उनसे तो

जाग्रत् अवस्थामे ही बहुत दूर रहना चाहिए और सोनेके समय तो उन्हे कदापि इस बातका अवसर न देना चाहिए कि वे हमारे शरीर तथा मनपर और भी अधिक घातक तथा नाशक प्रभाव डाले। इस प्रकारके समस्त विचारोको सोनेके समय धो बहाना चाहिए और बिलकुल निर्मल, शुद्ध तथा शान्त हृदय होकर सोना चाहिए।

यदि हम किसी कारणवश दिनके समय उत्तेजित होकर किसीके साथ कोई मूर्खतापूर्ण व्यवहार कर बैठे हो, किसीके साथ नामुनासिब बरताव कर बैठे हो, किसीसे बदला चुकानेकी फिक्रमे रहे हो, किसीके साथ ईर्ष्या द्वेप करते रहे हो, तो भी कमसे कम रातके समय तो हमे उन सब बातोका विचार दूर कर देना चाहिए और अपने मनको शुद्ध तथा शान्त बना लेना चाहिए। कमसे कम रातके समय तो हमारा मानस-पटल स्वच्छ और शुभ्र रहना चाहिए। सुप्रसिद्ध महात्मा सन्त पालका उपदेश है कि यदि दिनके समय किसीपर क्रोध आ जाय तो भी वह क्रोध सूर्यास्तसे पहले ही शान्त हो जाना चाहिए। यह उपदेश स्वर्णाक्ष-रोमें लिखा जानेके योग्य है और सब लोगोको सदा इसके अनुसार आचरण करना चाहिए।

यदि कोई आदमी बहुत कुछ प्रयत्न करनेपर भी दुष्ट और स्वास्थ्य-नाशक विचारोसे अपना पीछा न छुड़ा सकता हो, तो उसे उचित है कि वह सोनेके समय थोड़ी देरके लिए कोई अच्छी पुस्तक पढने लग जाय। इससे यह लाभ होगा कि धीरे धीरे सब प्रकारकी चिन्ताएँ और क्षोभ दूर हो जायँगे और मनमे बहुत कुछ शान्ति आ जायगी। तुम्हारा चित्त चिन्ताओसे रहित और प्रसन्न हो जायगा। अच्छी पुस्तके पढनेसे तुम जीवनके वास्तविक सौन्दर्यसे परिचित हो जाओगे, और तब तुम अपने दिन भरके अनुचित व्यवहारो तथा कार्यों आदिका स्मरण करके

लज्जित होगे और उनके लिए पश्चात्ताप करने लगोगे । इस प्रकार तुम सोनेके समय अपना मन भी निर्मल और शान्त कर लोगे और कुछ नए उपदेश प्राप्त करके अपना जीवन और आचरण भी कुछ न कुछ सुधार लोगे ।

रातको सोनेके समय प्रत्येक व्यक्तिको अपना हृदय शुभ तथा प्रसन्नतापूर्ण विचारोंसे भर लेना चाहिए और अच्छी अच्छी तथा शुभ बातोंकी आकांक्षा करनी चाहिए । मनमे यह भाव रखना चाहिए कि हम शीघ्र ही बहुत सम्पन्न, सुखी तथा शक्तिशाली होंगे । अपने मनमें उसे अपना आदर्श रखना चाहिए । जिस महात्मा या महानुभावका आचरण हमें बहुत अच्छा जँचता हो; उसके आचरणोका स्मरण और मनन करना चाहिए । बड़े बड़े लोगोके हृदयकी विशालता, उदारता, सहनशीलता, विद्वत्ता, बहुज्ञता, आदिका स्मरण करना चाहिए और इस बातकी आकांक्षा करनी चाहिए कि हम भी ऐसे ही होंगे । इस प्रकारकी बाते सोचने और अपनी मानसिक दृष्टिके सामने उच्च आदर्श खड़े करनेका हमारे शरीर, मन और आचरण आदिपर जो शुभ परिणाम होगा उसका सहजमें वर्णन नही किया जा सकता; वह परिणाम, वह लाभ, वर्णनातीत होगा । थोड़े ही दिनोके अभ्यासके उपरान्त हम देखेंगे कि हमारी मानसिक अवस्थामे बहुत बड़ा और बहुत ही शुभ परिवर्तन हो गया है । जब रातको सोनेके समय जीवनका वास्तविक स्वरूप और उच्च आदर्श हमारी दृष्टिके सामने होगा, तब दूसरे दिन उस आदर्शकी ओर हम कुछ न कुछ अवश्य ही अग्रसर होंगे ।

प्रायः पढे लिखे और कामकाजी लोगोंको हर दम कुछ न कुछ सोचते रहनेकी इतनी ज्यादा आदत पड़ जाती है कि वे रातको सोनेके समय भी बराबर कुछ न कुछ सोचा करते है । कभी कभी ऐसा भी

होता है कि सोचनेकी यह क्रिया जान बूझकर नहीं की जाती, बल्कि आपसे आप होती रहती है। परन्तु आपसे आप होनेपर भी यह क्रिया ऐसी नहीं होती जो थोडा प्रयत्न और अभ्यास करनेसे रोकी न जा सके। जिन लोगोको दिनके समय बहुत ज्यादा काम करना और सोचना पड़ता है, वे सोचनेके इतने अधिक अभ्यस्त हो जाते हैं कि रातको सोनेके समय भी, और सो जानेपर भी, उतनी ही तेजीके साथ सोचते रहते है जितनी तेजीके साथ दिनके समय सोचा करते है। इस प्रकार उनका सोना और न सोना दोनो बराबर हो जाता है। ऐसे लोग जब दूसरे दिन सोकर उठते है, तब वे उतने ही थके हुए और शिथिल होते हैं, जितने कि सोनेके समय थे। ऐसे आदमियोकी शारीरिक तथा मानसिक शक्तियोका बहुत शीघ्रतापूर्वक और बड़े वेगके साथ ह्रास होता है। उनका दिमाग भी खराब हो जाता है और शरीर भी। ऐसे लोगोके लिए सबसे अच्छा उपाय यही है कि ज्यो ही वे अपना दिन भरका काम समाप्त करे त्यो ही अपने मस्तिष्कका काम भी समाप्त कर दे। ज्यो ही वे अपनी दूकानके किवाड़ बन्द करे, त्यो ही अपने दिमागके भी किवाड़ बन्द कर दे। उन्हे उसी समयसे अपने विचारोको काम काजकी चिन्तासे हटा कर दूसरी ओर लगाना आरम्भ करना चाहिए। काम काज समाप्त करनेके उपरान्त जिस प्रकार दिन भरके पहने हुए कपड़े उतारकर रख दिए जाते है, उसी प्रकार दिन भरकी सोची हुई बातोका बोझ भी मस्तिष्क परसे उतारकर रख देना चाहिए। अपने मित्रो या बाल-बच्चोके साथ बात चीत करने या घूम फिरकर अपना मनोविनोद करने लग जाना चाहिए। किसी तरहके खेलमे लग जाना चाहिए या कुछ पढने लिखने लग जाना चाहिए। मतलब यह कि दिन भर जो काम किया हो वह काम बिलकुल छोड़ देना चाहिए और किसी

दूसरे हलके काममे लग कर अपनी प्रवृत्ति किसी दूसरी ओर कर लेनी चाहिए। मतलब यह कि जिस गड्ढेमे आदमी दिनभर पड़ा रहा हो, उस गड्ढेसे बिलकुल बाहर निकल आना चाहिए और अपना मन उसकी ओरसे बिलकुल हटाकर किसी दूसरी ओर लगा लेना चाहिए। खुली और साफ हवामे टहलने लग जाना चाहिए और प्रकृतिकी शोभा देखने लग जाना चाहिए। कोई ऐसा शुभ और उपयोगी व्यसन लगा लेना चाहिए जिससे मन बहले और प्रफुल्लित हो। हमे अपने मन और विचारोका दास नही हो जाना चाहिए, बल्कि उनपर अपना पूरा पूरा अधिकार रखना चाहिए। स्वयं उनके कहनेमे न चल पड़ना चाहिए, बल्कि धीरे धीरे उनको अपने अधीन और शासनमे लानेका प्रयत्न और अभ्यास करना चाहिए।

प्रत्येक व्यक्तिको यह उचित है कि वह अपने सोनेके कमरेमे किसी ऐसे उपयुक्त स्थानपर, जहाँ बराबर नजर पड़ती रहे, किसी तख्ती या मोटे कागज आदिपर बड़े बड़े अक्षरोंमे यह लिखकर टाँग दे,—यहाँ कोई बात सोचनी नही चाहिए।

सोनेसे कुछ देर पहले ही सब प्रकारका सोचना, विचारना बन्द कर देना चाहिए। मनमे किसी प्रकारकी चिन्ता या उद्वेग आदि न रहने देना चाहिए, और किसी अगपर किसी प्रकारका जोर न रहने देना चाहिए। जब मन और शरीरको इस प्रकार पूरा पूरा आराम मिलेगा, तब नीद बहुत ही सहजमे और तुरन्त आ जायगी। उस समय सोनेमे उतनी देर भी न लगेगी जितनी कि छोटे बच्चोको लगती है और वह नींद, शरीर और मनको, सब प्रकारसे सुखी और प्रफुल्लित कर देगी। बहुतसे लोगोको इसी प्रकार सोनेके समय सोचते सोचते उन्निद्र रोग हो जाता है, जिससे उनका शरीर और स्वास्थ्य बहुत जल्दी

नष्ट हो जाता है। इस उन्निद्र रोगसे बचनेके लिए सब लोगोको पहलेसे ही इस प्रकारका अभ्यास डाल रखना चाहिए कि जिसमें बराबर बेखटके नीद आ जाया करे और उन्निद्र रोग होनेकी सम्भावना ही न रह जाय।

सोनेके समय सब प्रकारकी चिन्ताओंसे अलग रहनेका अभ्यास डालना कुछ सहज काम नहीं है। यह भी एक प्रकारकी कला है और इसके लिए बड़े अभ्यासकी आवश्यकता है। सोनेसे पहले हमें इतना अधिक प्रसन्न और निश्चिन्त हो जाना चाहिए कि मानो हम ईश्वरके समीप पहुँच गए है और हमे स्वर्गीय सुख मिल रहा है। उस समय मनमे नामके लिए भी किसी प्रकारका राग, द्वेष, चिन्ता, फिक्र न रह जानी चाहिए। क्योकि यही सब बाते मनकी शान्तिमे बहुत अधिक बाधा पहुँचानेवाली हुआ करती है। प्रत्येक व्यक्ति अच्छी अच्छी पुस्तके पढ़कर और अच्छे लोगोके साथ बैठकर अपना मनोविनोद कर सकता है, और अपने मन तथा शरीरको सोनेके लिए उपयुक्त अवस्थामे ला सकता है।

जब आप इस प्रकार निश्चिन्त और प्रसन्न होकर सोएँगे, तब सबेरे उठनेपर अपने शरीरकी स्वस्थता और मनकी प्रफुल्लता देखकर आपको बहुत आश्चर्य होगा। आप देखेगे कि शरीरमे थकावटका कही नाम न रह जायगा और शरीरमे एक नया उत्साह और नया जीवन आया हुआ जान पड़ेगा। तब आप अपने दैनिक कार्योंमें बहुत तत्परतासे उद्यत हो जायँगे और पहलेकी अपेक्षा कहीं अधिक काम करने लगेगे। धीर धीरे इसके और भी शुभ परिणाम दिखाई देने लगेगे। मनसे भय, आशंका और चिन्ता आदिका सदाके लिए नाश हो जायगा। विचार दिनपर दिन उच्च और शुद्ध होते जायँगे तथा इसी प्रकारके और भी अनेक लाभ होंगे। यौवनके सुखका अच्छी तरह

अनुभव होने लगेगा, जल्दी बुढापा न आने पावेगा और आयु भी बहुत कुछ बढ जायगी। कमसे कम जीवन भारस्वरूप तो न मालूम होगा। स्वास्थ्य भी सुधरने लगेगा और चरित्र भी। जब मनमे दुष्ट विचार कम आवेगे और अच्छे विचार ही अपना काम करेगे, तब समस्त जीवनमे बहुत ही शुभ और वांछनीय परिवर्तन हो जायगा।

प्रत्येक व्यक्तिमे दैवी अश होता है। यदि हम निश्चिन्त और सुखी होकर सोएँ तो उस अशकी बहुत सहजमे और आपसे आप उन्नति हो जायगी। ससार हमारे लिए पहलेसे कहीं अच्छा और रहनेके योग्य हो जायगा। हमारी बहुत सी कठिनाइयाँ भी आपसे आप दूर हो जायँगी। हममे हर एक बातको सोचने और समझनेकी शक्ति भी बहुत बढ जायगी। बड़े बड़े गणितज्ञो, वैज्ञानिको और ज्योतिषियोने इसका अनेक बार अनुभव किया है। जिन प्रश्नोकी मीमांसा वे बहुत दिनो तक बहुत कुछ परिश्रम करके भी नही कर सकते थे, उन प्रश्नोका निराकरण अच्छी और पूरी नीदमे आपसे आप हो गया।

आजकलका विज्ञान हमे निश्चित रूपसे यह बात बतलाता है कि हमारी बहुतसी नैतिक शिक्षा और चरित्र-गठन निद्रावस्थामे आपसे आप, हमारे अनजानमे हुआ करता है। बात यह है कि सोनेके समय हमारे मनकी जो अवस्था रहती है वह बराबर सबेरे तक बनी रहती है। उस समय जो भाव हमारे मनमे रहते है, वही रातके समय आपसे आप हमारे मनमे पुष्ट होते रहते है। अब यदि हम सोनेके समय अपने विचार शुद्ध, शान्त और उच्च कर ले तो हमारे शरीर तथा आचरणपर उसका जो प्रभाव होगा उसका अनुमान प्रत्येक समझदार आदमी स्वयं ही बहुत सहजमें कर सकता है। पाश्चात्य देशोमे ऐसे बहुत से आदमी है जि-

 इसी प्रकारका अभ्यास करके अपने स्वास्थ्य तथा आचरण आ-

द्धिमें आश्चर्यजनक परिवर्तन तथा उन्नति कर ली है। सोनेसे पहले लगातार कुछ दिनो तक उन्होने जिस आदर्शका चित्र अपनी मानसिक दृष्टिके सामने रक्खा है, थोड़े ही दिनोमे वे स्वयं भी उस आदर्श तक पहुँच गए है।

यदि हम दरिद्र हो और हमें अपना तथ अपने परिवारका निर्वाह करना बहुत ही कठिन जान पड़ता हो, तो हमे उचित है कि हम रातको सोनेसे पहले अपने मनमें यह धारणा कर ले कि परमात्मा बहुत दयालु और उदार है और वह सब लोगोको उनकी आवश्यकताकी सभी चीजे बहुत सहजमे और आपसे आप पहुँचा दिया करता है और यह समझकर हमे स्वयं अपने सम्बन्धमे भी निश्चिन्त हो जाना चाहिए। इसका परिणाम यह होगा कि सवेरे हममे नये उत्साह, नये बलका संचार हो जायगा और हमारे निर्वाहमे होनेवाली कठिनाइयाँ दिनपर दिन आपसे आप कम होती जायँगी और कुछ दिनों बाद तो ऐसा होगा कि वे कठिनाइयाँ कहीं नामको भी न रह जायँगी और हमारी नैतिक तथा आर्थिक अवस्था बहुत ही उन्नत हो जायगी। सोनेके समय हमें कष्टों और दरिद्रता आदिका ध्यान नहीं करना चाहिए बल्कि सुखो और सम्पन्नता आदिका ध्यान करना चाहिए। इससे हमारी अन्तरात्मामे सुख और सौभाग्य आदिका नया भाव आ जायगा, जो दिनपर दिन बढ़ता जायगा और अन्तमे हमे सुखी तथा सम्पन्न बना देगा।

यदि हममे किसी प्रकारकी दुर्बलता या दोष हो तो हमे उचित है कि सोनेके समय उस दुर्बलता या दोपका ध्यान बिलकुल छोड़ दे, और उसके ठीक विपरीत अपने बल और गुणका ध्यान करे। यदि हम कायर हो तो हमे वीरताका ध्यान करना चाहिए और यदि हमारा हृदय संकीर्ण हो तो हमे उदारताका ध्यान करना चाहिए। इस प्रकार

ध्यान करनेका परिणाम यह होगा कि वीरता या उदारता आदिका आविर्भाव हो जायगा और उस दुर्बलता या दोपसे हमारा पीछा छूट जायगा। इस प्रकार हम सहजमें अपनी सब त्रुटियाँ दूर कर सकेंगे और अपने आपमे पूर्णता तथा श्रेष्ठता ला सकेंगे।

वालकोंपर इस क्रियाका और भी सहजमे तथा उत्तम प्रभाव पड़ता है। प्रायः सभी देशोमे और सभी जातियोमें यह नियम है कि वालकोको सुलानेसे पहले हर प्रकारसे प्रसन्न करते हैं। हमारे यहाँ भी वच्चोको सोनेसे पहले अनेक प्रकारकी अच्छी अच्छी कहानियाँ और लोरियाँ आदि सुनानेकी प्रथा है। पढ़ी लिखी या समझदार माताऐं सोनेसे पहले अपने वच्चोको अनेक प्रकारके अच्छे अच्छे उपदेश देती है, अच्छे अच्छे पुरुषोंके आख्यान सुनाती हैं और उनमे शुभ तथा श्रेष्ठ भाव भरनेका प्रयत्न करती है। इन सब वातोका कोमलहृदय वालकोपर वहुत ही अच्छा प्रभाव पड़ता है। सोनेसे पहले वे जो वातें सुन लेते हैं वे वातें निद्रावस्थामे उनके हृदयपर दृढतापूर्वक अंकित होने लगती है जिनका उनके भावी जीवन तथा आचरण आदिपर वहुत ही अच्छा प्रभाव पड़ता है। जो माताएँ अज्ञानवश अथवा और किसी कारणसे अव तक ऐसा न करती रही हो उन्हे उचित है कि वे आगेसे सोनेके समय अपने वालकोंको प्रसन्न करने और अच्छी अच्छी वातें वतलानेका प्रण कर लें। इस प्रकार वे उन्हे जाग्रत अवस्थाकी अपेक्षा निद्रावस्थामें और भी अधिक तथा उत्तम शिक्षा दे सकेंगी। जाग्रत अवस्थामे दी हुई शिक्षाओ और उपदेशों आदिका वालकोंपर पूरा पूरा प्रभाव पड़े या न पड़े, परन्तु सोनेसे पहले दी हुई शिक्षाओं तथा उपदेशों आदिका वालकोंपर अच्छा प्रभाव पड़ता हुआ देखा गया है। जगनेमें तो वच्चा किसी प्रकारकी प्रतिक्रिया भी कर सकता है परन्तु

निद्रावस्थामे उसके लिए किसी प्रकारकी प्रतिक्रिया करना असम्भव हो जाता है और उपदेश तथा शिक्षाएँ उसके हृदयपर प्रत्यक्ष रूपसे और दृढ़तापूर्वक अपना काम करती है। वल्कि आजकल तो पाश्चात्य देशोमे इन वातोने एक प्रकारसे शास्त्रका रूप धारण कर लिया है। वहाँ केवल दुष्ट वालकोके आचरणके सुधारके लिए ही नहीं वल्कि उनके अनेक शारीरिक रोगोको दूर करनेके लिए भी इन तत्त्वोका व्यवहार किया जाता है।

वहुत से वालक प्रायः डरपोक होते है और भूत प्रेत आदिसे वहुत डरते है। कुछ वालक ऐसे भी होते है जो सोए सोए डरकर जाग उठते है। यदि ऐसे वालकोको सोनेसे पहले यह वतला दिया जाय कि भूत प्रेत कोई चीज नहीं या उन्हे अच्छी तरह यह समझा दिया जाया करे कि तुम सोए सोए व्यर्थ डरकर उठ वैठा करते हो, तुम्हे किसी वातसे डरनेकी कोई आवश्यकता नही है, हम सव लोग तुम्हारे पास ही रहते है, तुम निश्चिन्त होकर सोओ और रातको डरकर जाग मत उठना, तो इन सव वातोंका उस वालकपर वहुत अच्छा प्रभाव पड़ेगा और थोड़े दिनोमे उसका डरकर जाग उठना वन्द हो जायगा। इसी प्रकार जो वालक पढने लिखनेमे सुस्त या कमजोर हो अथवा जो जल्दी किसी वातको समझनेमे असमर्थ हो, उन्हें भी सोनेके समय वाञ्छनीय उपदेश देकर, उनके मनमे आशा तथा दृढता उत्पन्न करके, पढने लिखनेमें तेज और समझदार तथा चतुर वनाया जा सकता है। जिस समय वालक सोने लगे और उसे कुछ कुछ नींद आ रही हो, उस समय भी उसे वारवार अच्छी वाते वतलाते चलना चाहिए। उस समय यह न समझना चाहिए कि अव तो यह सो रहा है, यह कुछ सुनता ही नहीं। ऐसा समझना भारी भूल है। जव तक वह गहरी नींदमे अच्छी तरह सो न जाय, तव तक यही समझकर उसे उपदेश देते

रहना चाहिए कि मानो वह जाग रहा है। उस अर्ध-निद्रित अवस्थामें उसे जो उपदेश दिया जायगा उसका उसके कोमल चित्तपर और भी अधिक प्रभाव पड़ेगा, और जाग्रत अवस्थामे दिए हुए उपदेशोकी अपेक्षा उसका कही अच्छा फल देखनेमे आवेगा। जाग्रत अवस्थामे तो वह कोई वात सुनकर भी अनसुनी कर सकता है, अपनी इच्छाके विरुद्ध कोई उपदेश होनेपर उसका विरोध कर सकता है अथवा इधर उधर खेल कूदमे उसे बिलकुल भुला सकता है; पर सोनेके समय अर्ध-निद्रित अवस्थामे वह इन सबमेसे एक भी काम नहीं कर सकता। फल यह होता है कि उस समय उससे जो कुछ कहा जाता है, उसे वह तत्काल ग्रहण कर लेता है और प्रकृति उसे उसके हृदयपटलपर और भी दृढतापूर्वक अकित कर देती है। जो माताएँ इस प्रकारकी क्रियाएँ करती हैं, उनके बालक बहुत सहजमे और बहुत जल्दी सभ्य, समझ-दार और होशियार हो जाते है। इस प्रकार धीरे धीरे बालकोमे बहुत से गुण, वहुत सी अच्छी बाते लाई जा सकती है और उनके सब प्रकारके दोष दूर किए जा सकते है।

हम तो अपने पाठकोसे यही प्रार्थना करेगे कि वे अधिक नहीं तो महीने दो महीने तक तो अवश्य सोनेके समय यह क्रिया करके देखे। तब उन्हे जान पड़ेगा कि निद्रामे हमारा शरीर और चरित्र कितना अधिक बनता है और कितने सहजमें बहुत से अच्छे अच्छे गुण प्राप्त किए जाते हैं। इस प्रयोगसे लोगोंका स्वास्थ्य भी सुधर सकता है, चरित्र भी बन सकता है और सुख सौभाग्य आदिकी भी वृद्धि हो सकती है। सदा खूब प्रसन्न और निश्चिन्त होकर सोओ और अपने यह दृढ निश्चय कर लो कि हमारी आत्मा रातके समय हमे और अधिक शुद्धाचारी और बलवान् बनावेगी। निश्चय कर लो कि रातके

समय कोई दुष्ट विचार हमारे पास फटकने भी न पावेगा और सब प्रकारके अच्छे विचार आपसे आप आ कर हमारे हृदयमे प्रवेश कर जायँगे। परमात्मा हमारा मंगल करेगा और हमे अधिक योग्य तथा समर्थ बनावेगा। विफलता दरिद्रता या रोग आदि हमसे दूर रहेंगे और हमारा मन सदा अच्छे कामोकी ही ओर रहेगा। हमारे लिए जो कुछ होगा, वह सब शुभ और अच्छा ही होगा और तब तुम देखोगे कि थोड़े ही दिनोमे ये सब बाते प्रत्यक्ष रूपसे तुम्हारे सामने आ जायँगी। उस समय तुम्हें यह देखकर बहुत अधिक आश्चर्य होगा कि निद्राका, मनुष्यके स्वास्थ्य, आचरण और स्वभाव आदिपर, कैसा अच्छा और कितना अधिक प्रभाव पड़ता है।

६—मानसिक अवस्था और आरोग्य

अब तक जो कुछ बतलाया गया है उससे पाठकोने यह बात अच्छी तरह समझ ली होगी कि हमारे शारीरिक स्वास्थ्यका हमारी मानसिक अवस्थाके साथ कितना घनिष्ठ सम्बन्ध है, और हमे जो रोग आदि होते है वे प्रायः हमारे शारीरिक अपराधो और मानसिक दोपोंके फलस्वरूप ही होते है । परन्तु इन सबके पारस्परिक अमूल्य सम्बन्धका महत्त्व शायद बहुत ही थोड़े आदमियोने पूरी तरहसे समझा होगा । अतः इस प्रकरणमे यह बतलानेका प्रयत्न किया जायगा कि जब तक मनमें रोगयुक्त विचार उत्पन्न होते रहेंगे तब तक पूर्ण आरोग्यता प्राप्त होना नितान्त असम्भव है ।

हमारे आरोग्यका वास्तविक मूल हमारी वासनाओ और विचारो आदिमे ही होता है । यदि हमारे विचार और हमारी वासनाएँ अच्छी होंगी, तो हमारा शरीर भी पूर्ण रूपसे स्वस्थ और नीरोग रहेगा और यदि वे विचार और वासनाएँ दूषित होगी, तो हम भी रोगी और अस्वस्थ रहेगे । जिस व्यक्तिकी मानसिक दृष्टिके सामने सदा अपवित्र, दूषित और गन्दे चित्र रहेंगे वह व्यक्ति स्वयं कभी पूर्ण पवित्र और शुद्ध नहीं हो सकता । इसी प्रकार जिस व्यक्तिके विचार दूषित होगे वह कभी स्वस्थ और नीरोग न रह सकेगा । मतलब यह कि यदि मनमे किसी प्रकारका रोग या विकार रहेगा, तो शरीर कभी नीरोग और निर्विकार न रह सकेगा ।

यदि स्वास्थ्यका स्रोत कहींसे दूषित होता है, तो वह स्वयं अपने स्थानसे ही दूषित होता है और उसका वह उद्गम स्थान हमारा

विचार और हमारा आदर्श है। वैज्ञानिकोने अनुसन्धान करके इस बातका पता लगाया है कि हमारी विशिष्ट मनोवृत्तियोका हमारे विशिष्ट अवयवोंपर विशिष्ट परिणाम होता है । बहुत अधिक स्वार्थपरता, लोभ और द्वेष आदिका हमारी प्लीहा और यकृतपर एक विशेष प्रकारका परिणाम होता है । जिस व्यक्तिको गुरदे या मूत्राशयकी कोई बीमारी हो, वह यदि किसीके साथ बहुत अधिक घृणा करे अथवा किसीपर बहुत अधिक क्रोध करे, तो उसका वह रोग बहुत अधिक बढ जायगा । मत्सर और डाहका हमारे जिगर या पित्ताशय और हृदयपर बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ता है । यदि हमारे मनमे किसी प्रकारका भय या चिन्ता हो, तो तुरन्त ही हमारे हृदयपर उसका प्रभाव होता हुआ दिखाई देगा । उस समय हमारे हृदयकी गति या तो तीव्र हो जायगी और या मन्द पड़ जायगी । इन क्रियाओका परिणाम यह होगा कि हमारे शरीरमे रक्तका सचार कम हो जायगा, जिसके फलस्वरूप हमारी पाचनक्रिया ठीक तरहसे न हो सकेगी। इसी प्रकार खिन्नता और द्वेप आदिका भी कुछ कुछ ऐसा ही परिणाम देखनेमे आता है। संसारमे हजारो लाखो आदमियोकी मृत्यु केवल इसलिए हृदयसम्बन्धी रोगोसे हो गई है कि उनके मनमे सदा अनेक प्रकारके दूपित और गर्हित भाव उठा करते थे ।

कई बडे बड़े अनुभवी डाक्टरोने बतलाया है कि मानसिक चिन्ता और खेदसे ही अनेक प्रकारके बड़े बड़े और विकट रोग हुआ करते हैं। यदि उनकी सम्मतियोको एक स्थानपर एकत्र किया जाय, तो एक अच्छी पुस्तिका तैयार हो सकती है । इसी प्रकार यह भी बतलाया गया है कि मनोवृत्तियोंका हमारी त्वचापर यथेष्ट प्रभाव पड़ता है। एक डाक्टरने कहा है कि जब दिमागपर किसी तरहका बहुत ज्यादा जोर

पड़ता है, तब शरीरमे अनेक प्रकारके चर्म रोग हो आते है। मिरगी और सनक आदिका हमारी मानसिक अवस्थासे बहुत अधिक सम्बन्ध है। अनेक प्रकारके रोगोका, अनेक प्रकारकी मनोवृत्तियोके साथ जो घनिष्ठ सम्बन्ध देखनेमे आता है वह केवल काकतालीय न्यायसे नहीं हो सकता; क्योकि ऐसे एक नही, अनेक उदाहरण देखनेमे आते हैं। इन सब बातोका परिणाम यह हुआ है कि अब बड़े बड़े डाक्टरोका ध्यान इस विषयकी ओर विशेष रूपसे आकृष्ट हुआ है और वे इनका विशेष रूपसे अनुसन्धान करने लगे है। प्रोफेसर एलमर गेट्सने इस सम्बन्धमे अनेक प्रकारके प्रयोग करके सिद्ध किया है कि जो लोग बहुत अधिक क्रोध और मत्सर करते है अथवा जिनके मनमे इसी प्रकारके और अनेक नीच मनोविकार उत्पन्न होते है, उनके शरीरमे बहुत अधिक विषाक्त द्रव्य उत्पन्न हो जाते है। परन्तु जो लोग सदा प्रसन्न रहते है और जिनके हृदयमे सदा उच्च मनोविकार ही उत्पन्न होते रहते है, वे लोग ऐसे विषाक्त द्रव्योंसे बिलकुल बचे रहते है। यही नही बल्कि उनके शरीरमे बहुत अधिक पोषक तथा बलवर्धक द्रव्य उत्पन्न होते रहते हैं, जो उनकी जीवनी शक्तिको सदा उत्तेजित करते रहते हैं। इनमेसे क्रोधका विष तो सबसे अधिक भयंकर और नाशक होता है। जिस समय कोई आदमी बहुत अधिक क्रोधमें हो, उस समय यदि उसका थोड़ासा रक्त किसी छोटे जन्तुके शरीरमे प्रविष्ट कर दिया जाय, तो वह जन्तु थोड़ी देरमे मर सकता है। कई ऐसे उदाहरण देखे गए है जिनमें क्रुद्ध माताका दूध पीकर बच्चे मर गए हैं। इसी प्रकारकी और भी बहुत सी बाते है जिनसे यह अच्छी तरह सिद्ध होता है कि शरीरको स्वस्थ और नीरोग रखनेके लिए मनको शान्त और प्रसन्न रखनेकी बहुत बड़ी आवश्यकता है।

जो आदमी सदा रोगकी ही चिन्ता करता रहेगा, वह भला क्या स्वस्थ और नीरोग होगा। जिसका सब कुछ अपूर्णतापर ही निर्भर होगा वह भला कैसे पूर्ण हो सकेगा। इसलिए यदि हम सदा स्वस्थ और नीरोग रहना चाहते हों तो हमें उचित है कि हम सदा अपने सामने पूर्ण स्वास्थ्य और आरोग्यका आदर्श रक्खें। जिस प्रकार हम अपने आपको और अनेक प्रकारके पापोंसे और अपराधोंसे बचाते हैं, उसी प्रकार हमें अपने आपको सब प्रकारके दूषित और नाशक विचारोंसे भी बचाना चाहिए। बहुतसे लोगोंकी आदत हुआ करती है कि वे स्वस्थ और नीरोग होनेपर भी अपने आपको रोगी समझा करते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि बहुधा उन्हें वही रोग हो भी जाता है, जिसकी वे कल्पना करते रहते हैं। हम एक ऐसे पढ़े लिखे भले आदमीको जानते हैं जिनकी शारीरिक और मानसिक अवस्था बहुत अच्छी थी, परन्तु जिन्होंने मानसिक रोगोंके सम्बन्धकी केवल एक पुस्तक पढ़कर ही अपने पीछे एक बहुत बुरा मानसिक रोग लगा लिया था। उस पुस्तकमें सैकड़ों प्रकारके मानसिक रोगोंका वर्णन था। वे हर प्रकारके मानसिक रोगोंके लक्षण अपने आपपर घटाने लगे। संयोगसे दो एक रोगोंके लक्षण—चाहे गलत तरहसे और चाहे सही तरहसे—उनपर घट गए, और उनकी दृढ़ धारणा हो गई कि हमें अमुक मानसिक रोग है। परिणाम यह हुआ कि उन अच्छे भले आदमीको सचमुच वह रोग हो गया और बरसों तक उससे पीछा छुड़ानेमें वे असमर्थ रहे। इसलिए यदि हम चाहते हों कि हमें अमुक रोग न हो तो हमें कभी उस रोगका ध्यान भी न करना चाहिए। यदि कभी संयोगवश हम किसी रोगसे ग्रस्त भी हो जायँ तो भी हमें कभी उस रोगके सम्बन्धमें कोई पुस्तक न पढ़नी चाहिए और न उस रोगके लक्षण अपने आपपर घटाने

चाहिए। प्रायः सभी देशोके बड़े बड़े चिकित्सक और अच्छे अच्छे चिकित्साग्रंथ रोगियोको अपने सम्बन्धके रोगोकी जाँच पड़ताल करने और उनके लक्षणो आदिका विवरण पढनेसे मना करते हैं। इसका मुख्य कारण यही है कि उन लक्षणो आदिको पढकर मनमे जो भाव उत्पन्न होते हैं, वे उस रोगको और भी अधिक भयंकर बना देते है और उस दशामें रोगीका उस रोगसे मुक्त होना और भी कठिन हो जाता है। इससे भी यही सिद्ध होता है कि हमारी मानसिक अवस्थाका हमारी शारीरिक अवस्थापर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है।

यदि आप अच्छे अच्छे पुस्तकालयोंके दस पाँच पुस्तकाध्यक्षोसे मिले और उनसे पूछे तो आपको पता चलेगा कि चिकित्साशास्त्र-सम्बन्धी पुस्तके माँगनेवाले पाठकोकी संख्या बहुत अधिक होती है। ऐसी पुस्तके पढकर लोग उनमे बतलाए हुए लक्षणोको अपने ऊपर घटाने लगते है। परिणाम वही होता है जो हमने ऊपर मानसिक रोगोंसे सम्बन्ध रखनेवाली पुस्तकके पढनेवाले भले आदमीका बतलाया है। जो लोग साधारण विद्या बुद्धिके होते हैं उनके स्वास्थ्यपर इस प्रकारकी पुस्तके पढनेका बहुत नाशक प्रभाव हुआ करता है। वे अपने सम्बन्धमे राईका पर्वत और तिलका ताड़ बना लिया करते है। यदि उन्हे जरासा भी कहीं दर्द हुआ तो वे उसे शूल या गठिया समझ बैठते है और उस दशामे वे वास्तविक रोगके आनेसे पहले ही इतने अधिक भयभीत हो जाते हैं कि मानो स्वयं उस रोगको निमन्त्रित कर बैठते हैं। इसीको कहते हैं—आ बला मेरे गले लग।

यदि ऐसे लोगोंके वंशमे किसी बड़े बूढेको कोई विकट रोग हो चुका होता है, तो उसका उनपर और भी भीषण परिणाम होता है। वे समझने लगते है कि यह रोग अवश्य ही हमारे शरीरमे है और यदि

इस समय नहीं है तो शीघ्र ही हुए बिना न रहेगा । बस, मनमे इस प्रकारका भाव उदित होते ही शरीर रोगी होने लगता है और पहले तो वही रोग और नहीं तो फिर कोई और दूसरा विकट रोग उन्हे आ-घेरता है। उनका शरीर रोगका घर हो जाता है और वे किसी कामके नहीं रह जाते। उन्हे सदा मृत्युका भय लगा रहता है और वे मानो स्वयं ही दौडकर मृत्युके पास पहुँचने लगते है। उन्हे सदा इस बातका खटका लगा रहता है कि हम, अब मरे तब मरे । अब यदि ऐसे आदमी असमयमे ही मर जायँ, तो इसमे आश्चर्यकी कौनसी बात है ?

जो लोग सदा अपने रोगी होनेकी ही चर्चा किया करते है और जिनके हृदयमे अपने रोगी होनेकी दृढ धारणा होती है, वे रोगी होनेके सिवा और कुछ हो ही नहीं सकते । परन्तु यदि ऐसे लोग अपने विचा-रका प्रवाह बदलकर उसे विपरीत दिशामे ले जायँ, तो वे बिना किसी प्रकारके औषध आदिका व्यवहार किए ही बहुत शीघ्र और बहुत सह-जमे नीरोग हो सकते है। हृदयमे केवल स्वास्थ्य और आरोग्यका ध्यान रखनेसे बहुतसे रोगोकी चिकित्सा आपसे आप हो जाती है। संसारमे स्वास्थ्यका विचार ही सबसे बडा रोगनाशक औषध है।

बहुतसे ऐसे लोग होते है जो अपने मित्रोसे मिलते ही सबसे पहले अपने अस्वस्थ या रोगी होनेका ही रोना रोया करते है। वे कहते हैं, आज हमारी तबीयत ठीक नहीं जान पडती, आज तो हमे बुखार सा मालूम होता है, आज तो भोजन ठीक तरहसे नहीं पचा, आजकल सुस्ती बहुत बढ गई है, आजकल हम बहुत कमजोर हो गए हैं, कल रातको हमे नींद नहीं आई, इससे आज तबीयत कुछ भारी है। आदि आदि। भला जिन लोगोंके हृदयमे दिन रात इसी प्रकारके विचार रहते हो वे

क्या स्वस्थ और नीरोग होगे। प्रत्येक व्यक्तिको सदा अपने स्वास्थ्यके वकीलके रूपमे रहना चाहिए। उसे कभी अपनी तन्दुरुस्तीकी शिकायत नही करनी चाहिए बल्कि सदा यही कहते रहना चाहिए कि हमारा स्वास्थ्य बहुत ठीक और बहुत अच्छा है। उसे अपने स्वस्थ होनेके सम्बन्धमे अधिकसे अधिक प्रमाण सदा अपने पास प्रस्तुत रखने चाहिए और यथाशक्ति अपने अच्छे स्वास्थ्यकी बराबर वकालत करते रहना चाहिए। इसका परिणाम यह होगा कि वह जल्दी कभी बीमार ही न पड़ेगा और सदा नीरोग तथा स्वस्थ रहेगा। अपने स्वास्थ्यकी इस प्रकार सदा वकालत करते रहनेका जो शुभ परिणाम होगा वह बहुत ही आश्चर्यजनक होगा।

एक बार एक रोगीको एक डाक्टर साहब देखनेके लिए गए। उस रोगीकी अवस्था कुछ चिन्ताजनक थी, इसलिए उसे देखते ही डाक्टर साहब हताश और निराशसे हो गए। उस समय तो कुछ नही बोले, पर जब वे अपनी फीस लेकर चलने लगे तब उन्होने बाहर बरामदेमें आकर उस रोगीकी सेवाशुश्रूपा करनेवाली दाईसे कहा कि यह रोगी किसी प्रकार बच नहीं सकता। सयोगसे डाक्टर साहबकी बात उस रोगीके कानमे पहुँच गई। परन्तु वह रोगी समझदार था और डाक्टर-साहबकी गोलियोकी अपेक्षा अपने मानसिक बलपर अधिक विश्वास रखता था। जब वह दाई लौटकर उसके पास आई तब उसने बहुत ही दृढतापूर्वक उससे कहा, "डाक्टर साहबने जो कुछ कहा है वह ठीक नहीं है। मै कभी नहीं मरूँगा और जल्दी ही बिलकुल अच्छा हो जाऊँगा।" हुआ भी ऐसा ही। थोड़े ही दिनोमे वह बिलकुल नीरोग हो गया। उसने अपनी मानसिक शक्तिसे ही अपनी चिकित्सा कर थी।

यदि हम अपने मनसे दुर्बलता और रोग आदिका विचार बिलकुल निकाल दे और अपने आपको बराबर बलवान् और नीरोग समझते रहे, तो अवश्य ही हम सदा रोग और दुर्बलता आदिसे बहुत दूर रहेगे। यदि हम सदा सब प्रकारके दोषो, पापो और दुष्कृत्यो आदिसे बचे रहे, अपने मनको सदा शुद्ध पवित्र और उच्च रक्खे, सदा अच्छे आदर्शोंपर दृष्टि रक्खे, और अपने मानसिक बलसे भली भाँति परिचित हो तो शायद कभी कोई रोग हमारे पास नहीं फटक सकता। कभी न कभी वह समय अवश्य आवेगा जब कि केवल शुद्ध विचारोसे ही सब प्रकारके रोगोकी चिकित्सा हुआ करेगी और जब कि किसी रोगी आदमीको देखकर लोग कहेगे कि इसने किसी न किसी प्रकारका मानसिक पाप या अपराध किया है। सुप्रसिद्ध विद्वान् हम्बल्टने कहा है—"एक वह समय आवेगा जब कि बीमार होना बड़े अपमानकी बात समझा जायगा और जब कि लोग किसी रोगीको देखकर कहेगे कि यह इसके किसी मानसिक पापका परिणाम है।" वह ऐसा समय होगा जब कि शुद्ध और बलवान् हृदयके लोगोपर रोग अपना कोई प्रभाव ही न डाल सकेगा। क्योकि उस समय सब लोग यह तत्त्व अच्छी तरह समझ लेगे कि जिनके विचार शुद्ध और पवित्र होते है वे कभी रोगी नहीं हो सकते। पहले लोग यही समझा करते थे कि बदहज्मी और अतिसार आदि रोग पेटमे किसी प्रकारकी गडबड़ी होनेके कारण हुआ करते है। पर अब लोग यह समझने लगे हैं, कि इन रोगोका कारण रोगीके विचारोकी गड़बड़ी है। जिन लोगोकी मानसिक अवस्था ठीक नहीं रहती, उन्हे ही इस प्रकारके रोग हुआ करते है। अब यह बात सिद्ध हो गई है, कि अतिसार रोग बहुत अधिक चिन्ता, दुःख और ईर्ष्या आदिका ही परिणाम है। इसी प्रकार और भी अनेक रोगोके विषयमे समझना

चाहिए। यद्यपि अभी तक लोगोने यह बात नही समझी है कि मानसिक विकारो आदिका शरीरपर क्या परिणाम होता है, पर शीघ्र ही लोग यह समझ लेगे कि मनमे किसी प्रकारका दुर्भाव लाना ही मानो अपने आपको रोगी बनाना है।

हमे कभी अपने मनमे यह नहीं समझना चाहिए कि हमारे शरीरमे अमुक प्रकारके कीटाणु है और वे हमारा स्वास्थ्य नष्ट करनेकी ताकमे है। इस प्रकारके जितने विचार है वे सब हमारे स्वास्थ्यके लिए स्वय उन कीटाणुओकी अपेक्षा कहीं अधिक हानिकारक है। यही नही बल्कि सब प्रकारके दुर्भाव, सब प्रकारके दूषित मनोविकार—जैसे ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध, घृणा, लोभ, स्वार्थपरता आदि—भी हमारी पाचन क्रिया और रक्त संचालन आदिमे अनेक प्रकारके विकार और दोष उत्पन्न करते है, जिनके परिणामस्वरूप हमे अनेक प्रकारके रोग आदि होते है। वास्तवमे हमारे मनमे ही हमे नीरोग रखनेकी सबसे अधिक शक्ति है। यदि हमारे मनमे किसी प्रकारका रोग या विकार है तो हमारा शरीर कभी नीरोग या निर्विकार नही रह सकता। यदि हमारे विचारमे किसी प्रकारकी दुर्बलता या दोष है तो हमारा शरीर कभी सबल और निर्दोष नहीं रह सकता। जब तक हम अपने स्वास्थ्यके सम्बन्धमे किसी प्रकारका सन्देह या चिन्ता करते रहेगे, जब तक हम अपने मनमे रोगी होनेका भाव रक्खेगे और जब तक हमारा स्वास्थ्यसम्बन्धी आदर्श त्रुटिपूर्ण रहेगा तब तक हमारा पूर्ण स्वस्थ रहना असम्भव है। हमे यह बात अपने मनमे बहुत अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि हमारा जीवन और स्वास्थ्य सदा हमारे मन और विचारका ही अनुकरण करता हुआ चलता है।

हम लोग बाल्यावस्थासे पढने लिखने और अनेक प्रकारके काम सीखनेमे बहुत कुछ परिश्रम और व्यय करते है। यह सब परिश्रम और

व्यय केवल इसी लिए होता है कि हमारा जीवन सुखपूर्ण हो। हम यह भी जानते है कि यदि हमारा सब काम ठीक और व्यवस्थित ढंगसे होगा, तो हम सुखी और सफल हो सकेगे। हम जिस काममे पूर्ण सफल होना चाहते है, वह काम बहुत अधिक सोच विचारकर करते है। परन्तु हमारे जिस स्वास्थ्य-पर हमारा सर्वस्व अवलम्बित होता है, उसे ठीक रखनेके लिए हम कोई ठीक प्रयत्न नही करते। यह कितनी बड़ी लज्जाकी बात है? क्यो न हम अपने स्वास्थ्यके सम्बन्धमे भी वैसी ही अच्छी अच्छी भावनाएँ करे और क्यो न हम बराबर यही सोचा करे कि हम बहुत ही स्वस्थ और नीरोग है और सदा ऐसे ही रहेगे?

हमारी सब प्रकारकी शक्तियाँ केवल हमारे स्वास्थ्यपर ही निर्भर करती है। यदि हम पूर्ण रूपसे स्वस्थ रहे तो हमारी सब शक्तियाँ दूना और चौगुना काम करती है। केवल स्वस्थ रहने पर ही हम अपने सब कामोंमे सफल हो सकते है और यथेष्ट नाम तथा धन कमा सकते है। तो फिर क्यो न हम अपना स्वास्थ्य सदा ठीक रखनेका पूरा पूरा उद्योग करते रहे। जिस प्रकार मजबूत और भारी मकान बनानेके लिए अच्छी और गहरी नीवकी आवश्यकता होती है, उसी प्रकार चरित्र और जीवन बनानेके लिए भी नीवकी आवश्यकता होती है और वह नीव हमारा स्वास्थ्य ही है। अपना स्वास्थ्य ठीक रखनेके लिए हमे बिल-कुल वैज्ञानिक और बुद्धिमतापूर्ण उपायोका अवलम्बन करना चाहिए। हमे सदा यही समझना चाहिए कि हम स्वस्थ है और सदा स्वस्थ रहेगे। हमे कभी अपने रोगी होनेकी कल्पना या चर्चा तक न करनी चाहिए और सदा अपनी दृष्टिके सामने स्वास्थ्यका बहुत अच्छा आदर्श रखना चाहिए। हमे समझ लेना चाहिए कि स्वास्थ्यका हमारे नैतिक आचारसे बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध है और व्यवस्थापूर्ण रहन सहनसे ही हम स्वस्थ

रह सकते है। हमे अपने मनपर पूरा पूरा अधिकार रखकर अपने स्वास्थ्यको नष्ट होनेसे बचाना चाहिए।

विश्वासका स्वास्थ्यके साथ वहुत घनिष्ठ सम्बन्ध है। यदि हम रोगी होनेपर किसी ऐसे चिकित्सककी चिकित्सा करे जिसपर हमारा कुछ भी विश्वास न हो, तो उसकी चिकित्सासे हमे कभी कुछ भी लाभ न होगा। तो फिर क्यो न हम स्वयं ही उस विश्वाससे अपना स्वास्थ्य सुधारनेका काम ले? यदि हम अपने मनमे स्वस्थ होनेका दृढ निश्चय रक्खेगे, तो फिर हम सहसा कभी अस्वस्थ न होगे। परन्तु, जब तक हम अपने स्वास्थ्यके सम्बन्धमे किसी प्रकारकी आशंका या सन्देह करते रहेगे, तब तक हम कभी स्वस्थ न रह सकेंगे। जिस प्रकार माली अपने बागको स्वच्छ रखनेके लिए उसमेसे सब प्रकारके निरर्थक झाड़ झंखाड़ और घास फूस आदि निकालकर फेक देता है, उसी प्रकार हमे भी अपना स्वास्थ्य ठीक रखनेके लिए सब प्रकारके दुष्ट विचारोको अपने हृदयसे निकाल देना चाहिए। हमे समझ लेना चाहिए कि यही दुष्ट विचार हमारे स्वास्थ्यके लिए अधिक घातक और नाशक हैं।

यदि हम केवल अस्वस्थ होनेके कारण ही ससारमे अपने महत्त्वपूर्ण कर्तव्योका ठीक तरहसे पालन न कर सके तो मानो हम अपनी अयोग्यता सिद्ध करते है। इससे प्रमाणित होता है कि हममे किसी प्रकारकी दुर्वलता और दोष है। वहुतसे ऐसे समझदार लोग भी होते है जो अपने आपको रोगी और अस्वस्थ कहते हुए लज्जित होते है; क्योकि वे जानते है कि रोगी या अस्वस्थ होना हमारे नैतिक और मानसिक पतनका लक्षण है। उससे सिद्ध होता है कि हमने प्रकृतिका कोई न कोई अपराध किया है। क्योंकि बिना प्रकृतिका अपराध किए कभी कोई रोगी हो ही नहीं सकता। प्रकृतिने हमे सदा स्वस्थ और नीरोग रहनेके लिए

बनाया है। पर साथ ही हमारे लिए कुछ विशिष्ट नियम भी बना दिए है। जब हम उन नियमोका उल्लंघन करते हैं, तभी हम रोगी होते है। हमारी सृष्टि बहुत बडे बड़े काम करनेके लिए हुई है और यदि हम अव्यवस्थित रूपसे रहकर अपने आपको रोगी और उन कार्योंको सम्पन्न करनेके अयोग्य हो जायँ, तो हम ईश्वरके सामने कितने बड़े अपराधी ठहरते है! हमारे जीवनका जो मुख्य उद्देश्य है वह अवश्य पूरा होना चाहिए और यदि वह किसी कारणसे पूरा नहीं होता है, तो उसके लिए हम अपराधी हैं। हम तो सदा सुखी और स्वस्थ रहनेके लिए बनाए गए है। परन्तु, यदि इतनेपर भी दुखी और अस्वस्थ रहे, तो इसमें हमारे अतिरिक्त और किसका अपराध है?

जिस समय हमे अपने ईश्वरांशका पूरा पूरा ज्ञान हो जायगा, उस समय हम कभी रोगी न होगे। उस समय हमें अपने आपको रोगी कहनेमे भी उतनी लज्जा और संकोच होगा, जितना कि हमे अपने आपको चोर या बदमाश कहनेमे होता है। हममे एक ऐसी शक्ति है जो न तो कभी जन्म लेती है, न कभी रोगी होती है और न कभी नष्ट होती है। परन्तु हम उस शक्तिका ठीक ठीक उपयोग करना नहीं जानते और इसी लिए हम रोगी रहते हैं। परन्तु, जब हमे उस शक्तिका पूरा पूरा ज्ञान हो जायगा, तब हम उसका ठीक ठीक उपयोग न कर सकनेके कारण अवश्य लज्जित होंगे। परमात्माने हमे वह शक्ति, अपना वह अंश, इसी लिए दिया है कि उसके द्वारा हमारा शरीर सदा ठीक बना रहे और बराबर अपना पूरा पूरा काम किया करे। यदि यह तत्त्व हमारी समझमे अच्छी तरह आ जाय, तो फिर हमारे पूर्ण रूपसे सुखी और स्वस्थ रहनेमें किसी प्रकारका सन्देह नहीं हो सकता। परन्तु, जब तक हम यह तत्त्व न समझेगे तब तक कभी सुखी और स्वस्थ भी न रह

सकेगे। वस यही हमारे स्वास्थ्य और जीवनका मूल तत्त्व है और इसे ही सब लोगोंको भली भाँति हृदयंगम कर लेना चाहिए।

मन ही मनुष्य है। वही वास्तवमें जीवन है। सदा स्वस्थ और सुखी रहनेका सवसे अच्छा और एक मात्र उपाय यही है कि हम अपने आपको ईश्वरका अंश समझ कर सदा सुख और स्वास्थ्यकी ही कामना और चिन्तन किया करे। हमें अपने मनमे इस वातका दृढ़ विश्वास कर लेना चाहिए कि संसारकी कोई शक्ति हमे उस ईश्वरांशसे पृथक् नहीं कर सकती और न हमे रोगी या दुःखी कर सकती है। हमे सदा यह भी विश्वास रखना चाहिए कि सारे विश्वमें एक मात्र ईश्वरीय तत्त्व ही सर्वशक्तिमान् है और वह सदा हमारे पक्षमे है। उसींसे सव पदार्थोंकी सृष्टि होती है और जिसके पक्षमे इतनी वड़ी शक्ति हो, वह कभी रोगी या दुखी नहीं हो सकता।

मानस-चिकित्सा

प्रो० एल्मर सी० गेट्सने अनेक प्रकारके प्रयोग करके यह सिद्ध किया है कि मनुष्यके मनमे जितने प्रकारके विकार उत्पन्न होते है, उन सवके कारण शरीरके रासायनिक द्रव्योमे किसी न किसी प्रकारका परिवर्तन होता है। जितने दुष्ट मनोविकार होते है, उन सबसे हानिकारक और विषाक्त रासायनिक तत्त्व उत्पन्न होते है और जितने सुन्दर तथा शुद्ध मनोविकार होते है उनसे हमारे शरीरका पोपण करनेवाले और वल वढानेवाले रासायनिक तत्त्व उत्पन्न होते है । हमारे मनमे उत्पन्न होनेवाला प्रत्येक विकार हमारे मस्तिष्कके कोपाणुओमे एक प्रकारका विकार उत्पन्न करता है और वह विकार वहुत कुछ स्थायी रूपसे हमारे शरीरमे अपना घर कर लेता है।

उक्त प्रोफेसर महोदयका यह भी कहना है कि प्रत्येक व्यक्ति कमसे कम एक घटे तक अपने मनमे सुन्दर शुभ और आनन्ददायक विचार उत्पन्न करके अपने मन तथा शरीरकी वहुत अच्छी रचना कर सकता है। जिस प्रकार लोग अपना शरीर स्वस्थ रखनेके लिए नित्य नियमित रूपसे किसी न किसी प्रकारका व्यायाम करते है या टहलते है, उसी प्रकार नित्य और नियमित रूपसे अपने मन और शरीरके कल्याणके लिए उन्हे यह मानसिक व्यायाम भी अवश्य करना चाहिए। इस मानसिक व्यायामके लिए केवल यही आवश्यक है कि हम कुछ समयके लिए क्रोध, मत्सर, द्वेप, स्वार्थ और घृणा आदिके दूषित विचारोंको बिलकुल निकाल दें और उनके स्थानपर दया, सहानुभूति, परोपकार आदि कोमल और आनन्ददायक वृत्तियोंकी स्थापना करे। यह व्यायाम

नित्य प्रति एक घंटेसे डेढ घटे तक और नियमित रूपसे होना चाहिए। प्राय: एक मास तक नियमित रूपसे यह व्यायाम करनेके बाद बहुत ही आश्चर्यजनक परिणाम देखनेमे आवेगा। शारीरिक और मानसिक दोनो प्रकारकी क्रियाओंपर इस व्यायामका बहुत ही अच्छा प्रभाव पड़ेगा।

शारीरिक स्वास्थ्य नष्ट करनेमे यों तो तमाखू या सिगारेट, भाँग, शराव, गाँजा और अफीम आदि पीना या और अनेक प्रकारके अनाचार करना वहुत कुछ सहायक हुआ ही करता है, पर इसके अतिरिक्त उसके नाशके और भी अनेक उपाय तथा साधन हैं। क्रोधसे हमारे थूकमे ऐसा भीषण विप उत्पन्न होता है जो कुछ अधिक तीव्र होनेपर हमारे प्राण तक ले सकता है। इसी प्रकार और भी अनेक ऐसे मनोवेग है जिनके सहसा और अधिक मानमे उदय होनेसे, थोड़ी ही देरमे हृदय बहुत अधिक दुर्बल हो जाता है और कभी कभी आदमी मर भी जाता है। जब हम बहुत जल्दी जल्दी चलते या सीढियाँ चढ़ते हैं, तब हमारा श्वास जल्दी जल्दी चलने लगता है, हमारा हृदय धड़कने लगता है, और शरीरमे पसीना निकलने लगता है। इसी प्रकार, जब हम कोई बहुत बड़ा अपराध करते हैं और हमारे पकड़े जानेकी आशका होती है, तब भी हमारा श्वास बहुत तीव्र गतिसे चलने लगता है, हमारा हृदय धड़कने लगता है और हमे पसीना आ जाता है। परन्तु वैज्ञानिकोंने बहुत कुछ अनुसन्धान करके यह पता लगाया है कि श्वासकी इन दोनो गतियो, हृदयकी इन दोनो धड़कनो और दोनो पसीनोंमे बहुत अधिक अन्तर है। कुछ वैज्ञानिकोने कई ऐसे वैज्ञानिक और रासायनिक उपाय निकाले है, जिनकी सहायतासे वे किसी आदमीके पसीनेसे ही यह बात जान लेते हैं कि वह पसीना अधिक परि-

श्रम करनेके कारण हुआ हैं अथवा कोई भीषण अपराध करनेके कारण। अपराधियोके पसीनेमे, जब एक विशेप प्रकारका क्षार डाला जाता है, तब वह पसीना तुरन्त पीले रंगका हो जाता है। परन्तु साधारण परिश्रम करनेपर जो पसीना होता है, उसमे वह क्षार डालनेसे उसका रंग नहीं बदलता।

प्रोफेसर गेट्स कहते है कि मान लीजिए कि एक कमरेमे दस बारह आदमी बैठे है। उनमेंसे किसीका चित्त उद्विग्न है, किसीको अपने किसी दुष्कृत्यके कारण पश्चात्ताप हो रहा हैं, कोई बडा भारी द्वेपी हैं, किसीका स्वभाव बहुत चिडचिडा हैं, कोई सदा प्रसन्न रहनेवाला है और कोई दयालु तथा परोपकारी है। यदि उन सब आदमियोका पसीना अलग अलग लेकर, रासायनिक प्रयोगोसे परीक्षा की जाय, तो बिलकुल निश्चित रूपसे और ठीक ठीक यह मालूम हो जायगा कि कौनसा पसीना किस स्वभाव तथा प्रकृतिके आदमीका है।

शायद यह बात तो सभी लोग जानते हैं, कि अनेक अवसरोपर बहुतसे लोगोके प्राण सिर्फ डर दहशतके मारे ही निकल गए हैं और कदाचित् विज्ञ पाठकोको यह भी बतलानेकी आवश्यकता न होगी कि अनेक अवसरोपर केवल साहससे ही मनुष्यमे बहुत अधिक बल आ जाता है। यदि किसी घोड़े या कुत्तेपर क्रोध करके उसे डरा दिया जाय, तो उसकी नाड़ीकी गति तुरन्त ही बहुत मन्द पड जाती है। इससे सिद्ध होता हैं कि भयका शरीरपर परिणाम होता है। यदि भयका पशुओंपर इतना अधिक प्रभाव पड़ता है, तो हम सहजमे समझ सकते है कि कोमल बालकोंपर उसका क्या प्रभाव पड़ता होगा। कभी कभी केवल रातभर शोक करनेसे ही लोगोंकी बहुत बुरी दशा हो जाती है। इसी प्रकारकी और भी अनेक ऐसी बातें बतलाई जा सकती है जिनसे

सिद्ध होता है कि मनोविकारोका शरीरपर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है ।

महान् पुरुष वही है जो अपने मन और मनोविकारोपर शासन करना जानता हो। ऐसा आदमी क्रोध आनेके समय तुरन्त अपनी मनोवृत्ति बदल लेता है और क्रुद्ध नहीं होता बल्कि प्रसन्न रहता है। ऐसा आदमी जब अपने सामने किसी प्रकारका प्रलोभन देखता है तो उसकी ओरसे तुरन्त मुँह फेर लेता है। यदि कभी ईर्ष्या करनेका अवसर आता है तो उसके स्थानपर वह अपने मनमें प्रेम और उदारता ले आता है । ऐसे आदमीके मनमे जव किसी प्रकारकी क्रूरताका भाव आने लगता है तब वह सहानुभूति दिखलाने लग जाता है । मतलब यह कि जव कभी कोई दुष्ट मनोभाव उत्पन्न होनेको होता है तव वह उसके विपरीत कोई सुन्दर भाव अपने मनमे ले आता है और इस प्रकार अपने शरीरको उस दुष्ट मनोभावके भीपण विपसे रक्षित रखता है। जब किसी प्रकारका विप किसीके शरीरमे प्रविष्ट कर जाता है तब योग्य डाक्टर ऐसा औषधोपचार करते हैं, जिससे उस विषकी शक्ति बिलकुल नष्ट हो जाय और उसका कोई प्रभाव न रह जाय । मनमे किसी प्रकारका दुर्भाव उत्पन्न होनेपर ठीक ऐसी ही प्रतिक्रिया करनी चाहिए। प्रसन्नतासे दुःख और चिन्ताके विपका नाश होता है। प्रेम और सहानुभूतिसे घृणा तथा ईर्ष्याका विष नष्ट होता है । स्वास्थ्यके विचार और कल्पनासे रोगके विचारके विपका नाश होता है । इसी प्रकार प्रत्येक प्रकारका विष उसके विपरीत भावसे नष्ट होता है। ज्यो ही मनमे यह विपरीत भाव उत्पन्न होता है त्यो ही दुष्ट विचारका विष नष्ट होने लगता है।

वालकोको जिस प्रकार और सब तरह तरहकी विद्याएँ सिखाई जाती है, उसी प्रकार उन्हे यह भी सिखाया जाना चाहिए कि मनमे बुरे भाव

लानेका शरीरपर क्या दुष्परिणाम होता है और उस दुष्परिणामसे बच-नेके लिए किस प्रकारकी प्रतिक्रियाएँ करनी चाहिएँ। यदि लोगोको आरम्भसे ही इस प्रकारकी शिक्षा मिलने लगे, तो संसारमे रोग, दुःख और पीड़ा आदिका कहीं न नाम भी न रह जाय। उस दशामे न तो हमें इतने रोगी देखनेको मिले और न इतने चिकित्सालय। न इतने अपराधी देखनेको मिले और न इतने जेलखाने। न इतने मनहूस दिख-लाई पड़ें और न इतने पागल। न इतने हत्यारे दिखलाई पड़ और न इतने आत्महत्या करनेवाले।

प्राय: लोग यह वात नहीं जानते कि मनमे किसी प्रकारका मनोभाव उत्पन्न होनेपर क्या क्या क्रियाएँ होती है और उनका हमारे शरीरपर क्या प्रभाव पड़ता है और इसी लिए अधिकांश लोगोके मन और शरीरमें अनेक प्रकारके विप उत्पन्न हो जाते है जिनके परिणामस्वरूप अनेक प्रकारके रोग, अपराध तथा इसी प्रकारके दूसरे अनर्थ देखनेमे आते है। हम अपने मानसिक दोपोंके कारण स्वयं ही शरीर तथा मन विपाक्त कर लेते है और यह नहीं जानते कि हमारे स्वास्थ्य तथा सामाजिक कल्या-णके लिए हमारा यह अज्ञान कितना अधिक हानिकारक है और हम अपने मनकी अवस्था ठीक न रखकर अपना, ईश्वरका तथा समाजका कितना वड़ा अपराध करते है। हम यह भी नहीं जानते कि हमारे शरीरमें जो विप उत्पन्न हो जाते है उनका किस प्रकार नाश करना चाहिए और उनके दूपित प्रभावसे अपने आपको किस प्रकार वचाना चाहिए। परन्तु यही सवसे वड़ी और ऐसी विद्या है जिसका जानना प्रत्येक व्यक्तिके लिए वहुत ही आवश्यक है और जिसका ज्ञान न होनेके कारण ही संसारमे इतनी विपत्तियाँ और दुःख दिखाई पड़ते हैं।

जो लोग अधिक क्रोध, शोक, दुःख, चिन्ता, ईर्ष्या और द्वेष आदि करते है वे प्रायः युवा और अधेड़ अवस्थामे ही बिलकुल वृद्ध और क्षीणकाय दिखाई पड़ते है। कभी कभी तो इस प्रकारके तीव्र दुष्ट मनोवेगोके कारण लोग हफ्ते दो हफ्ते या महीने दो महीनेमे ही मर जाते हुए भी देखे गए है। कारण यही है कि इन मनोवेगोसे भीषण विष उत्पन्न होते है जिन्हे हमारा शरीर सहन नही कर सकता और फलतः प्राण निकल जाते है। यदि ऐसे विषोका प्रभाव दूर करनेवाली बहुत ही सहज क्रियाओका लोगोको पूरा पूरा ज्ञान हो जाय, तो संसारका बहुत अधिक कल्याण हो सकता है। यदि हमे ज्वर अथवा और किसी प्रकारका रोग होता है तो उसकी चिकित्सा करनेके लिए हमे किसी डाक्टर या वैद्यके पास जाना पड़ता है। परन्तु दुष्ट मनोवेगोके कारण उत्पन्न होनेवाले विषोकी चिकित्साके लिए तो हमे कही दूर जानेकी कोई आवश्यकता ही नही है। उनकी चिकित्सा तो स्वयं हमारे पासमे ही मौजूद रहती है और स्वयं हमारे हाथमे ही रहती है। यदि ऐसी सुगम और उत्तम चिकित्साके अपने पास रहते हुए भी हम उससे लाभ न उठा सके तो यह हमारी कितनी बड़ी मूर्खता है।

जिस प्रकार जलकी सब प्रकारकी अपवित्रता और गन्दगी किसी न किसी प्रकारकी वैज्ञानिक क्रियासे नष्ट की जा सकती है, उसी प्रकार दूषित मनोविकारोसे शरीर तथा मस्तिष्कमे उत्पन्न होनेवाले विप भी किसी न किसी मानसिक क्रियासे ही अवश्य दूर किए जा सकते है। यदि थोड़ा सा गरम पानी हो और उसमे बहुत सा ठंडा पानी मिला दिया जाय तो वह गरम पानी भी ठंडा हो जाता है। यदि हमारे मनमें थोड़ा सा विषाद उत्पन्न हुआ हो और उस समय हम अपने मनको बहुत अधिक प्रसन्न कर ले तो विषादसे उत्पन्न होनेवाला विष आपसे

आप नष्ट हो जायगा । मानसिक क्रियाओसे उत्पन्न होनेवाले विपोका प्रभाव दूर करनेके लिए हमे अपने मनमे तुरन्त ही विपरीत, सुन्दर और शुभ विचार लाने चाहिए जिससे कोई विप अधिक वढने ही न पावे और उत्पन्न होते ही नष्ट हो जाय । यदि हम यह सिद्धान्त अच्छी तरह जान जायँगे तो फिर न तो हम दुखी या खिन्न ही होगे और न दुर्वल या रोगी ही ।

सवसे पहले प्रेमको ही लीजिए । एक प्रेम भावसे ही हम अनेक प्रकारके विप दूर कर सकते हैं । स्वार्थपरता, लोभ, घृणा, द्वेप, ईर्ष्या, प्रतिहिंसा, पापपूर्ण वासना आदि अनेक दुष्ट मनोविकारोके विष अकेले प्रेम भावसे ही दूर हो सकते है और इस प्रकार इसी एक शुभ भावके द्वारा हम अनेक प्रकारकी मानसिक तथा शारीरिक पीड़ाओसे वहुत सहजमे वच सकते है । यदि हम अपने मनमे प्रेम, उदारता, सहानुभूति, प्रसन्नता, साहस, निर्भयता आदि अच्छी अच्छी वातोको स्थान दे रक्खे, तो फिर उनके विपरीत दुष्ट भाव स्वयं ही हमारे पास न आ सकेगे । जहाँ पूर्ण प्रकाश पहलेसे ही उपस्थित होगा वहाँ भला अन्धकार कैसे और क्या करने आवेगा ? इसी प्रकार जिस हृदयमें पहलेसे ही अच्छे अच्छे भाव उपस्थित होगे उस हृदयमे दुष्ट भाव कैसे प्रवेश कर सकेगे ? और जब दुष्ट भाव मनमें प्रवेश ही न कर सकेगे तो फिर उनका विष भी उत्पन्न न हो सकेगा और हमें उसके दूर करनेकी भी आवश्यकता न रह जायगी । आग बुझानेकी लिए पानीकी आवश्यकता होगी; पर जहाँ पहलेसे ही पानी होगा वहाँ आग क्या लगेगी ?

अधिकांश लोग बुरी वातो और बुरे भावोंसे दूर तो अवश्य रहना चाहते है, पर वे सव अपने मनमे अच्छी अच्छी वातें और अच्छे अच्छे भाव

नहीं लाना चाहते। वे अन्धकारको तो भगाना चाहते हैं पर उसके स्थानपर प्रकाश लाना नहीं चाहते और यही सबसे बड़ी कठिनता है। वे यह नहीं समझते कि जबतक मनमे प्रेम उत्पन्न न किया जायगा तबतक घृणा या ईर्ष्या द्वेष दूर ही नहीं हो सकता। जिस व्यक्तिके साथ हम घृणा करते हो उसके साथ तबतक हम बराबर घृणा करते रहेगे जबतक हमारे हृदयमे उसके प्रति प्रेमका भाव उत्पन्न न होगा। यदि हम किसी कारणसे भयभीत हो गए हो तो हम तबतक भयभीत ही रहेंगे जबतक अपने मनमे साहस न उत्पन्न करेगे। इसलिए हमें केवल बुरी बातोको दूर करनेका ही प्रयत्न न करना चाहिए, केवल इतनेसे ही हमारा काम न चल सकेगा; बल्कि उन बुरी बातोको हटानेके लिए हमे उनके स्थानपर अच्छी बातोकी स्थापना करनी होगी और तभी हम उन बुरी बातोको दूर करनेमे सफल हो सकेगे।

मनकी उपमा एक उपजाऊ भूमिसे दी जा सकती है। यदि हम उसमे बुरी बातोका बीज बोएँगे तो उसमे अधिकाधिक बुरी बाते ही उत्पन्न होती जायँगी और यदि हम उसमे अच्छी बातोंको स्थान देंगे तो फिर अच्छी ही बातोंकी वृद्धि होती जायगी। जब मनमे एक बार कोई अच्छा भाव भली भाँति स्थापित हो जाता है तब वह धीरे धीरे आपसे आप और भी अच्छी बाते ले आनेका प्रयत्न करता है। यदि हम और सब बातोको छोड़कर सदा प्रसन्न ही रहनेका अभ्यास कर ले और दृढ़ निश्चय कर ले कि हम सदा सभी दशाओमे प्रसन्न ही रहेगे तो भी हमारे मार्गकी अधिकांश कठिनाइयाँ आपसे आप दूर हो जायँगी। उस दशामें जब हमारे मनमें किसी प्रकारका दूषित भाव आने लगेगा तब हम सोचेंगे कि इस दूषित भावका परिणाम हमारे लिए दुःखदायक होगा। बस यही सोचकर हम उस बुरी बातसे दूर रहेगे, क्योंकि हम

पहलेसे ही सदा प्रसन्न रहनेकी दृढ प्रतिज्ञा कर चुके है। अथवा यदि हम एक मात्र सत्यको ही अपने हृदयमें स्थान दे और प्रण कर लें कि हम सत्यसे कभी विचलित न होंगे, तो भी हम अनेक प्रकारके दोषों और दुःखोसे अनायास ही दूर रहा करेंगे। सत्यकी प्रतिज्ञा न तो हमें झूठ बोलने देगी न किसीकी चोरी करने देगी, न किसीकी निन्दा करने देगी और न इसी प्रकारका और कोई दुष्कर्म करने देगी। फिर उस सत्यकी कृपासे हममे और भी अनेक प्रकारके शुभ गुण आने लगेगे। हम न तो कायर हो सकेंगे, न सशंकित रहा करेगे और न किसीके साथ ईर्ष्या या द्वेष ही करेगे। मतलब यह कि हृदयमे पहले किसी एक शुभ गुणको पूर्ण रूपसे स्थान दे लेना चाहिए और प्रतिज्ञा कर लेनी चाहिए कि वह शुभ गुण हम कभी अपने हाथसे न जाने देगे। इस प्रतिज्ञाका स्वयं तो बहुत कुछ शुभ परिणाम होगा ही, पर साथमे हममें और भी अनेक शुभ गुण आ जायँगे और धीरे धीरे हम सब प्रकारके दुर्गुणोसे सदाके लिए रक्षित हो जायँगे। हमें तो इससे जो लाभ होगा वह होगा ही, पर साथ ही हमारे समाजको भी इससे अनेक लाभ होगे। हमारी देखादेखी हमारे बहुतसे मित्र भी हमारे पथका अनुसरण करने लगेगे। मतलब यह कि यदि हम केवल किसी एक गुणको भी अपने हृदयमे स्थान दे, तो उससे पहले तो स्वयं हमारे मनमे अनेक प्रकारके गुण उत्पन्न होगे और तब हमारे द्वारा हमारे समाजमें भी उन गुणोका यथेष्ट प्रचार होने लगेगा। एक बीजसे सहजमे सैकड़ो हजारो सुन्दर फल उत्पन्न होने लगेगे। तो फिर क्यों न प्रत्येक व्यक्ति अपने मनमे ऐसे सुन्दर बीजोका आरोपण करे और क्यों न अपना तथा अपने समाजका बहुत बड़ा कल्याण करे?

बहुतसे लोग प्रायः यही समझते है कि विचारोका सम्बन्ध केवल मस्तिष्कसे ही है। विचारकी जितनी क्रियाएँ और प्रतिक्रियाएँ होती है वे सब केवल मस्तिष्कमे होती है और उनका शेष सारे शरीरके साथ किसी प्रकारका सम्बन्ध नही होता। परन्तु यह समझना बहुत ही भ्रम-पूर्ण है। वास्तविक बात यह है कि विचारका हमारे सारे शरीरके साथ बहुत ही घनिष्ठ सम्बन्ध है। यदि हम यह कहे कि एक प्रकारसे हमारा सारा शरीर ही मस्तिष्कमय है, तो भी कोई अत्युक्ति न होगी। शरीर-शास्त्रके पंडितोने परीक्षा और अनुभव करके देखा है कि बहुतसे अन्धे आदमियोकी उँगलियो तकमे वही तत्त्व होता है जो साधारण लोगोके मस्तिष्कमे होता है। बहुतसे अन्धे ऐसे होते है जो केवल हाथसे छूकर ही अपने मित्रोको पहचान लेते है, चीजोंके रंग बतला देते हैं, और इसी प्रकारके और ऐसे अनेक काम करते है जो साधारण लोग केवल मस्तिष्कसे ही कर सकते है। इससे तथा इसी प्रकारके और अनेक अनुभवोसे यह सिद्ध होता है कि विचार केवल मस्तिष्कका ही व्यापार नही है, बल्कि वह हमारे समस्त शरीरका व्यापार है। हमारा सारा शरीर ही मानो एक विशाल मस्तिष्क है। जो विचार हमारे मस्तिष्कमे उत्पन्न होता है वह तुरन्त ही आपसे आप हमारे सारे शरीरमे व्याप्त हो जाता है। कोई भयानक पदार्थ या दृश्य देखते ही शरीर थरथर काँपने लगता है और कोई विशेष आनन्दकी बात होते ही सारे शरीरमे रोमांच हो आता है। यहाँतक देखा गया है कि विशेष दुःखद समाचार सुननेके कारण मस्तिष्क और हृदयकी क्रियाओके अतिरिक्त पाचनक्रिया तकमे बाधा पहुँचती है। यहाँतक कि बहुत अधिक शोकका समाचार सुननेके कारण कुछ लोगोके बाल कुछ घंटोमे ही पक गए हैं। इन सब बातोसे यही सिद्ध होता है कि जो भाव या विचार मनमे उत्पन्न

होता है, उसका प्रभाव केवल मस्तिष्क तक ही परिमित नहीं रहता वल्कि सारे शरीरमे व्याप्त हो जाता है। अतः हमे यह भी समझ लेना चाहिए कि जिस बात या क्रियासे कोई एक अंग पीड़ित या विकारयुक्त होता है, उस बात या क्रियासे हमारे शेष समस्त अंग भी पीड़ित या विकारयुक्त हो जाते हैं। अतः यह सिद्ध हुआ कि हमारे मनमे उत्पन्न होनेवाले प्रत्येक विचारके परिणामस्वरूप या तो हमारे शरीरमें किसी प्रकारके बल आदिकी वृद्धि होती है और या किसी प्रकारका ह्रास। परीक्षा और अनुभव आदिसे यह भी सिद्ध हो चुका है कि जो लोग सदा शान्त, प्रसन्न और साहसी रहते है उनके शरीरके कोषाणु भी बहुत ही पुष्ट और नीरोग होते हैं। परन्तु जो लोग सदा दुखी, चिन्तित और भयभीत रहते हैं उनके शरीरके कोषाणु बहुत ही दुर्बल और रोगी रहते हैं। इसलिए अपने शरीरके स्वास्थ्यकी रक्षाके विचारसे प्रत्येक मनुष्यका यह बहुत ही आवश्यक कर्तव्य है कि वह अपने मनमे सदा अच्छे विचार रक्खे और किसी प्रकारके बुरे या दुष्ट विचारको कभी अपने पास तक न आने दे। जब कोई आदमी यह बात अच्छी तरह समझ लेगा कि बुरे भावों और विचारोका शरीरके प्रत्येक कोषाणुपर बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ता है, तब यदि वह समझदार होगा तो यथासाध्य अपने मनमे कभी कोई बुरा विचार न आने देगा। उस समय वह समझ लेगा कि सब प्रकारके रोगो और कष्टोंका मूल हमारे विचारोमे ही है और तब वह उन दुष्ट विचारोसे ठीक उसी प्रकार दूर रहेगा जिस प्रकार लोग जहरीले साँपों आदिसे दूर रहते हैं।

लोग बराबर दुष्ट विचारोको अपने मनमे स्थान देते देते अपने शरीरके कोषाणुओंको बहुत ही दुर्बल और रोगी बना लेते है। इसका परिणाम यह होता है कि उनके मनमें आपसे आप और भी अनेक बुरे

विचार उत्पन्न होने लगते है। इसीसे आगे चलकर लोगोमे बहुत सी बुरी बुरी लते पड़ जाती है और वे अनेक प्रकारके पापो और अपराधों आदिकी ओर प्रवृत्त होने लगते है। इस प्रकार वे रोगी भी होते है और पापी भी। परन्तु जो लोग अपने मनपर पूरा पूरा अधिकार रखते है, जो कभी अपने मनमे किसी प्रकारका दुष्ट विचार नहीं आने देते वे सदा सुखी और नीरोग रहते है और ऐसे ही लोग संसारमे महापुरुष कहलानेके अधिकारी होते तथा बड़े वड़े काम कर दिखलाते है। हमे भी उचित है कि हम अपने मन तथा विचारोंको सदा दूषित होनेसे बचाते रहे और संसारमे सदा सुखी रहनेके साथ ही साथ अच्छे अच्छे काम करनेमे समर्थ हो।

संसारमे जो अनेक प्रकारके कष्ट, अयोग्यताएँ, त्रुटियाँ और अपराध ।।दि दिखाई देते है, उन सबका कारण यही है कि लोग वैज्ञानिक ढंगसे ठीक ठीक विचार करना नहीं जानते। लोगोके विचार इतने दूषित होते है कि उनका चरित्र ही बिलकुल नष्ट और निरर्थक हो जाता है। यदि लोग सदा उचित रूपसे विचार किया करे और अपने मनको पूर्ण रूपसे वशमे रक्खे, तो उनके मनमे कभी कोई अनुचित काम करनेकी आकाक्षा ही न हो और न किसी बुरे कामकी ओर उनकी प्रवृत्ति ही हो। वास्तवमे दूषित विचारोके कारण सबसे पहले मानव शरीरके कीटाणु ही दूषित होते है जो बादमे उन्हे और अनेक प्रकारके दोषोकी ओर प्रवृत्त करते है। इसीके परिणामस्वरूप उनमे बहुत सी बुरी बुरी आदते पड़ जाती है; परन्तु यदि शरीरके कोषाणु इस प्रकार दूषित न किए जायँ तो संसारमे चारों ओर सुख और सच्चरित्रताका ही राज्य दिखाई दे।

प्रत्येक मनुष्य सदा एक ऐसे विचार-सागरमे निमग्न रहता है जिसमें हर समय सब ओरसे लहरे उठा करती है । यदि विरुद्ध दशामे बहा ले जानेवाले विचारोसे बचनेकी योग्यता, सामर्थ्य और समझ हममे न हो, तो अवश्य ही हम उनकी लहरोके साथ बहते चले जायँगे और अन्तमें किसी न किसी नाशक चट्टानसे जा टकरायँगे । अतः हमे जीवन क्षेत्रमे प्रविष्ट होते ही यह बात बहुत अच्छी तरह जान लेनी चाहिए कि हमारी जो शत्रु विचार लहरियाँ हमे विपरीत दिशामे बहा ले जाती है उनसे अपने आपको किस प्रकार बचाना चाहिए। हमे यह जान लेना चाहिए कि किस प्रकारके विचारो और भावोके द्वारा हम विरोधी विचारो और भावोका प्रभाव नष्ट कर सकते है । हमे अपने विचारो और भावोपर पूरा पूरा स्वामित्व प्राप्त करना चाहिए । जब हम अपने विचारोको ठीक तरहसे और उचित दिशामे प्रवाहित करना सीख लेगे, तब आन्तरिक तथा बाह्य दोष हमपर अपना किसी प्रकारका प्रभाव न डाल सकेगे । जो व्यक्ति अपनी बाल्यावस्थामें अथवा अधिकसे अधिक अपनी युवावस्थामे अपने विचारोपर पूर्ण रूपसे अधिकार करना सीख जाता है और जो उन्हे आवश्यकतानुसार विपरीत दिशामे जानेसे रोककर उचित और अभीष्ट दिशामे सचालित करना सीख लेता है, वह बहुत बड़ा भाग्यवान् होता है । वही आदमी संसारमें सबसे अधिक सफल होता है; क्योकि वह जो कुछ करना चाहता है वही कर लेता है ।

विलायतमे एक आदमी था जो पहले सदा बहुत ही दुखी, निराश और निरुत्साह रहा करता था । सदा चिन्तित और खिन्न रहनेके कारण उसका जीवन एक प्रकारसे बिलकुल नष्ट हो गया था । उसे अपने आपपर और अपनी योग्यतापर किसी प्रकारका विश्वास न रह गया था और उसने बहुत अच्छी तरह समझ लिया था कि अब इस संसा-

रमे मुझसे कभी कोई काम न हो सकेगा। कुछ दिनों वाद उसने एक ऐसी स्त्रीसे विवाह किया जो वहुत ही प्रसन्नचित्त थी और सदा हँसा करती थी। वह स्त्री जव उसे खिन्न और दुखी देखती तव हँस पड़ती थी और उसका खेद दूर करके उसे भी हँसा देती थी। कुछ दिनो तक उस प्रसन्नचित्त स्त्रीके साथ रहनेके कारण उसकी मनोवृत्ति बिलकुल बदल गई और वह सदा प्रसन्न रहने लगा। इस प्रसन्न रहनेका उसके जीवन और चरित्रपर वहुत ही अच्छा प्रभाव पड़ा। थोड़े ही दिनोमे उसमे जमीन और आसमानका फर्क हो गया। अव वह जो काम करता था उसीमे उसे सफलता होती थी। थोड़े ही दिनोमे वह वहुत ही सुखी और सम्पन्न हो गया और उसके इस सारे सुख तथा सम्पन्नताका मुख्य कारण उसकी प्रसन्नचित्त स्त्रीका संग साथ था।

अन्तमें हम अपने पाठकोको केवल यह वतला देना चाहते हैं कि मनुष्यमे जितने प्रकारके दोप आदि होते है उन सवका उद्गम भी स्वयं उन्हीमे होता है और उन्हे दूर करनेका रामबाण उपाय भी स्वयं उसीमे होता है। संसारमे सब प्रकारकी सफलता प्राप्त करनेका एक मात्र उपाय यही है कि हम अपने विचारोको ठीक दिशामे प्रवाहित करे और उन्हे कभी दूषित न होने दे। जो लोग यह तत्त्व अच्छी तरह समझ लेते हैं उनके लिए संसारसे मानो दुःख और दरिद्रताका सदाके लिए नाश हो जाता है।

८—कल्पनाशक्ति और आरोग्य।

विलायतमें एक बार एक पादरी एक अस्पतालमे लाया गया था। वह कई रोगोसे इतना अधिक ग्रस्त था कि उसमे सिर उठाने तककी शक्ति न थी। न जाने कैसे उसके मनमे यह बात बैठ गई थी कि मैंने अपने नकली दाँत निगल लिए है और अब वे दाँत अन्दर पेटमे जाकर मेरी आँतोको काट रहे है। डाक्टरोने अनेक प्रकारसे उसे समझा बुझाकर उसका यह भ्रम दूर करना चाहा; परन्तु कुछ भी फल न हुआ। उसकी यह धारणा बराबर बनी ही रही। परन्तु इसके थोड़े ही दिनो बाद उसकी स्त्रीका तार आया जिसमें लिखा हुआ था कि तुम्हारे जो नकली दाँत खो गए थे वे तुम्हारे बिस्तरके नीचे पड़े हुए मिल गए है। यह तार पढते ही वह रोगी पादरी तुरन्त अपने मानसिक रोगसे मुक्त हो गया। उसे अपनी मूर्खतापर बहुत पश्चात्ताप हुआ। वह तुरन्त उठकर खड़ा हो गया और कपड़े पहनकर तथा अस्पतालका बिल चुकाकर तुरन्त ही वहाँसे पैदल चलता हुआ और बिना किसीकी सहायतासे आपसे आप अपने घर पहुँच गया।

इसी प्रकारकी एक और बात एक बार हमारे एक मित्र डाक्टरने बतलाई थी। वे कुछ दिनोतक राजपूतानेकी कई रियासतोमे रह चुके थे। एक बार उन्हें एक रियासतके किसी गाँवमे एक सरदारके बहुत बीमार होनेका समाचार मिला। उस सरदारके मनमे किसी प्रकार यह दृढ धारणा हो गई थी कि एक बड़ी सी काली नागिन मेरे पेटमे पहुँच गई है जो पेटके अन्दरके सब अंग काटे और खाए डालती है।

इस धारणाका परिणाम यह देखनेमे आता था कि वह सदा पेटमे बहुत विकट पीड़ा होनेका सा नाव्य किया करता था। उस सरदारके कुछ मित्र उक्त डाक्टर साहबको उसकी चिकित्साके लिए ले गए। डाक्टर साहब उसके मानसिक रोगका सब हाल तो पहले ही सुन चुके थे, उन्होने जाते ही सरदारकी नब्ज देखी और तब पेट देखा और कुछ देर तक सोचते रहनेके उपरान्त उन्होने कहा—जान पड़ता है कि इनके पेटमे कोई काली नागिन है जो अन्दर ही अन्दर इनका पेट काट रही है। इतना सुनते ही सरदारकी प्रसन्नताका ठिकाना न रहा। उसने समझा कि यही एक डाक्टर ऐसे है जिन्होने मेर रोगका ठीक ठीक निदान किया है। क्योकि अव तक जितने डाक्टर आते थे वे सब यही कहते थे कि पेटमे नागिन किसी प्रकार नही जा सकती और यह केवल भ्रम है। पर सरदार अपने आपको जिस रोगका रोगी समझता था वह रोग डाक्टर साहबने बिना उससे कुछ पूछे ही बतला दिया था। इससे डाक्टर साहबपर उसकी बहुत अधिक श्रद्धा और विश्वास हो गया। डाक्टर-साहबने कहा कि मै तुम्हे एक सप्ताहमे बिलकुल नीरोग कर दूँगा और ऐसी दवा दूँगा जिससे वह नागिन पेटमे ही मर जायगी और उसके टुकड़े टुकड़े कटकर पाखानेके रास्ते निकल जायँगे। बस, डाक्टर साहबने एक नुसखा लिख दिया जो कुछ दस्तावर था, पर साथ ही उस नुस्खेमें एक ऐसी दवा भी थी जिससे पाखाना बिलकुल काले रंगका होता था। सरदारने पाँच छः दिन तक दवा खाई। उन्हे नित्य काले रंगके चार पाँच दस्त हुआ करते थे और उनकी समझमे यही आता था कि मेर पेटके अन्दरकी नागिनके अग कट कटकर निकल रहे है। एक सप्ताह वाद डाक्टरने कह दिया कि वह नागिन बिलकुल निकल गई। सरदारको पहलेसे ही अपने नीरोग होनेका विश्वास हो रहा था,

इसलिए उसके पेटकी पीड़ा भी दिनपर दिन वरावर कम होती जाती थी और अन्तमे एक सप्ताहमे वे विलकुल नीरोग हो गए।

उक्त दोनो उदाहरण विलकुल एकसे ही है और उनसे हम एक ही परिणामपर पहुँचते है। पादरीका जवतक यह विश्वास था कि मेरे पेटमे नकली दाँत चले गए है जो मेरे पेटको अन्दर ही अन्दर काट रहे है, तवतक संसारकी कोई दवा उसको फायदा नहीं पहुँचा सकती थी और इसी लिए वह अनेक प्रकारकी पीड़ाएँ अनुभव किया करता था। उसे नीरोग करनेके लिए इस वातका विश्वास दिलानेकी आवश्यकता थी कि या तो वे दाँत पेटमे पहुँचे ही नहीं है और या यदि पहुँच गए है तो वे अव निकल गए है। जव उसे यह विश्वास हो गया कि दाँत पेटमे पहुँचे ही नहीं है तव वह आपसे आप विना किसी प्रकारकी चिकित्साके अच्छा हो गया। इसी प्रकार सरदारको इस वातका विश्वास होनेकी आवश्यकता थी कि या तो मेरे पेटमे नागिन पहुँची ही नही है और या यदि पहुँची है तो वह अव निकल गई है। जवतक उसे इन दोनोमेसे किसी एक वातका विश्वास न होता तवतक उसके नीरोग होनेकी कोई सम्भावना ही नही थी। ज्यो ही उसे इस वातका विश्वास हो गया कि मेर पेटमेसे वह नागिन निकल गई, त्यो ही वह आपसे आप अच्छा हो गया। वास्तवमे न तो पादरीके पेटमे कोई दाँत ही पहुँचा था और न सरदारके पेटमे कोई नागिन ही घुसी थी। परन्तु दोनो ही केवल अपने विश्वासके कारण अनेक प्रकारके शारीरिक कष्ट भोग रहे थे और जव उन्हें उसके विपरीत विश्वास हो गया तव वे आपसे आप अच्छे हो गए।

अच्छे अच्छे डाक्टर हमे यह भी वतलाते है कि अनेक प्रकारके वड़े वड़े संक्रामक रोग शरीरमे विप प्रविष्ट होनेसे तो होते ही है, पर साथ ही उनका हमारी मानसिक अवस्थाके साथ भी वहुत घनिष्ठ

सम्बन्ध है। यदि हमारे मनमे सदा उस संक्रामक रोगका भय वना रहेगा और हमे सदा उससे पीडित होनेकी आशंका वनी रहेगी, तो उस दशामे हमपर वहुत सहजमे उस संक्रामक रोगका आक्रमण हो सकेगा और जव एक वार किसी प्रकार उसका विप हमारे शरीरमें प्रविष्ट कर जायगा तव हममे अपने आपको उसके प्रभावसे वचानेकी शक्ति न रह जायगी; अपनी मानसिक दुर्वलता आदिके कारण हम तो मानो पहलेसे ही उसके लिए तैयार वने वैठे होगे। ऐसी दशामे हमारा शरीर उस विपका कुछ भी प्रतिरोध या प्रतिकार न कर सकेगा; परन्तु यदि हम अपने मनको ठीक दशामे रक्खेगे, उस रोगसे भयभीत न होगे और सदा यही सोचते रहेगे कि वह रोग हमको न होगा, तो एक वार शरीरमें उसका विप प्रविष्ट हो जानेपर भी हमारी कोई हानि न होगी। इसके सिवा यह भी प्रायः देखा जाता है कि जो दृढचित्त चिकित्सक अनेक प्रकारके भीपण और संक्रामक रोगोकी दिन रात चिकित्सा किया करते है और जो सदा उन्ही रोगोके रोगियोसे घिरे रहते है, वे भी जल्दी कभी उन रोगोसे पीड़ित नहीं होते। वहुतसे डाक्टर और दाइयाँ आदि ऐसी होती है जो हैजे, प्लेग, चेचक आदिके दिनोमे सैकड़ो हजारो रोगियोंकी चिकित्सा और सेवा शुश्रूपा किया करती है, परन्तु उन्हे कभी वे रोग नही होते। इसका कारण यही है कि उनके मनमे इस वातका दृढ विश्वास होता है कि यह रोग हमे कभी न होगा और केवल अपने मानसिक वलके कारण ही वे उन रोगोसे वचे रहते है।

एक वहुत वड़ा पहलवान था जो एक वार एक वहुत ही भानक दृश्य देखकर और उसकी भयंकरताका अनुमान मात्र करके ही इतना दुर्वल हो गया था कि वह आध सेर वोझ भी उठानेके योग्य न रह गया था। कुछ ऐसे आदमी भी देखे गए है जो क्लोरोफार्मसे

बहुत अधिक भयभीत होनेके कारण क्लोरोफार्मकी शीशी देखते ही बेहोश हो गए है और उन्हे अस्त्र-चिकित्साके लिए क्लोरोफार्म सुँघानेकी आवश्यकता ही नहीं रह गई। ऐसे लोग अपनी मानसिक क्रियासे बिना क्लोरोफार्मकी सहायताके आपसे आप बेहोश हो जाया करते है।

एक बार एक डाक्टर साहब घरसे मछलीका शिकार खेलनेके लिए निकले। रास्तेमें उन्हें समाचार मिला कि पास ही एक ऐसा रोगी है जिसे किसी कारणसे बहुत अधिक पीड़ा और कष्ट हो रहा है। उस समय डाक्टर साहबके पास न तो औषधो आदिका बक्स ही था और न उनके पास कोई दवा ही थी। पर फिर भी वे तुरन्त उस रोगीको देखने चले गए। वहाँ जाकर उन्होने उस रोगीको बहुत ही अच्छी तरह देखा और तब मामूली आटेकी कुछ गोलियाँ बनाकर दे दीं और कह दिया ये गोलियाँ थोडी थोड़ी देरपर दी जायँ, दो तीन घंटेके अन्दर रोगी बिलकुल अच्छा हो जायगा। डाक्टर साहबके जानेके बाद रोगीको इस बातका बहुत अच्छी तरह विश्वास दिला दिया गया कि जो डाक्टर अभी तुम्हें देखनेके लिए आए थे वे शहरके बहुत बड़े अनुभवी और योग्य डाक्टर है और इनकी चिकित्सासे रोगियोंको अवश्य ही तुरन्त लाभ होता है। इस विश्वासका परिणाम यह हुआ कि साधारण आटेकी गोलियोसे ही वह रोगी थोड़ी देरमें बिलकुल अच्छा हो गया।

ठीक इसीसे मिलता जुलता एक और अनुभव एक बार हमारे एक मित्र डाक्टरने बतलाया था। उन्होने कहा था कि जब मै झाँसीमें था तब एक बार रातको बारह या एक बजे एक रोगी मेर पास बहुत चिल्लाता हुआ आया। पूछनेपर मालूम हुआ कि अंधेरी रातमे उसे रास्तेमें बिच्छूने काट लिया था। मैंने सोचा कि इस समय इतनी रातको कंपाउंडरको बुलवाना और अस्पताल खुलवाकर दवा निकलवाना बहुत

ही कठिन है, इसलिए मैने उसे केवल विश्वासके बलसे अच्छा करना चाहा। मैने उससे कहा कि भाई अगर मै तुम्हे कोई दवा दूँगा तो उससे तुम्हे कई घटोमे आराम होगा; पर मुझे विच्छूके काटनेका एक मन्त्र मालूम है जिससे विच्छूका जहर पाँच मिनटके अन्दर ही बिलकुल उतर जाता है। तुम जाकर सामनेके नीमके पेड़मेसे एक छोटी सी डाल तोड़ लाओ। वह आदमी किसी तरह रोता और कराहता हुआ उस पेड़के पास गया और बड़ी कठिनतासे एक छोटी सी डाल तोड़ लाया। मैने उसी डालसे उसके काटे हुए स्थानको थोड़ी देरतक बार बार छुआ और साथ ही मै यो ही झूठ मूठ कुछ मन्त्र भी पढता गया। दस ही मिनटमे केवल विश्वासके कारण उसका सारा जहर उतर गया और वह बहुत प्रसन्नतासे वहाँसे चला गया। इतना कह चुकनेके बाद डाक्टर साहबने बहुत हँसते हुए कहा था कि इसके बाद मै कई बरस तक झाँसीमे रहा, तबसे मेरे पास विच्छूके काटे बहुतसे आदमी दूर दूरसे आने लगे। मै उन्हे लगाने और खानेकी दवा देकर अच्छा करना चाहता था; पर वे लोग दवा लेनेके लिए राजी ही न होते थे और केवल मन्त्रबलसे ही अच्छे होना चाहते थे। बल्कि उनमेसे अधिकांश तो नीमकी डाल अपने साथ ही ले आया करते थे। यद्यपि स्वयं मेरा मन्त्रबलपर कभी किसी प्रकारका विश्वास नहीं था और न अब है, पर विश्वासका यह प्रत्यक्ष फल मैने स्वयं अपनी आँखोसे एक दो बार नहीं सैकड़ो बार देखा है।

एक बार फिलाडेल्फियामे एक प्रकारका बहुत ही भीषण और संक्रामक ज्वर फैला। उस समय वहाँ डाक्टर रश नामक एक बहुत बड़े और प्रसिद्ध डाक्टर थे जो उस ज्वरके बहुत बड़े चिकित्सक समझे जाते थे। उस ज्वरके सम्बन्धमे जो रिपोर्ट प्रकाशित हुई थी उसमे

लिखा था कि डाक्टर रशकी उपस्थिति ही बहुत बड़ी दवा थी। केवल उन्हे अपने सामने उपस्थित देखकर ही बहुतसे ऐसे रोगी भी आपसे आप अच्छे हो जाते थे जिन्हे डाक्टर साहब कोई दवा ही नही देते थे। मानो डाक्टर साहबकी बाते ही बुखार उतार देनेके लिए काफी थी।

एक बार एक युवती थिएटर देखनेके लिए गई। वहाँसे किसी कारणसे उसका जी डूबने लगा और वह बेहोश होने लगी। उस समय उसका प्रेमी भी जो कि एक डाक्टर था उसके साथ ही था। जब उस स्त्रीने कहा कि मेरी तबीयत बहुत घबराती है और मै बेहोश हुई जाती हूँ, तब उस डाक्टरने चट अपने जेबमेसे एक चीज निकालकर उसके मुँहमे डाल दी और कहा कि यह गोली अपने मुँहमे रखकर इसका रस चूसो। इससे पाँच मिनटके अन्दर ही तुम्हारी बेहोशी दूर हो जायगी, लेकिन यह गोली निगल मत जाना। वह स्त्री उसे मुँहमे रखकर बेहोशीकी हालतमे ही उसका रस चूसने लगी और थोड़ी ही देरमे उसे मालूम होने लगा कि मै अच्छी हो रही हूँ। इसके कुछ ही देर बाद वह बिलकुल होशमे आ गई। इसके उपरान्त उसे यह जाननेका कुतूहल हुआ कि आखिर यह गोली कैसी है, जिससे इतनी जल्दी इतना लाभ हुआ और जिसे निगलनेके लिए मनाही की गई थी। जब उसने मुँहमेसे वह चीज निकालकर देखी तो उसके आश्चर्यका ठिकाना न रह गया। वह एक मामूली बटन था और उसी बटनका रस चूसकर वह होशमे आई थी।

इसी प्रकारके और भी अनेक उदाहरण दिए जा सकते है जिनसे यह बात भली भाँति सिद्ध हो सकती है कि मनका विश्वास ही अनेक प्रकारके रोग आदिमे सबसे बढकर फायदा करता है। शरीरमे जो रोग होता है वह तो होता ही है, पर उससे कहीं अधिक वह रोग हमारे

मस्तिष्कमे—हमारे विचारमे—होता है। हमारे देशमे बहुतसे लोग फलित और सामुद्रिक आदिपर विश्वास करते है और ज्योतिषियो आदिके कहनेपर पूरा विश्वास रखकर उनके बतलाए हुए समयपर आपसे आप बीमार पड़ जाते है और तब कहते है कि ज्योतिषीजीने बहुत ठीक फल बतलाया था। हम यह नहीं कहते कि ज्योतिषियोंका कहना ठीक हुआ करता है या ग़लत; हम तो केवल यही बतलाना चाहते है कि हमारा विश्वास ही हमारे लिए सबसे अधिक फलदायक होता है और विशेषतः जिन लोगोका हृदय दुर्बल होता है उनपर इस प्रकारके विश्वासका और भी अधिक परिणाम होता है।

कुछ जादूगर जादूका एक प्रकारका खेल करते है। वे कुछ लड़-कोंको अपने पास बुला लेते हैं और उन्हे अनेक प्रकारकी बाते सुनाकर धीरे धीरे उनके मनको यहाँ तक अपने वशमे कर लेते है कि जो कुछ कहते हैं उसे वे लड़के बिलकुल सच समझ लेते है और उसीके अनु-सार काम करने लगते है। यदि वह जादूगर कहता है कि तुम्हारे कपड़ोमे आग लगी है तो वे यही समझ लेते है कि सचमुच हमारे कप-ड़ोंमे आग लगी है और वे उसे बुझानेका सा नाट्य करने लगते है। यदि उनसे कहा जाता है कि पानी बरस रहा है तो वे छायामे होते हुए भी छाया ढूँढते फिरते है। इन सबका कारण यही है कि जादूगर उनके मनमें जिस बातके प्रति पूरा पूरा विश्वास उत्पन्न कर देता है उसीको वे बिलकुल ठीक समझने लगते है। वास्तवमें स्वयं उनका विश्वास ही काम करता है।

हमारी कल्पना शक्तिका हमारे शरीरपर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ता है। परन्तु हममेंसे बहुत कम लोग ऐसे हैं जो उस शक्तिका ठीक ठीक अनुमान कर सकते हो। यदि दस बीस आदमी मिलकर किसी एक आदमीके

पीछे पड़ जायँ और उसे पागल सिद्ध करना चाहे तो वे बहुत सहजमे उसे पागल बना सकते है। इसका कारण यही है कि वे सब लोग मिलकर अपने आचरण और व्यवहार आदिके कारण उसके मस्तिष्कमे यह बात भर देते है कि वह पागल है और तब वह सहजमें ही पागल हो जाता है। यहीं भारतवर्षमें एक अँगरेज नवयुवक अफसर था जो दिन भर बहुत अधिक काम करनेके कारण और यहाँकी भीषण गरमी न सह सकनेके कारण बहुत दुखी और चिन्तित हो गया था और इसी कारण उसकी तबीयत कुछ खराब हो गई थी। वह एक डाक्टरके पास गया। डाक्टरने बहुत अच्छी तरह उसकी जाँच की और कहा कि तुम्हारे स्वास्थ्य आदिके सम्बन्धमें सब बातें कल मै एक पत्रमें लिख-कर तुम्हारे पास भेजूँगा। दूसरे दिन उसे उस डाक्टरका एक पत्र मिला जिसमें लिखा हुआ था कि तुम्हारा बायाँ फेफड़ा बिलकुल खराब और बेकाम हो गया है और तुम्हारा जिगर भी बिलकुल खराब हो गया है। इसलिए उचित है कि तुम अपने सब कामोकी बहुत जल्दी पूरी व्यवस्था कर लो। यद्यपि अभी कई हफ्तो तक तुम जीते रहोगे, तो भी तुम्हारे लिए यही उचित है कि तुम अपना कोई महत्त्वपूर्ण कार्य अनिश्चित दशामे मत छोड़ो और उसकी ठीक ठीक व्यवस्था कर लो। इस पत्रका उस नवयुवक अफसरपर बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ा और उसकी दशा खराब होने लगी। पहले चौबीस घंटोंके अन्दर ही उसे कलेजेमे बहुत ज्यादा दरद होने लगा और साँस लेनेमे बहुत कठिनता प्रतीत होने लगी। वह अपने मनमे यही धारणा करके बिस्तरपर पड़ गया कि अब मेरी मृत्यु बहुत समीप आ गई है और मै उठ न सकूँगा। रातके समय उसकी दशा और भी जल्दी जल्दी खराब होने लगी। उसने अपने नौकरको भेजकर डाक्टरको फिर बुलवाया। डाक्टरने आते ही देखा कि,

उसकी दशा बहुत खराब हो गई है। उसे बहुत आश्चर्य हुआ। उसने कहा कि कल तो जब मैंने तुम्हे देखा था तब तुम्हारी यह दशा नहीं थी। एक ही दिनमे तुम्हे यह क्या हो गया ?

वह नवयुवक बहुत ही कमजोर हो गया था। उसने बहुत ही धीमे स्वरमे कहा कि मेरे जिगरमे कोई भारी रोग हो गया है।

डाक्टरने कहा—जिगरमे ? कल तो तुम्हारा जिगर बिलकुल ठीक था।

नवयुवकने पूछा—और मेरे फेफड़ोका क्या हाल है ?

डाक्टरने उत्तर दिया—आखिर तुम्हे हो क्या गया है ? जान पड़ता है कि तुम शराब तो कभी नही पीते। तुम्हारे फेफड़े भी ठीक ही है।

रोगीने बहुत ही धीरेसे कहा—यह सब तुम्हारे पत्रकी कृपा है। तुम्हीने न कल लिखा था कि अब तुम कुछ ही हफ्तो तक जीओगे।

डाक्टरने कहा—मेरे लिखनेका मतलब तो सिर्फ यह था कि तुम कुछ हफ्तोके लिए पहाड़पर चले जाओ तो तुम्हारी तबीयत बिलकुल ठीक हो जायगी।

रोगीके मुँहपर मुरदनी छाई हुई थी और उसके शरीरमे कुछ भी दम न था। उसने बड़ी कठिनतासे अपने सिरहानेसे डाक्टरका वह पत्र निकालकर उसे दिखलाया। उसे देखते ही डाक्टर चिल्ला उठा—अरे यह तो दूसरे मरीजके नामका पत्र था। जान पड़ता है कि मेरे सहकारीने भूलसे तुम्हारे लिफाफेमे दूसरे रोगीका पत्र रख दिया।

इतना सुनते ही वह रोगी उठकर बैठ गया और कुछ ही घंटोमे बिलकुल भला चंगा हो गया।

एक डाक्टरी स्कूलमे एक बहुत बड़ा और प्रसिद्ध डाक्टर विद्यार्थियोंको चिकित्साशास्त्रकी शिक्षा दिया करता था। वह अपने विद्यार्थि-

योको प्रायः यही उपदेश दिया करता था कि अपनी कल्पना शक्तिसे सदा होशियार रहना चाहिए और कभी यह न सोचना चाहिए कि हम बीमार है। वह कहता था कि विद्यार्थियोको अनेक प्रकारके रोगोके लक्षण और निदान आदि बतलाए जाते हैं। परन्तु किसी विद्यार्थीको उन लक्षणोको स्वयं अपने आपपर कभी न घटाना चाहिए और यह न समझ लेना चाहिए कि इस रोगसे तो हम भी पीड़ित है। उसने मूल पुस्तकके लेखकसे स्वयं अपना एक अनुभव कहा था। उसने बतलाया था कि एक बार मेरी यह धारणा हो गई कि मुझे एक विकट रोग हो गया है। मेरी यह धारणा इतनी दृढ़ हो गई कि किसी दूसरे डाक्टरसे अपना हाल कहने तकका मुझे साहस न हुआ। मैं सोचता था कि मर जाना अच्छा है, पर किसी दूसरे डाक्टरसे अपना हाल कहना अच्छा नही है। मेरी भूख बिलकुल जाती रही, दिनपर दिन शरीर दुर्बल होने लगा और मै अपना अध्यापनका कार्य करनेमें बिलकुल असमर्थ हो गया। एक दिन मेरा एक डाक्टर दोस्त मुझसे मिलनेके लिए आया। मेरी दशा देखकर उसे बहुत आश्चर्य हुआ। वह मुझसे पूछने लगा कि तुम्हे क्या हुआ है। मैंने उसे सब हाल बतलाया और कहा कि मैं समझता हूँ कि मुझे अमुक रोग हो गया है; परन्तु बहुत कुछ वादविवाद करके उसने अच्छी तरह मुझे विश्वास दिला दिया कि मुझे किसी प्रकारका कोई रोग नहीं है। जब मुझे अच्छी तरह विश्वास हो गया तब मेरी दशा सुधरनेमे कुछ भी देर न लगी। दो ही चार दिनोमे मै बिलकुल ठीक और पहलेकी ही तरह हो गया। मुझे भूख भी लगने लगी और मै पहलेकी तरह हृष्टपुष्ट भी हो गया।

चिकित्साशास्त्रके इतिहासमे इस प्रकारके अनेक उदाहरण भरे पड़े हैं, जिनसे सिद्ध होता है कि बहुतसे लोग केवल किसी रोगकी कल्पना

करके ही उस रोगसे पीड़ित हो जाते है। एक बार विलायतके चिकित्सा-शास्त्रसम्बन्धी एक सामयिक पत्रमे नीचे लिखी दो घटनाएँ प्रकाशित हुई थी।

एक बार लन्दनके रहनेवाले दो आदमी एक ऐसे देहातमे गए जहाँ एक विशेष प्रकारका भीषण ज्वर बहुत जोरोसे फैला हुआ था। दोनो आदमी रातको एक ही स्थानपर सोए। उनमेसे एक आदमी तो बहुत मजबूत दिलका था और अपने सम्बन्धमे व्यर्थकी और झूठी कल्पनाएँ नहीं करता था। वह जब प्रातःकाल सोकर उठा, तब नित्यकी भाँति बिलकुल भला चंगा था। परन्तु दूसरा आदमी कमजोर दिलका था और बहुत जल्दी अपने आपको रोगी समझ लिया करता था। उसे मारे चिन्ताके रातभर नीद नही आई थी और उसकी हालत खराब हो रही थी। लोगोने यही समझा कि इस समय यहाँ जो ज्वर फैला हुआ है, वही इसे भी हो गया है। तुरन्त तार देकर लन्दनसे एक अच्छा डाक्टर बुलवाया गया। डाक्टर भी बहुत जल्दी ही आ पहुँचा। उसने आते ही उस आदमीके शरीरकी परीक्षा की और कहा कि इसे ज्वर बिलकुल नहीं हुआ है। इसने केवल अपने आपको रोगकी कल्पना करके ही रोगी बना लिया है। इस प्रकार कोई रोग न होते हुए भी उस व्यक्तिने अपने आपको स्वय ही रोगी मान और बना लिया था।

इसी प्रकार एक बार और दो आदमी एक मकानमे जाकर ठहरे थे। उस मकानमे कुछ ही दिनो पहले एक आदमी हैजेसे मर चुका था। उन दोनोंमेसे एक आदमी तो उसी कमरेमे सोया जिसमे पहले हैजेका रोगी मरा था। परन्तु, उसे यह बात मालूम नहीं थी कि इसमे हैजेका कोई रोगी मरा है। वह रातभर बड़े आनन्दसे सोया रहा और सबेरे उसे किसी प्रकारकी शिकायत नहीं हुई। दूसरा आदमी एक दूसरे कम-

रेमे सोया था। पर रातके समय किसी अनजानने उससे कह दिया था कि इसीमे कुछ दिनो पहले एक आदमी हैजेसे मर चुका है। रातभर मारे चिन्ताके उसे नींद न आई और सबेरे उठते ही उसे सचमुच हैजा हो गया और अन्तमे वह उसी रोगसे मर भी गया।

लोग इस प्रकारकी वाते प्रायः पढा और सुना करते है और उनपर पूरा पूरा विश्वास भी रखते है। परन्तु फिर भी न जाने क्यों उनसे पूरी पूरी शिक्षा नहीं ग्रहण करते और समय आनेपर जवरदस्ती ही अपने आपमे किसी न किसी प्रकारके रोगकी कल्पना कर लेते है और अन्तमे उसी रोगसे पीड़ित भी हो जाते हैं। ज्यो ही हमारे मनमे इस वातका पूरा पूरा विश्वास हो जाता है कि हम अमुक रोगसे पीड़ित हो रहे है त्यो ही मानों हम उस रोगको अपने ऊपर आक्रमण करनेके लिए निमन्त्रित कर वैठते है। परिणाम यह होता है कि धीरे धीरे उस रोगके सव लक्षण हममे उत्पन्न होने लगते है और हम सचमुच उस रोगसे पीड़ित हो जाते हैं। उस समय हमारे मन और शरीरकी जीवनी शक्ति नष्ट होने और विपरीत दशामें कार्य करने लगती है। रोगोसे वचनेकी हममे जो शक्ति होती हैं वह आपसे आप नष्ट होने लगती है और हम वरावर रोगी होते जाते हैं। अतः प्रत्येक समझदार मनुष्यका यह परम कर्तव्य है कि वह कभी इस प्रकार व्यर्थ अपने रोगी होनेकी कल्पना न किया करे, क्यों कि रोगकी कल्पना मनुष्यको कभी रोगी वनाए विना नहीं छोड़ती।

९–आरोग्यपर विचारोंका प्रभाव।

किसीने कहा है कि तुम्हारा सवसे वड़ा शत्रु, तुम्हारा वही मित्र है जो तुमसे भेंट होनेपर कहता है कि क्या हाल है, आज तो तुम्हारी तवीयत कुछ ठीक नहीं माळूम होती । वस ज्यों ही तुम अपने मित्रके मुँहसे यह वात सुनते हो, त्यो ही तुम्हारी तवीयत खराव होने लगती है। मानो वह मित्र यह एक वात कहकर ही तुम्हारे मस्तिष्कमे रोगी होनेकी कल्पना उत्पन्न करके किसी न किसी रोगका वीज वो देता है।

मानसिक शक्ति कितनी प्रवल होती है और उसका शरीरपर कितना अधिक प्रभाव पड़ता है, इसका एक सवसे वड़ा प्रमाण यह है। जिन लोगोकी कल्पनाशक्ति वहुत प्रवल होती है वे एक प्रकारका हिप्नाटिज्मका खेल किया करते है । वे किसी दुर्वलहृदय मनुष्यको चुन लेते है और उस-पर अपनी कल्पना शक्तिका इतना अधिक प्रभाव डालते है कि वे जो कुछ उससे कहते अथवा उसके मनमें जो विचार उत्पन्न करना चाहते हैं ठीक वही विचार उत्पन्न कर देते है। केवल मनमे वह विचार ही उत्पन्न नही करते, वल्कि उसके शरीरपर उसका परिणाम भी उत्पन्न करके दिखला देते है। वे उससे कहते है कि देखो हम तुम्हे गरम लोहेसे दागते है और इतना कह कर वे उसके किसी अंगपर विलकुल ठंडा कोई सिक्का रख देते है। परन्तु उस आदमीके मनमे तो यही भाव रहता है कि मैं गरम लोहेसे दागा जा रहा हूँ। इसलिए फल यह होता है कि उसके जिस अंगपर ठंडा सिक्का रक्खा जाता है, उस अंगपर वैसा ही छाला हो आता है जैसा गरम लोहेसे दागनेसे हुआ करता है।

जब कि एक आदमी अपने मनोबलसे दूसरे आदमीके शरीरपर छाले तक उत्पन्न कर सकता है, तब यदि वह अपने विचार या मनो-बलसे अपने शरीरका कोई रोग दूर कर ले तो इसमे आश्चर्यकी कोई बात नहीं है । जब कि एक आदमी किसीको ठंडे जलसे भरा हुआ गिलास पिलाकर और उसके मनमे यह भावना उत्पन्न करके कि इसमे शराब है, उसे वैसे ही नचा सकता है जैसे शराब पीकर कोई नाचता है, तब यदि आदमी अपने आपको रोगसे मुक्त करनेकी भावना करके नीरोग हो जाय, तो इसमे आश्चर्यकी कोई बात नही है ।

मनुष्योपर तो इस प्रकारकी मानसिक क्रियाओका जो कुछ प्रभाव होता है वह तो होता ही है, पर पशुओतकपर इसका प्रभाव होता हुआ देखा गया है । एक वार एक घोड़ेके मनमे यह विचार उत्पन्न करनेका प्रयत्न किया गया कि वह बीमार है । उसे चारो ओरसे कम्बल ओढा दिए गए और उसके शरीरपर कई तरहकी दवाओकी मालिश होने लगी । उसकी उसी प्रकार सेवा-शुश्रूषा होने लगी, जिस प्रकार उसकी बीमारीकी हालतमें हुआ करती थी । इन सब उपचारोका फल यह हुआ कि उस घोडेकी भूख बिलकुल बन्द हो गई और उसने खाना पीना बिलकुल छोड़ दिया । यदि उसे जबरदस्ती कुछ खिलाने पिला-नेका उद्योग किया जाता, तो उसमे सफलता नही होती थी । इसी प्रकारका एक और प्रयोग एक दूसरे घोड़ेके साथ किया गया । उसके पैरपर इस प्रकार मरहम पट्टी की गई जिस प्रकार किसी घोड़ेके पैरमे चोट लग जाने और उसके लँगड़े हो जानेपर की जाती है । इन सब बातोंका परिणाम यह हुआ कि दो एक दिन बाद, जब वह चलाया गया, तब वह लँगड़ाकर चलने लगा ।

स्वयं माता पिताकी आशंकाओ आदिका उनके छोटे छोटे बालकों आदिपर भी प्रभाव होता हुआ देखा गया है। जिन दुर्बलहृदय माताओको सदा इस बातकी चिन्ता लगी रहती है कि कहीं हमारा लड़का बीमार न हो जाय, कहीं उसे नजर न लग जाय, कहीं वह डर न जाय, कहीं उसे भूत प्रेतकी बाधा न हो जाय, उन माताओके बच्चे स्वयं उन्हींकी आशंकाओंके कारण अनेक प्रकारके रोगोसे पीड़ित हो जाते हैं; बल्कि यो कहना चाहिए कि वे अनेक प्रकारकी विपत्तियोके आपसे आप शिकार हो जाते हैं। जब कभी पास पड़ोसमे किसी लड़केको कोई बीमारी होती है तब माताएँ प्रायः यह चिन्ता करने लगती हैं कि कही वही बीमारी हमारे लड़केको भी न हो जाय। वे दिन रात उस बीमारीके लक्षण अपने लड़केमे ढूँढा करती है, और उसीके सामने प्रायः ऐसी बाते किया करती है, जिनसे उस बालकके हृदयमे उस रोगका भीषण चित्र खिंच जाता है। बस, वही चित्र कुछ समयमे अपना काम कर जाता है और बालक अकारण ही उस रोगसे पीड़ित हो जाता है।

मूल पुस्तकके लेखकने एक बार एक ऐसी स्त्रीको देखा था, जो दिनरात अपने लड़केके स्वास्थ्यके सम्बन्धमे चिन्तित रहा करती थीं। वह दिन भरमे दस पाँच बार उस छोटे बालकसे कहा करती थी कि बेटा, आज तो तुम्हारा चेहरा बहुत उदास दिखाई देता है। आज तो तुम बीमारसे जान पड़ते हो। आज तुम्हारा जी कैसा है। आज तुम्हे तबीयत खराब तो नहीं माळूम होती। साथ ही वह उसे तरह तरहकी दवाएँ भी दिया करती थी। सिर्फ अपने लड़केके साथ ही उसका यह व्यवहार नहीं था। घरमे और जितने लड़के बच्चे थे, उन सबके साथ भी वह प्रकारकी वाते किया करती थी। उसे सदा इस बातकी चिन्ता लगी रहती थी कि कहीं कोई लड़का नंगे सिर बाहर न निकल जाय,

और उसे सरदी न हो जाय । कहीं उसके पैर पानीमे न भीग जाएँ और कहीं उसे बुखार न आ जाय । इस प्रकारकी बातोसे बचाए रखनेके लिए वह उन्हे दिन रात सचेत किया करती थी और कहा करती कि अगर तुम लोग मेरी बात न मानोगे तो तुम्हे अमुक रोग हो जायगा, अमुक व्याधि आ घेरेगी, आदि आदि । मतलब यह कि वह दिन रात अनेक प्रकारके विकट रोगोके चित्र उनके हृदय-पटलपर खीचा करती थी । इस प्रकारकी दिन रातकी बातोका परिणाम भी वही होता था, जो होना चाहिए । अर्थात् घरके अधिकाश बालक सदा किसी न किसी रोगसे पीड़ित रहा करते थे और वह कहा करती थी कि मै क्या करूँ, घरके बीमार लड़कोकी सेवाशुश्रूषा करनेसे ही मुझे छुट्टी नहीं मिलती और इसी लिए मैं कहीं बाहर घूमने फिरने नहीं जा सकती ।

बालकोके स्वास्थ्यके सम्बन्धमे जो दशा उस स्त्रीकी थी, ठीक वही उसके पतिकी भी थी । वह अपने छोटे छोटे बच्चोको अपने पास बुलाकर प्रायः उसकी नाडी देखा करता था और कहा करता था कि आज तो तुम्हारा बदन गरम माल्रम होता है, आज तो तुम्हे बुखार आना चाहता है, आज तुम्हारे सिरमे दर्द तो नहीं हो रहा है, आज तुम्हे कितने दस्त हुए थे, आज तुमने क्या खाया था, जरा अपनी जबान तो दिखलाओ । इन सब बातोका उस छोटे बालकपर यही प्रभाव होता था कि पिताके कहनेके अनुसार वह अपने आपको बीमार समझने लग जाता था और जाकर बिस्तरपर पड़ रहा करता था ।

प्रत्येक माता पिताको इस प्रकारकी दुष्ट भावनाओ और कल्पनाओसे सदा बचते रहना चाहिए और अपनी मूर्खताके कारण बच्चोमे कभी किसी प्रकार रोग या पीड़ा आदिका भाव न भरना चाहिए । ऐसी बातोका फल केवल यही होता है कि जिन रोगों आदिसे वे अपने

वच्चोको वचाना चाहते हैं, वे रोग अनायास ही उन्हे आ घेरते है। जरा उस वालककी दशाकी कल्पना तो कीजिए जिसे दिन रात तरह तरहके रोगोकी आशंकाओसे भयभीत रक्खा जाता है, जिनके सामने दिन रात रोगोकी ही वाते की जाती है, जिन्हे सदा यही कहा जाता है कि अमुक काम न करो, अमुक तरहसे मत रहो, आदि। इस प्रकारकी वाते सुनते सुनते वच्चा यही समझने लगता है कि मै या तो रोगी हूँ और या बहुत जल्दी रोगी हो जाऊँगा। वह यह भी समझने लगता है कि संसा-रमे अधिकांश काम ऐसे ही है जिन्हें करनेपर मनुष्य रोगी हो जाता है और बहुत थोड़े काम ऐसे है जिनके करनेसे वह रोगोसे रक्षित रह सकता है। वस, उनके हृदयमे रोगो और उन्हे उत्पन्न करनेवाली परि-स्थितियोकी भीपण कल्पना स्थान कर लेती है और उन्हे कभी नीरोग और सुखी नही रहने देती। अतः प्रत्येक माता पिताको यह वात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि इस प्रकारकी वातोसे वच्चोका स्वास्थ्य बुरी तरहसे नष्ट हो जाता है और उन्हे बच्चोके सामने इस प्रकारकी वाते करने अथवा स्वयं अपने मनमे इस प्रकारकी भावना करनेसे सदा बचना चाहिए।

एक वार एक स्त्रीने मूल पुस्तकके लेखकसे कहा था कि मैने एक दिन एक सामयिक पत्रमें एक ऐसी कहानी पढी थी जिसमे कई दुःख-पूर्ण घटनाओका वर्णन था। उस कहानीका मुझपर यह प्रभाव हुआ कि मै दिन भर बीमारोकी तरह विस्तर पर पड़ी रही और मुझे तबीयत बहुत खराब मालूम हुई। वह कहानी एक प्रसिद्ध लेखककी लिखी हुई थी। उसकी शैली बहुत ही ओजपूर्ण और प्रभावशालिनी थी। परन्तु, उसकी कथावस्तु बहुत ही भीषण और दुष्ट प्रभाव उत्पन्न करनेवाली थी। उसी प्रभावके कारण उस स्त्रीके हृदयका दूषित अंश जाग्रत हो

उठा था, जिसने उसे दिन भर रोगियोकी सी दशामे रक्खा था। प्रायः डाक्टरी पढ़नेवाले विद्यार्थियोकी भी यही दशा होती है। उन्हें शरीर शास्त्रकी शिक्षा प्राप्त करनेके लिए मुरदोके अंगोकी चीर-फाड़ करनी पड़ती है, सदा रोगियोमे रहना पड़ता हैं और अनेक प्रकारके विकट रोग देखने पडते है। दिन रात इस प्रकारके वातावरणमे रहनेके कारण वे यदि प्रायः रोगी नही तो कमसे कम खिन्नचित्त अवश्य रहते है और अक्सर उनकी तवीयत खराव और बिगड़ी हुई सी रहती है।

परन्तु जो लोग सदा प्रसन्न रहते है, सदा अपने स्वस्थ होनेकी ही भावना किया करते है, वे सदा नीरोग रहते है और उनकी तवीयत कभी खराव या भारी नहीं होती। रोगकी अवस्थामे हृदय प्रायः दुर्वल हो जाता है और वह सहजमें अच्छे और बुरे, दोनो प्रकारके प्रभाव ग्रहण कर लेता है। परन्तु, स्वस्थ होनेकी दशामे उसमे एक विशेष प्रकारका वल हुआ करता है, जिसके करण वह सव प्रकारके रोगों आदिसे रक्षित रहता है।

जव हम कभी वीमार पड़ते है और कोई वहुत ही प्रसन्नचित्त आदमी हमे देखनेके लिए आता है, तो उसकी वातोसे ही हमें एक विशेष प्रकारका वल प्राप्त होता है और हममे आशा तथा उत्साहका संचार होता है। पर, जो लोग मनहूस होते है, उन्हे देखते ही हमे वहुत अधिक दुःख होता है। वात यह होती है कि वे आकर हमारी सारी आशाओका नाश कर देते हैं और अपनी वातों और हाव भावसे ही हमे परम खिन्न और निरुत्साह कर देते है। वे जव चले जाते है, तव अपने पीछे एक प्रकारकी मुरदनी सी छोड़ जाते है। एक वार हमारे एक मित्र किसी हृदयसम्वन्धी रोगसे पीड़ित हुए थे और एक दैवी आघातके कारण वहुत दुर्वल हो गए थे। उन्हें देखनेके लिए एक ऐसे सज्जन गए,

जो कुछ मनहूस भी थे और जो दुनियादारी बिलकुल नहीं जानते थे। उन्होने रोगीके पास जाकर उन्हे देखा और उनसे बहुत ही निराशापूर्ण शब्दोमे बाते की। उन्होने कहा कि हमारे गाँवमे भी एक आदमीको यही रोग हुआ था। परन्तु, क्या कहे यह रोग ही इतना भीषण और दुष्ट है कि इससे जल्दी आदमी बचता ही नहीं, आदि आदि। इस प्रकारकी बातोका उस रोगीके हृदयपर बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ा और वास्तवमे बुरा प्रभाव पड़नेकी बात ही थी। यद्यपि अन्तमे इस प्रकारकी बातोका कोई अनिष्ट प्रभाव नही पड़ा तथापि ऐसी बाते कभी वांछनीय नही होतीं और उनका फल भी अच्छा नही होता। पर यदि मरते हुए रोगीको भी ढारस दिलाया जाय और कहा जाय कि इसमे तो कुछ हुआ ही नही और तुम बहुत शीघ्र बिलकुल नीरोग हो जाओगे, तो उससे उसके हृदयमे एक नवीन बलका संचार होगा और बहुत सम्भव है कि वह अच्छा हो जाय अथवा कमसे कम कुछ समयके लिए उसकी मृत्यु टल जाय।

रोगियोको उत्साहित करने और प्रसन्न रखनेकी बहुत अधिक आवश्यकता होती है। यदि किसी रोगीके चिकित्सक सम्बन्धी और मित्र आदि उसे सदा प्रसन्न रखनेका प्रयत्न किया करे और उसे इस बातकी आशा दिलाते रहे कि तुम बहुत ही शीघ्र पूर्ण नीरोग हो जाओगे तो प्रायः वह रोगी बहुत शीघ्र आरोग्य हो भी जायगा। जो चिकित्सक स्वयं सदा प्रसन्न रहते हैं और अपने रोगियोको भी सदा प्रसन्न रखनेका प्रयत्न करते है, उन्हींको चिकित्सामे सबसे अधिक सफलता होती है। पर जो चिकित्सक मनहूस और रोनी सूरतके होते है, वे अधिक योग्य होने पर भी, विशेप सफलता नहीं प्राप्त कर सकते। चिकित्सककी बातोका दुर्बलहृदय रोगीपर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। अतः चि-

कित्सकको सदा यही उचित है कि वह रोगीको सदा प्रसन्न रखने और उसे ढारस बँधानेका प्रयत्न किया करे। हमारे यहाँ भी लोलिम्बराजने अच्छे वैद्योके लक्षण इस प्रकार दिए है—

गुरोरधीताखिलवैद्यविद्यः पीयूषपाणिः कुशलः क्रियासु।
गतस्पृहो धैर्यधरः कृपालुः शुद्धोऽधिकारी भिषगीदृशः स्यात् ॥

इस श्लोकमे 'पीयूषपाणिः' पद बहुत ही अर्थपूर्ण और मार्मिक है। इसका साधारण अर्थ वह है कि वैद्यका हाथ अमृतके समान होना चाहिए। मतलब यह है कि उसके हाथका स्पर्श होते ही रोगीको यह जान पड़ना चाहिए कि मुझे अमृतकी प्राप्ति हुई है। उसका हाथ लगते ही उसे आनन्द और विश्वास होना चाहिए और यह बात तभी हो सकती है जब कि वह प्रसन्नचित्त हो और रोगीको भी देखते ही प्रसन्न कर सकता हो।

बहुत से वैद्योका यह सिद्धान्त हुआ करता है कि यदि रोगीका रोग असाध्य जान पड़े, तो उसे स्पष्ट बतला देना चाहिए कि इस रोगसे तुम अच्छे नहीं हो सकते। इस तरहके कुछ पाश्चात्य चिकित्सक अपने मतके समर्थनमे यह तर्क उपस्थित करते है कि रोगीको चिकित्सकसे अपनी ठीक ठीक अवस्था जाननेका अधिकार होता है और उस अधिकारसे उसे वंचित नहीं करना चाहिए। परन्तु यह सिद्धान्त बहुत ही हानिकारक और भ्रमपूर्ण है। कोई चिकित्सक कभी दृढतापूर्वक यह तो कह ही नही सकता कि मेरा निदान बिलकुल ठीक है और उसमे कभी गलती हो ही नही सकती। प्रायः देखा गया है कि जिन रोगियोके बारेमें बड़े बड़े वैद्य और डाक्टर आदि जवाब दे देते है वे रोगी भी कभी कभी आराम हो जाते है। इसलिए, यदि किसी रोगीका रोग सचमुच असाध्य ही जान पड़े तो भी उससे कभी यह नहीं कहना चाहिए कि

तुम नहीं बचोगे। निराशापूर्ण बातोका रोगीपर बहुत ही घातक परिणाम होता है और आशापूर्ण बाते उसके स्वास्थ्यके लिए बहुत ही लाभदायक सिद्ध होती है।

प्रायः ऐसे रोगी देखनेमे आते है, जो अपने रोगसे मुक्त होनेके लिए सब प्रकारके कष्ट सहनेके लिए तैयार होते हैं। वे चाहते है कि चाहे जैसे हो, हम बहुत जल्दी अच्छे हो जायँ। उन्हे कोई योग्य चिकित्सक मिल जाता है, अथवा कोई पेटेण्ट दवा मिल जाती है और वे शीघ्र आरोग्य हो जाते है। बहुतसे लोग आव-हवा बदलकर या किसी झरने, कुंड, तीर्थ आदिमे स्नान करके अच्छे हो जाते है। अपने अच्छे होनेका कारण वे चाहे जो कुछ समझा करे, पर वास्तवमे वे इसी लिए अच्छे होते है कि अच्छे होनेसे पहले ही वे अपनी प्रवृत्ति आरोग्यकी ओर कर लेते हैं। वे स्वय ही और अनजानमे अपनी मानसिक स्थिति ऐसी बना लेते हैं कि साधारण साधनोसे भी सहजमे नीरोग हो जाते हैं।

यदि हम लोगोंमे कोई सबसे बड़ा दोष है, तो वह यही कि हम अपने अन्तस्थ बलपर निर्भर नहीं रहते; यहाँ तक कि हम उस बलसे परिचित ही नहीं होते। इसी लिए हम लोगोको लाचार होकर बाह्य उपचारो आदिपर ही निर्भर रहना पड़ता है और हम स्वावलम्बी न रहकर परावलम्बी हो जाते हैं। प्रत्येक समझदार मनुष्यका यह परम कर्तव्य है कि वह इस प्रकारकी शोचनीय मनोवृत्तिका सदाके लिए अन्त कर दे, और इस बातका भली भाँति ज्ञान प्राप्त करे कि हमारे मनमे ही हमे नीरोग करनेकी कितनी अधिक शक्ति है। जब हम यह बात जान लेगे, तब बहुत सहजमें पूर्ण और स्थायी शारीरिक सुख तथा मानसिक शान्ति प्राप्त कर लेगे और यही हमारा परमपुरुषार्थ तथा यही परम सफलता है।

१०—वृद्धावस्थाका निवारण।

गात्रं संकुचितं गतिर्विगलिता भ्रष्टा च दन्तावलिः।
दृष्टिर्नश्यति वर्धते बधिरता वक्त्रं च लालायते॥
अर्थप्राशनशंकया न कुरुतेऽप्यालापमात्रं सुहृत्।
हा कष्टं पुरुषस्य जीर्णवयसः पुत्रोऽप्यमित्रायते॥

—भर्तृहरि।

जापानवालोका यह विश्वास है कि यदि राजा मर जाय, तो उसके साथ स्वयं भी आत्महत्या करके, अपने प्राण दे देना महत्ताका लक्षण है। इस विश्वासके अनुसार जापानके राजाके मरनेपर, प्रायः वहाँके एक दो बड़े सरदार आत्महत्या कर लेते है। अभी बहुत हालमे कदाचित् इसी वर्षके आरम्भमे, जापानके सम्राट्के मरने पर भी ऐसा ही हुआ था।

अभी कुछ दिन हुए न्यूयार्कके सर्वप्रधान न्यायालय या सुप्रीम कोर्टके एक जजके मन्त्रीने अपनी सत्तरवी वर्षगाँठके दिन आत्महत्या कर ली थी। उसके शवके पास एक पुस्तक पाई गई थी, जिसमे एक स्थानपर लिखा हुआ था कि बाईबिलमे सत्तर वर्षकी आयु निश्चित की गई है। जब मनुष्यकी अवस्था सत्तर वर्षकी हो जाती है, तब उसका प्रत्यक्ष कार्य समाप्त हो जाता है और इस ससारमे उसके जीवनकी मर्यादाका अन्त हो जाता है।

उक्त कथनका उस व्यक्तिपर इतना अधिक प्रभाव पड़ा था कि उसने निश्चय कर लिया था कि जब मेरी अवस्था सत्तर वर्षकी होगी, तब मै आत्महत्या कर लूँगा और अन्तमें अपनी सत्तरवीं वर्षगाँठके दिन उसने अपने उस निश्चयका पालन भी कर डाला।

प्रायः सभी देशोमे धार्मिक दृष्टिसे कुछ न कुछ आयु निश्चित की हुई होती है; और बहुतसे लोग उसीके अनुसार वह मर्यादा समाप्त होने पर जान बूझकर अपने प्राण त्याग देते है। हमारे यहाँके शास्त्रोंमें यह मर्यादा सौ वर्षकी निश्चित है । इसी लिए प्राचीन महाभारत कालमें, जब लोग सौ वर्षके लगभग पहुँचते थे अथवा उससे कुछ पहले ही, जब वे अपने शरीरमे किसी साधारणसे भी साधारण रोगके लक्षण देखते थे, तव प्रायः किसी ऊँचे पर्वत या टेकरी परसे कूदकर अथवा और किसी प्रकार आत्महत्या कर लिया करते थे।

जब कभी कोई आदमी मूर्खताका कोई काम कर वैठता है, तव प्रायः लोग कहा करते है कि इसकी अक्ल सठिया गई है। यह कहावत इस आधारपर चल पड़ी है कि जब आदमी साठ वर्षका हो जाता है, तब उसकी अक्ल मारी जाती है और वह कोई समझदारीका काम करनेके योग्य नहीं रह जाता। इसी प्रकारकी और भी कोई कहावते और विश्वास लोगोमें प्रचलित है। परन्तु, यदि वास्तविक दृष्टिसे देखा जाय, तो जान पड़ेगा कि इस प्रकारकी कहावतो और विश्वासों आदिसे मानव जातिका वहुत बड़ा अपकार होता है । इस प्रकारकी बातोका प्रभाव यह होता है कि वहुतसे लोग स्वयं अपनी निश्चित की हुई आयु तक पहुँचनेसे कुछ पूर्व ही इस संसारसे चल बसते है। परन्तु, यह समझ लेना कि मनुष्यकी आयु इतनी ही है, और किसीको उससे आगे नहीं बढना चाहिए, मानो उस परमेश्वरकी निष्पक्षतापर कलंक लगाना है। फल जब तक वहुत अच्छी तरह नहीं पक लेता, तव तक वह कभी डालसे नहीं गिरता । ऐसी दशामे यदि मनुष्य जान बूझकर, असमयमें ही अपने प्राण त्याग दे, तो क्या उसका वह काम समझदारीका समझा जायगा? कदापि नहीं।

अभी तक सब लोगोकी समझमें अच्छी तरह यह वात नहीं आई है कि हम लोग अपनी मनोवृत्तियोंके कैसे और कहाँ तक गुलाम वने हुए हैं, और हमारे भावो तथा विचारोका हमारे जीवनक्रमपर क्या प्रभाव पड़ता है। साधारणतः सब लोग यही समझते हैं कि हमारे वापदादाओंने जो आयु पाई थी, उससे अधिक आयु हम किसी प्रकार पा ही नहीं सकते । वल्कि हमारे देशमें तो वहुतसे लोग यही समझते हैं कि आयुकी मर्यादा दिनपर दिन कम होती जा रही है और अनेक कारणोंसे यहाँ ऐसा ही देखनेमे भी आता है । परन्तु, इस प्रकारकी कल्पनासे हमारी आयुके क्षीण होनेमें वहुत अधिक सहायता मिलती है। वहुतसे लोग विना किसी विशेष कारण या व्याधिके, यो ही, केवल इसी कल्पनाके कारण, अकालमृत्युको प्राप्त होते है ।

जो आदमी अपने मनमे अच्छी तरह यह समझता हो कि चालीस वर्ष तक पहुँचते पहुँचते मनुष्यके शरीरमें वृद्धावस्थाके लक्षण दिखलाई देने लगते है, पचास वर्षकी अवस्थामें पूर्ण रूपसे वृद्धावस्था आ जाती है और साठ वर्षकी अवस्था होनेपर तो मनुष्य सिवा मरनेके और किसी कामका रह ही नहीं जाता, वे मानो व्याधियो आदिसे वचनेकी अपनी शक्तिका आपसे आप नाश करने लगते हैं और स्वयं ही मृत्युकी ओर वढ़ने लगते हैं। ऐसे आदमियोको मृत्युके मुखमे जानेसे संसारकी कोई शक्ति नहीं वचा सकती । कारण यह है कि विचार ही सवसे आगे चलनेवाला दूत है। यदि हमारा विचार वृद्धावस्थाके अनुकूल होगा, तो उसके साथ साथ वृद्धावस्था भी रक्खी ही हुई है। परन्तु, जिस आदमीके विचारोमे कुछ जोर होगा और जो उपयुक्त तथा सात्विक रीतिसे जीवन निर्वाह करेगा, उसका शरीर भी वरावर तरुण ही वना रहेगा। किसीने वहुत ठीक कहा है कि जव तक मन स्वीकृति न दे, तव तक

शरीर कभी वृद्ध हो ही नहीं सकता; क्योकि मन ही शरीरका निर्माता है। अर्थात् वृद्धावस्था सबसे पहले मनमे आती है और तब शरीरपर उसके लक्षण दिखलाई देने लगते है। जब हम देखते है कि हमारी ही अवस्थाके और संगी साथी वृद्ध हो चले है, उनके बाल पक गए हैं, उनके दाँत टूटने लगे है, उनके शरीरपर झुर्रियाँ पड़ने लगी है और उनकी कमर झुक चली है, तब अपने शरीरमे ये सब लक्षण न होने-पर भी हम अपने आपको केवल उनकी देखा देखी वृद्ध समझने लगते है। हम सोचने लगते है कि अब हमारे वृद्ध होनेमे भी अधिक विलंब नहीं है। परिणाम यह होता है कि कुछ ही समयमे हम सचमुच वृद्ध हो जाते हैं। जब हमारे मनमे यह बात अच्छी तरह बैठ जाती है कि हम वृद्ध होने लग गए है और शीघ्र ही पूर्ण रूपसे वृद्ध हो जायँगे, तब हमार वृद्ध होनेमे देर नही लगती और इस प्रकार हम केवल अपनी मनोवृत्ति और आनुवंशिक संस्कारोके ही कारण समयसे बहुत पहले ही वृद्ध हो जाते हैं।

परन्तु यदि हम अपने मनमे यह बात अच्छी तरह समझ लें कि हम वृद्ध नहीं होगे, यदि हम अपने विचारोमे सदा युवावस्थाका सा बल रक्खे और यदि हमारे सामने केवल युवावस्थाका ही और आशापूर्ण आदर्श हो, तो फिर हम जल्दी वृद्ध न हो सकेंगे। यदि हमे कोई ऐसी संजीवनी शक्ति मिल सकती है जिसके कारण हम बराबर युवा बने रहें, तो वह स्वयं अपने मनमे ही मिल सकती है। हम खिजाब लगाकर या नकली दाँत लगाकर कभी जवान नहीं हो सकते। जवान होनेके लिए हमें सबसे पहले इस विचारसे पीछा छुड़ाना चाहिए कि हम वृद्ध हो रहे है। हमे अपने विचारोमे, अपनी धारणामें, यौवन लाना चाहिए और : तो फिर संसारका कोई उपाय हमें जवान नहीं बना सकेगा।

यदि हम अपने मनमे यह बात अच्छी तरह वैठा ले कि हम सदा जवान वने रहेगे और कभी वुड्ढे न होगे तो फिर हम शरीरसे भी सदा जवान ही वने रहेगे। मनमे इस प्रकारकी दृढ धारणा होते ही मानो हम वृद्धावस्थापर आधी विजय प्राप्त कर लेगे। सव लोगोको यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि अपनी अवस्थाके सम्बन्धमे हमारे मनमे जो विचार होगा उसीके लक्षण हमारे शरीरपर दिखाई देगे। हमारी अवस्था चाहे कितनी ही अधिक क्यो न हो जाय; परन्तु यदि चाहें तो उस समय भी हम जवान ही वने रहेगे। क्योकि हमारे मनमे सदा जो विचार चक्कर लगाया करते है वही हमारे शरीरसे व्यक्त होते है। सदा प्रसन्न रहने और अपने मनमे सदाशाएँ वनाए रखनेका फल यह होता है कि वृद्धा-वस्था हमारे पास नहीं आने पाती।

हम लोगोमे सवसे वड़ा दोप यही है कि हम कोई वात होनेसे पहले ही उसकी कल्पना कर वैठते हैं। संसारकी आजकल जो अवस्था है, उसके कारण सव लोगोको उतावले होनेकी आदत सी पड़ जाती है। इस उतावलेपनके कारण हमारी मनोवृत्ति कठोर और रूक्ष हो जाती है और हमारी कल्पना शक्तिका ह्रास होने लगता है। परन्तु हमे इस प्रकारका ह्रास नहीं होने देना चाहिए। दिन रात चिन्तित रहने और चक्कीकी तरह पिसते रहनेसे जीवन दूभर हो जाता है और उसीका परिणाम हमारे चेहरे और शरीरपर दिखाई देने लगता है। हमारी जीवनी शक्ति नष्ट होने लगती है, शरीरमे झुर्रियाँ पड़ने लग जाती हैं; वहुत अधिक और व्यर्थकी चिन्ताओंके कारण हम जल्दी जल्दी मृत्युकी ओर वढने लगते हैं। परन्तु जो लोग सदा प्रसन्न और निश्चिन्त रहते हैं, वे कभी जल्दी वृद्ध नहीं होते। हमारे वृद्ध होनेका एक और कारण यह होता है कि हमारी वृद्धि रुक जाती है। जव हम चालीस पचास

वर्षके हो जाते हैं तब हम अपने आपको वृद्ध समझते हुए नई नई बातो तथा नए नए विचारोके ग्रहण करनेमे असमर्थ समझने लगते है और उनकी ओरसे यह समझकर उदासीन हो जाते है कि इस अन्तिम अवस्थामे नई बातें सीखकर ही क्या करेगे। परन्तु ऐसा विचार बहुत ही भ्रमपूर्ण है। कभी किसीको केवल अपनी अवस्थाका विचार करके, यह नही सोचना चाहिए कि अब हम और आगे बढकर क्या करेगे, नई बातें जानकर क्या करेंगे। क्योंकि इस प्रकारका विचार ही हमारी मानसिक वृद्धिको रोक देता है और जहाँ हमारी मानसिक वृद्धि रुकी कि हमारी शारीरिक वृद्धि भी रुक जाती है और हम वृद्ध होने लगते हैं।

हमें सदा अपने युवा रहनेका ही विचार करना चाहिए। यदि कभी कोई काम हमारे सामने आ पड़े तो कभी यह नहीं कहना चाहिए कि अब तो हमसे यह काम नहीं हो सकता; हाँ, एक समय ऐसा भी था जब कि हम ऐसे ऐसे बहुतसे काम बहुत सहजमे कर दिया करते थे। हमे सदा युवकोका सा जीवन व्यतीत करना चाहिए। अपने विचारो और कार्योंमे हमे सदा युवक बने रहना चाहिए। अवस्था बहुत अधिक हो जाने पर भी आवश्यकता पड़ने पर हमे नवयुवकों बल्कि बालकोकी तरह उत्साह दिखलाना चाहिए। हमे अपने समस्त व्यवहार ऐसे रखने चाहिए कि हमे कभी कोई वृद्ध कह ही न सके। यदि हम सब कामोमें युवकोंकी सी तत्परता और उत्साह दिखलावेंगे और सदा सब कामोमें आगे बढ़ते रहेंगे, तो वृद्धावस्थाका हमपर कोई प्रभाव न हो सकेगा। यह समझना कि अमुक अवस्था तक पहुँचते पहुँचते हम वृद्ध हो जायँगे अथवा मर जायँगे हमारे जीवनक्रममे ऐसी बाधाएँ उपस्थित करता है कि फिर हम बिना मरे या वृद्ध हुए रह ही नही सकते।

यदि हम सदा जवान वने रहना चाहते हो तो हमे सवसे पहले यह उचित है कि अपने जीवनमे जितनी दुःखद, अप्रिय और खेदकारक घटनाएँ हुई हो उन सवको हम एकवारगी भूल जायँ। वीती हुई दुःखमय और अप्रिय वातोका स्मरण हमें व्यर्थ ही दुखी करके हमारी जीवनी शक्तिका नाश करता है। अस्सी वर्षकी अवस्थाकी एक स्त्रीसे किसीने पूछा था कि इतनी अधिक अवस्था हो जाने पर भी आप क्यों अधिक वृद्ध नहीं मालूम होतीं? उसने उत्तर दिया कि मै अप्रिय वातोको विस्मृत कर देना जानती हूँ।

हमारे शरीरकी रचना ही ऐसी है कि उसके पोषण और वर्धनके लिए वहुत सी चीजें दूसरोसे प्राप्त होती है। यदि हम संसारकी सव वातोसे सदा कुछ न कुछ शिक्षा ग्रहण करते रहे, यदि सदा कुछ न कुछ नई वाते जानते और सीखते रहें, सदा कुछ न कुछ ग्रहण करके अपने शरीरका पोषण और वर्धन करते रहे, तो हम कभी जल्दी वृद्ध नहीं हो सकते। यदि हम अपने संगी साथियो आदिसे विलकुल अलग हो जायँ और किसीसे कोई सम्वन्ध न रक्खे, तो हमारी मानसिक शक्तियोका शीघ्र ही ह्रास होने लगेगा। जो मन पुरानी वातोसे सम्पर्क नहीं रखता और नई वातो तक नहीं पहुँचता उसकी वृद्धि रुक जाती है। वह मानो वृद्धा-वस्थाको प्राप्त हो जाता है और जव मन वृद्ध हो गया तव शरीरको वृद्ध होते देर नहीं लगती।

संसारमें जितना सहज वृद्ध होना है उतना सहज शायद और कोई काम नहीं है। इसके लिए हमे इस वातकी भावना करनेकी आवश्यकता होती है कि हम वृद्ध हो रहे है और वहुत ही शीघ्र पूर्ण वृद्ध हो जायँगे। यदि हम सदा अपने आपमे वृद्धावस्थाके लक्षण ढूँढ़ते रहे, सदा मृत्युसे

भयभीत रहा करें, सदा यही सोचते रहें कि हमारी शक्तियाँ क्षीण होती जा रही है और हमारा अन्तकाल समीप आ रहा है तो हम बहुत ही शीघ्र और बहुत ही सहजमे वृद्ध हो जायँगे। इस प्रकारके विचार हमारी जीवनी शक्तिके लिए बहुत घातक होते है और हमें शीघ्र ही वृद्ध बनाकर मृत्युके मुखमें पहुँचा देते है। इस प्रकारके विचारोंसे हमारा शरीर जितना अधिक क्षीण होता है उतना और किसी प्रकार हो ही नही सकता। क्योकि ऐसे विचारोंके कारण हममे वह शक्ति ही नहीं रह जाती, जिसकी सहायतासे हम वृद्धावस्थाको आनेसे रोक सकते है।

मनुष्यमे विशेषता यही है कि वह सोचना और विचार करना जानता है। यह जहाँ अपनी इस शक्तिसे बहुतसे अच्छे अच्छे काम करता है वहाँ वह इससे अपना बहुत कुछ अपकार भी कर लेता है। प्रायः सभी पशुओकी कुछ न कुछ आयु निश्चित होती है और वे पशु या जीव जन्तु आदि अपनी उस निश्चित आयुका भोग भी करते है। परन्तु मनुष्य प्रायः अकाल मृत्युको प्राप्त होते हैं। इसका कारण यही है कि पशुओं और जीव जन्तुओं आदिमे सोचने विचारनेकी शक्ति नही होती। वे किसी प्रकारकी चिन्ता नहीं करते और विशेषतः अपनी आयु या जीवनके सम्बन्धमे तो वे बिलकुल ही निश्चिन्त रहते है। निश्चिन्त क्या रहते हैं, उनमे चिन्तित होनेकी शक्ति ही नहीं होती। यही कारण है कि वे सुखपूर्वक अपनी पूरी आयु भोगते है। पर मनुष्य जो कि अपने विचारशील होनेका अभिमान करता है अपनी इसी विचारशील-ताके कारण समयसे बहुत पहले ही मृत्युका ग्रास बन जाता है।

पेरिसके डाक्टर मेचनिकाफका कथन है कि मनुष्योको कमसे कम एक सौ बीस वर्षकी अवस्था तक जीवित रहना चाहिए। परन्तु आज-

कल लोगोंकी औसत आयु इसकी आधी भी नहीं होती। कारण यही है कि लोग अनेक प्रकारसे अपना जीवन और अपने विचार दूषित कर लेते हैं जिससे वे पूरी क्या आधी आयु भी नहीं भोग पाते।

लन्दनसे चिकित्साशास्त्रसम्बन्धी एक बहुत प्रतिष्ठित और ऊँचे दरजेका पत्र निकलता है जिसका नाम लैन्सेट है। कुछ वर्ष हुए उस पत्रमे ससारके एक सबसे बड़े डाक्टरने एक ऐसी घटनाका उल्लेख किया था, जिससे यह बात भली भाँति सिद्ध होती है कि मनमे शरीरको जवान बनाए रखनेकी कितनी अधिक शक्ति है। एक युवती स्त्रीको उसके प्रेमीने किसी कारणसे छोड़ दिया था। उसके वियोगमे वह इतनी दुःखी हुई कि उसका दिमाग़ खराब हो गया और वह बिलकुल पागल हो गई। संसारकी सब बातोसे वह इतनी बेखबर हो गई कि उसे इस बातका कुछ ध्यान ही न रह गया कि समय कैसे और कितना बीतता है। उसे विश्वास था कि मेरा प्रेमी फिर मेरे पास आवेगा और मुझसे मिलेगा। इसलिए वह वर्षों तक उसकी प्रतीक्षामे नित्य अपनी खिड़कीमे खड़ी रहा करती थी। धीरे धीरे इस प्रकार बहुत दिन बीत गए और उसकी अवस्था प्रायः सत्तर वर्षकी हो गई। उस समय एक बार कुछ अमेरिकनोने उसे देखा, जिनमे कुछ अच्छे अच्छे डाक्टर भी थे। पर उसे देखकर उनमेसे कोई यह न कह सका कि इसकी अवस्था बीस वर्षसे अधिककी है। न तो उसका एक भी बाल पका था और न उसके चेहरेपर एक भी झुर्री दिखाई देती थी। उसके सब अंग वैसे ही कोमल और स्निग्ध थे, जैसे युवती स्त्रियोके हुआ करते है। इसका कारण यही था कि युवावस्थामें जब वह पागल हुई थी, तबसे कभी उसके मनमे वृद्ध होनेका एक बार भी विचार नहीं आया था। वह अपने मनमे सदा यही समझती थी कि मै अभी युवती हूँ

और मेरा प्रेमी अभी मुझसे मिलनेके लिए आता है। न तो उसे संसारमे किसी बातकी चिन्ता ही रह गई थी और न उसके मनमे कभी यह विचार ही आता था कि आज मै तीस वर्षकी हुई, आज मै चालीस वर्षकी हुई और आज मै पचास वर्षकी हो गई। उसके मनमे सदा यही विश्वास बना रहा कि मै उसी समय और उसी अवस्थामे हूँ जिस समय और जिस अवस्थामे मेरा प्रेमी मुझे छोड़कर गया है। उसके इसी मानसिक विश्वासने उसके शारीरिक ह्रासको रोक रक्खा था। उस समय भी वह शारीरिक दृष्टिसे ठीक उतनी ही बड़ी और वैसी ही थी जितनी बड़ी और जैसी वह पागल होनेके समय थी। उसकी मानसिक अवस्थाने उसकी शारीरिक अवस्थाको भी ठीक अपने अनुरूप ही बना रक्खा था और इसी लिए वह अब तक वृद्धा न होकर युवती ही बनी रही थी।

यदि पचास वर्षकी अवस्थामे ही किसीके सिरके बाल झड़ जायँ, दाँत टूट जायँ, आँखे जवाब दे दे और दिमाग काम न करे तो यह केवल लज्जाकी ही बात नही है बल्कि परमात्माका एक प्रकारका अपमान है। पचास वर्षकी अवस्थामे तो मनुष्यको युवक होना चाहिए और युवावस्थासे बुढ़ापेके चिह्नोका क्या सम्बन्ध और फिर मानसिक शक्ति तो बराबर बढती ही रहनी चाहिए। वृद्धावस्थाका तो मनुष्यमे केवल यही चिह्न दिखलाई देना चाहिए कि उसकी बुद्धि और अनुभव बढ़ा चढा हो, वह अधिक सुंदर और बलवान् हो और अधिक तथा उत्तम काम करे। पर यह तभी हो सकता है जब कि हम वृद्धावस्थाका ध्यान बिलकुल छोड़ दे। हम कभी यह न समझे कि हमारी अवस्था बहुत अधिक हो गई है, अब हमारा शरीर नहीं चलता, अब हमारे विश्राम करने और मरनेके दिन आ गए है। बल्कि इसके विपरीत हमे सदा

यही समझते रहना चाहिए कि हम युवक शक्तिशाली और समर्थ है और बराबर ऐसे ही बने रहेंगे।

जो व्यक्ति युवक बना रहना चाहता हो उसे उचित है कि वह यौवनके शत्रुओसे सदा दूर रहे। यौवनका सबसे अधिक नाश यही समझनेसे होता है कि हम वृद्ध हो चले है और हमे सांसारिक कार्योंसे धीरे धीरे अपना हाथ खींचना चाहिए। यदि हम युवावस्थाका अपना सारा कार्य जारी रक्खेगे, अपने मनमे कभी वृद्धावस्थाका विचार न लावेगे और अपने आपको सदा युवक ही समझते रहेगे तो फिर हम सदा युवक ही बने रहेगे। परन्तु जब हम अपने मनमे युवावस्थाकी आशाएँ, उमंगे और आकांक्षाएँ निकाल देगे और युवकोका सा आचरण छोड़ देंगे तो फिर हमारे वृद्ध होनेमे किसी प्रकारका सन्देह न रह जायगा।

एक वार एक ऐसे सज्जनसे जिनकी अवस्था बहुत अधिक हो गई थी किसीने पूछा कि इतनी अधिक अवस्था हो जानेपर भी आप बिल-कुल जवानसे क्यो माल्रम होते है। उन्होने उत्तर दिया कि मै प्रायः तीस वर्ष तक एक हाईस्कूलका प्रधानाध्यापक था और सदा अपने स्कूलके लड़कोके साथ हिला मिला और खेला कूदा करता था। मै अपने विचारो और भावनाओको सदा युवकोंके विचारों और भावनाओंके ही समान रखता था। यही कारण है कि अब तक मै बहुत कुछ जवान ही माल्रम पड़ता हूँ और इसी लिए वृद्धावस्था मुझपर अधिकार नहीं कर सकी है। बात बहुत ही ठीक है। प्रकृतिका यही सिद्धान्त और नियम है कि या तो हर एक चीज़ बढ़ती और उन्नति करती रहे और या नष्ट हो जाय। यदि हम अपनी वृद्धि रोक लेगे तो हमारा नाश अवश्यम्भावी है। इस लिए हमे अपने मनमे सदा इस बातका दृढ़

विचार रखना चाहिए कि हम सदा युवक ही वने रहेगे और अपने सव व्यवहार भी युवकोकेसे ही रखने चाहिए। हमें सदा यही समझते रहना चाहिए कि हम सदा स्वस्थ रहेगे और कभी वृद्ध न होंगे। और तव इस प्रकारके दृढ़ विचारोंका परिणाम भी इन्हींके अनुकूल देखनेमें आवेगा। यदि कोई तुमसे यह कहे भी कि तुम्हारी अवस्था अधिक हो चली है और तुम वृद्धसे माळूम होते हो, तो उन्हें उत्तर दो कि मैं कैसे वृद्ध हो सकता हूँ? मैं तो सिद्धान्त सत्य हूँ। सत्य और सिद्धान्त भी कहीं वृद्ध होता है?

यो तो हमे कभी यह नहीं सोचना चाहिए कि हम वृद्ध हो रहे हैं; पर विशेषतः सोनेके समय तो हमे वृद्धावस्थाके विचारसे और भी दूर भागना चाहिए। उस समय तो हमे अपने आपको और भी अधिक युवक समझना चाहिए। क्योकि उस समय हमारे मनमे जो विचार होता है, उसका हमारे शरीरके संघटनपर वहुत अधिक प्रभाव पड़ता है और उस प्रभावका पूरा पूरा वर्णन पिछले एक प्रकरणमें दिया जा चुका है। प्रातःकाल उठनेके समय भी हमे अपने युवक होनेका ही विचार मनमें रखना चाहिए। मतलव यह कि हर समय और हर अवस्थामे अपने सामने यौवनकी ही मूर्ति, यौवनका ही आदर्श रखना चाहिए। वृद्धावस्थाके सव प्रकारके विचारो और भावोको दूर करके हमे यही समझना चाहिए कि अवस्था अधिक होनेसे मनुष्यमे योग्यता और अनुभव आदिकी वृद्धि होती है और वह अधिक कार्य करनेके योग्य वनता है। हमारी जीवनी शक्ति दिनपर दिन वढ़ती ही जाती है और न तो उसमे किसी प्रकारका ह्रास होता है और न होना चाहिए।

यदि वास्तविक दृष्टिसे देखा जाय तो जान पड़ेगा कि प्रकृतिने हमे ।र्ण यौवन दिया है। हमारे शरीरमे जो चीज़ पुरानी और निकम्मी

होती है वह आपसे आप निकल या नष्ट हो जाती है और उसके स्थान-पर नई चीज आ जाती है। हमारे शरीरमे एक भी कोषाणु ऐसा नहीं है जो पुराना होते हीं नष्ट न हो जाता हो और जिसके स्थानपर नए कोषाणुकी सृष्टि न होती हो। इसीसे सिद्ध होता है कि वृद्धावस्था बिलकुल कृत्रिम और अप्राकृतिक है। शरीरशास्त्रके ज्ञाता हमे बतलाते हैं कि हमारे शरीरके कुछ कोषाणु तो ऐसे है जो तीन चार रोजमें बदल जाते है और कुछ ऐसे है जो कुछ हफ्तो या महीनोंमे बदलते है। अस्थियोसे सम्बन्ध रखनेवाले अंश कुछ अधिक समयमें बदलते हैं। पर फिर भी इसमे किसी प्रकारका सन्देह नही कि छः महीनेसे दो वर्षके अन्दर हमारे सारे शरीरकी कायापलट हो जाती है। आजसे दो वर्ष पहले हमारे शरीरमे जितनी चीजे थी उनमेसे एक भी आज नही रह जाती। वे सब पुरानी चीजे नष्ट हो जाती है और उनके स्थानपर बिलकुल नई चीजे आ जाती है। जब प्रकृतिकी ऐसी व्यवस्था है, तब फिर वृद्धावस्थाकी सम्भावना स्वयं हमारे विचारो और भावनाओको छोड़कर कहाँ रह गई? हमारी वृद्धावस्था तो केवल हमारे दूषित आचार-विचार और प्रकृतिविरुद्ध रहन-सहनके कारण ही होती है। यदि हम अपनी इन सब बातोको ठीक कर ले, तो फिर वृद्धावस्था कभी हमारे पास नहीं आ सकती और हम सदा सब प्रकारसे युवक ही बने रह सकते हैं।

हमारे पुराने कोषाणु तो नष्ट ही हो जाते है। अब रहे हमारे नए कोषाणु, उनपर वृद्धावस्थाका जो प्रभाव देखनेमे आता है वह केवल हमारे दूषित विचारों और रहन-सहनका ही होता है। यदि हमारे विचारोंमे बुढापा आ गया हो तो फिर उन कोपाणुओंके द्वारा हमारे शरीरपर बुढापेके लक्षण अवश्य दिखलाई पड़ने लगेगे। पर यदि हमारे मनमें यौवनके भाव होगे तो उन कोषाणुओके द्वारा हमारी युवावस्था भी

बनी रहेगी । यह तो निश्चित ही है कि हमारा यौवन या वृद्धावस्था हमारे शरीरके करोड़ो अरबो कोषाणुओंसे ही प्रकट होती है । फिर जो कोषाणु साल दो सालसे अधिक पुराने नहीं होते, वे आखिर इतने वृद्ध क्यो मालूम होते हैं ? इसी लिए कि उनपर हमारे वृद्धावस्थाके विचारोका प्रभाव पड़ता है । विचारोका यह प्रभाव बहुत ही महत्त्वपूर्ण और प्रत्येक व्यक्तिके ध्यान देने योग्य है । परन्तु यदि हमारे विचारोमे यौवनका सा भाव हो तो फिर हम कभी वृद्ध नहीं हो सकते, क्यो कि हमारा शरीर तो नित्य नया बनता ही रहता है ।

प्रायः बहुत से ऐसे नवयुवक देखे जाते हैं जिनके शरीरपर वृद्धावस्थाके अनेक लक्षण देखे जाते हैं । इसका कारण यही है कि वे प्रायः दुखी और चिन्तित रहते हैं और उनका आचार-विचार बहुत ही दूषित होता है। दुःख, चिन्ता, स्वार्थपरायणता, भय, आशंका, आदिका मनुष्यके शरीरपर बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ता है और इन सब बातोके कारण उसमें नया जीवन होते हुए भी जीवनी शक्तिका पूरा पूरा संचार नहीं होने पाता । अतः प्रत्येक समझदार व्यक्तिको सब प्रकारके दूषित और खेदोत्पादक विचारो तथा कार्योंसे बराबर बचना चाहिए । यदि हमारे विचार ठीक और शुद्ध होगे तो हमारे कोषाणु भी ठीक और शुद्ध रहेंगे और उस दशामे हम वृद्ध न हो सकेंगे । इसके लिए सबसे बड़ी आवश्यकता इस बातकी है कि हम किसी अवस्थामे भी चिन्तित या अप्रसन्न न हो । हमे सदा अपने सामने सुख, शान्ति, सामर्थ्य और आशाकी ही मूर्ति रखनी चाहिए और यह समझना चाहिए कि हम बराबर उन्हींकी ओर बढ़ रहे हैं । हमे यह समझ लेना चाहिए कि संसारका प्रत्येक अणु मूर्तिमान् स्वास्थ्य है और उसका किसी प्रकार नाश नहीं हो सकता । हममे एक ऐसी शक्ति है जो न तो कभी बीमार होती है

और न कभी मरती है। वह शक्ति ईश्वरका अंश है और उसीके द्वारा हमारा सदा सब प्रकारका कल्याण होता रहता है। अपने मनमे इस प्रकारका दृढ़ विचार रखनेका शरीरपर बहुत ही सुन्दर और शुभ परिणाम होता है।

कुछ लोग ऐसे होते है जो सदा प्रसन्न रहते है । चाहे कितनी ही वड़ी कठिनता क्यो न आ पड़े, पर वे कभी चिन्तित या दुःखी नहीं होते। ऐसे लोग प्रायः बहुत स्वस्थ और नीरोग होते है। इसका कारण यही है कि वे अपने विचारोंके द्वारा अपने शरीर और कोषाणुओको वृद्ध नही बनाते । हमें अपने समाजमे ऐसे लोगोको ढूँढना चाहिए, उनका अनुकरण करना चाहिए और उनके आदर्शसे शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। यदि हम सदा प्रसन्न रहना और अपने आपको सदा नवयुवक समझना सीख लेंगे, तो फिर हम देखेगे कि हमारे शरीरपर उसका कैसा अच्छा प्रभाव होता है और अवस्थाके अधिक होनेसे भी हम वृद्ध होनेसे किस प्रकार बच सकते है। जब हम यौवनके विचारोके अभ्यस्त हो जायँगे, तब वृद्धावस्था आपसे आप दूर चली जायगी। जब हम यह वात अच्छी तरह समझ लेंगे कि हमारा शरीर नित्य नया होता रहता है और उसके सब पुराने अंगोके स्थानपर नए अंग बनते रहते है, तब हमारे वृद्ध होनेकी कोई सम्भावना ही न रह जायगी।

उच्च आदर्शों और प्रसन्नतापूर्ण विचारोमें यौवन-रक्षाकी बहुत अधिक और विलक्षण शक्ति है। हमें उस शक्तिका अनुभव करना चाहिए और देखना चाहिए कि उसके द्वारा हम वृद्धावस्थासे कहाँ तक बच सकते हैं। यदि हम सदा कुछ न कुछ सीखनेकी चेष्टा करते रहेगे, सदा उन्नत होने और आगे बढ़नेकी चेष्टा करते रहेंगे, तो हम कभी

वृद्ध हो ही नहीं सकते। जिन कार्योंसे आदमीकी 'नैतिक, मानसिक, आत्मिक और शारीरिक उन्नति होती है, उन कार्योंसे यौवन-रक्षामें बहुत अधिक सहायता मिलती है। वृद्धावस्था तो खाली नैतिक, मानसिक और आत्मिक ह्रासके कारण ही आती है। जो लोग सब प्रकारके दुष्कर्मोंसे बचे रहते हैं, वे सदा प्रसन्न रहते है और जो लोग सदा प्रसन्न रहते है वे कभी वृद्ध हो ही नही सकते। यदि हमे जीवनसे किसी प्रकारका सुख न मिलता हो, तो फिर हमारे वृद्ध होनेमे अधिक समय नहीं लगता। अतः सब लोगोको सदा प्रसन्नतापूर्ण जीवन व्यतीत करना चाहिए। जीवन सदा आदर्श होना चाहिए और आदर्शमें कभी वृद्धावस्था आती ही नहीं। हमे सदा अपने आपको नवयुवक समझना चाहिए और वृद्धावस्थाका कभी ध्यान भी न करना चाहिए। जो अमृत हमारे यौवनको स्थायी रख सकता है वह कहीं बाहर नहीं है, बल्कि स्वयं हमारे शरीरमे ही है। हमे केवल उचित रूपसे विचार करने और उचित रूपसे जीवन व्यतीत करनेकी आवश्यकता है।

वृद्धावस्थाको रोकनेके लिए संसारमे जितनी ओषधियाँ हैं, उन सबसे बढ़कर प्रेम है। यदि हम सब प्रकारके भले कामोसे प्रेम रक्खे, अपने सब मित्रो और सम्बन्धियोसे प्रेम रक्खे, यहाँ तक कि जीव और वस्तु मात्रसे प्रेम रक्खे तो कभी वृद्ध हो ही नहीं सकते। प्रेमके द्वारा मनुष्यमें बहुत ही उच्च तथा सुन्दर विचार और भावनाएँ होती है, जिनके द्वारा मनुष्यका यौवन स्थायी होता है। किसी व्यक्ति या वस्तुके सम्बन्धमें विचार करनेके समय हमे सदा इस बातका ध्यान रखना चाहिए कि उसमें कुछ ईश्वरीय अंश है। बस इससे बुरे विचारो और दूषित भावनाओका आपसे आप नाश हो जायगा। और जब बुरे विचार तथा भावनाएँ दूर हो जायँगी तब मन और जीवन आपसे आप शुद्ध

हो जायगा और उसमें एक ऐसा वल आ जायगा जिससे वृद्धावस्था कभी पास आ ही नहीं सकती।

मनुष्य मृत्युसे सदा डरता रहता है और उसकी बहुत अधिक दिनों तक जीवित रहनेकी वड़ी कामना होती है। यदि हम यह मान ले कि ईश्वरने हममे जीवित रहनेकी लालसा तो भर दी है; पर हमारे अधिक समय तक जीवित रहनेका कोई साधन हममें उत्पन्न नहीं किया, तो ईश्वर वड़ी भारी भूल करनेका दोषी ठहरता है। जब हम सृष्टिके अन्यान्य जीवोके जीवन और आयु आदिकी ओर ध्यान देते है, तो हमे मानना पड़ता है कि मनुष्य आजकलकी अपनी औसत आयुसे कहीं अधिक वड़ी आयु भोगनेके लिए बनाया गया है। स्वयं मनुष्यका शारीरिक संघटन ही यह बात सिद्ध करता है कि उसकी आयु बहुत अधिक है। हमारे यहाँ शास्त्रोंमें मनुष्यकी आयु सौ वर्षकी कही गई है और कभी कभी लोग उससे भी कहीं अधिक आयु भोगते हुए देखे गए है। परन्तु यदि साधारणतः लोग इतनी आयु तक न पहुँचकर चालीस, पचास या साठ वर्षकी अवस्थामे ही कालके मुखमे समा जायँ, तो इसमे दोष किसका है? हमे उत्पन्न करनेवाले उस परमात्माका या स्वयं हमारा? हम तो समझते हैं कि दोष सोलहो आने हमारा ही है। लोग कहा करते हैं कि सौ वर्षकी आयु तो सतयुगमे हुआ करती थी, यह तो कलियुग है। तो फिर हम इस कलियुगको ही सतयुग क्यो न वनानेका प्रयत्न करे? अपनी शारीरिक, मानसिक तथा आत्मिक दुर्बलताएँ हम स्वयं ही दूर कर सकते है। इसी लिए भगवान् श्रीकृष्णने अर्जुनको उपदेश दिया था—

उद्धरेदात्मनाऽऽत्मानं नात्मानमवसादयेत्।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः॥ ५-६॥

११—आत्मविश्वास

किसीने कहा है कि यदि किसीमें पर्वतों तकको हिला देनेकी शक्ति है, तो वह केवल आत्मविश्वासमें ही है। संसारकी सब प्रकारकी शक्तियाँ केवल आत्मविश्वाससे ही उत्पन्न होती है। हम चाहे कितना ही बड़ेसे बड़ा काम क्यो न करना चाहें, यदि हममें अपनी शक्तिपर पूरा पूरा भरोसा है तो वह काम हम बहुत सहजमे और अवश्य कर लेंगे। हम जिस कामके करनेपर यह समझकर तुल जायँगे कि इसे हम अवश्य ही पूरा कर लेंगे, तो फिर उसके पूरा होनेमे कोई शक्ति बाधा नहीं डाल सकती। सच तो यह है कि हममे जिस सीमा तक आत्म-विश्वास होता है उस सीमा तक हम कोई काम भी कर सकते हैं। जिसमें आत्मविश्वासकी मात्रा जितनी ही अधिक होगी वह उतने ही बड़े और भारी काम कर सकेगा। भला जो आदमी यह समझकर पहलेसे ही हिम्मत हार जाय कि यह काम मुझसे न होगा वह उस कामको क्या पूरा करेगा?

यदि हम अपनी शक्तियोंपर पूरा पूरा भरोसा करके किसी काममें लग जायँ और उस समय कोई व्यक्ति आकर हमसे कहे कि तुम इस काममें व्यर्थ लगे हो, तुमसे वह कदापि न होगा, तो हमें उस व्यक्तिको अपना पूरा पूरा शत्रु ही समझना चाहिए। ऐसे आदमियोसे हमे सदा दूर रहना चाहिए जो हमें उत्साहित करनेके बदले उलटे हमें निरुत्सा-हित करें। क्योंकि ऐसे ही आदमी हमें ऊपर चढ़नेसे रोकते और नीचेकी ओर ढकेलते है।

इस समय हमें मानव समाजकी जो इतनी अधिक उन्नति दिखाई दे रही है वह केवल ऐसे ही महानुभावोंके द्वारा हुई है जिनका आत्म-विश्वास असीम और अमर्यादित था। जिस समय सारा संसार उनकी हँसी उड़ाता है, उन्हें कोई बड़ा काम करनेके अयोग्य समझता है और उनके सत्साहसको दुस्साहस समझता हुआ उनकी निन्दा करता है, उस समय ऐसे लोग इन बातोंकी कुछ भी परवाह न करते हुए और अपनी शक्तियोंपर पूरा पूरा विश्वास रखते हुए अपनी कल्पनाओको मूर्त्त-स्वरूप देनेका प्रयत्न करते रहते हैं और अन्तमें पूर्ण रूपसे सफलमनोरथ होते हैं। यदि संसारमें इस प्रकारके महात्मा न उत्पन्न हुए होते, तो सम्भवतः अब तक भी संसार अपनी उसी आरम्भिक अवस्थामे, उसी जंगलीपनकी हालतमें, दिखाई देता। आजकी सी उन्नतिका कहीं नाम भी न होता।

जब तक हम किसी प्रकारकी सफलताकी कामना न करें और अपने आपको उस सफलताके योग्य न बना लें, तब तक संसारकी और कोई शक्ति हमें सफल नहीं बना सकती। सफल-मनोरथ होनेके लिए सबसे पहले दृढ आत्म-विश्वासकी आवश्यकता होती है। बिना आत्म-विश्वासके संसारमें कभी कोई काम नहीं होता। संसारका कोई काम केवल संयोगवश ही नहीं हो जाया करता। हर एक कामके लिए एक नियम होता है और जब तक उस नियमका पालन न हो तबतक वह काम कभी पूरा नहीं होता। प्रत्येक कार्यके लिए एक कारणकी आवश्यकता होती है ओर वह कारण भी उतना ही बड़ा होना चाहिए जितना बड़ा कि वह कार्य हो। इसी लिए महान् सफलताका उद्गम भी महान् आशा और विश्वासमें होता है। हमारी चाहे कितनी ही अधिक शिक्षा क्यों न हुई हो, हममें चाहे सब प्रकारके कितने ही अधिक गुण

क्यों न हो; परन्तु फिर भी हमारी सफलता कभी हमारे विश्वाससे वढ-कर नही हो सकती। जो आदमी यह समझता है कि हम अमुक काम कर सकेंगे वही वह काम कर सकता है और जो आदमी यह समझता है कि हमसे यह काम न हो सकेगा, उसके किए वह काम सचमुच कभी न हो सकेगा। यह एक ऐसा नियम है जिसमे किसी प्रकारका अपवाद नहीं है।

लोग चाहे हमारे विचारोकी हँसी उड़ावें और चाहे हमे हवाई किले बाँधनेवाला समझे; परन्तु यदि हममें पूर्ण आत्म-विश्वास होगा तो हम हवामें किला बनाकर भी उन हँसनेवालोको लज्जित कर देंगे। परन्तु यदि हममे अपने आपपर विश्वास ही न होगा, तो फिर हम क्या करेंगे? कुछ भी नही। ज्यों ही हम अपने आपपर अविश्वास करते हैं, त्यो ही मानो हम अपनी सारी शक्तियोंका नाश कर बैठते है। चाहे हमारी सारी सम्पत्ति नष्ट हो जाय, हमारी तन्दुरुस्ती भी जवाव दे दे और संसारमे कोई हमारा विश्वास न करे, हमे इन सब वातोंकी कभी परवाह न करनी चाहिए। क्योकि जब तक हममे आत्म-विश्वास है, तव तक हम संसारमें सब कुछ करके दिखला सकते है। संसारमें न तो कोई ऐसा व्यक्ति होना चाहिए और न कोई ऐसी विपत्ति होनी चाहिए, जो हमारे आत्म-विश्वा-सको आघात पहुँचा सके। यदि हम अपने आपपर विश्वास रखते हुए सदा आगे बढते रहेगे, तो संसार आपसे आप हमारे लिए मार्ग बनाने लगेगा।

एक बार कोई सिपाही एक पत्र लेकर नेपोलियनके पास गया। नेपो-लियनके सामने पहुँचते पहुँचते पत्र देनेसे पहले ही उसका घोड़ा गिर पड़ा ौर मर गया। नेपोलियनने वह पत्र पढ़कर उसका उत्तर लिखवाया और उस

सिपाहीको देकर कहा कि तुम अभी मेरे घोडेपर सवार होकर जाओ और अभी यह उत्तर पहुंचाओ। उस सिपाहीने नेपोलियनके घोडेकी ओर देखकर झिझकते हुए कहा—नहीं श्रीमान्, यह ऐसा बढिया घोड़ा मेरे चढ़नेके योग्य नहीं है। नेपोलियनने तुरन्त उत्तर दिया—संसारमे कोई चीज ऐसी बढ़िया नहीं है जो एक फ्रान्सीसी सिपाहीके योग्य न हो।

संसार प्रायः ऐसे ही लोगोसे भरा हुआ है जो इस फ्रान्सीसी सिपाहीकी भाँति यही समझते हैं कि औरोंके पास जो बढिया बढिया चीजें है हम उनके योग्य नहीं है और यही कारण है कि उन बढिया चीजोंके योग्य बहुत कम लोग निकलते है। परन्तु जो लोग अपने आपको अच्छीसे अच्छी चीजके योग्य समझते हैं, वही वे चीजे प्राप्त भी कर सकते है। जब हम खुद ही अपने आपको बौना समझते हैं, तब हम देवोंकेसे काम कैसे कर सकते हैं? जब हम पहलेसे ही अपने आपको सब प्रकारसे अयोग्य, असमर्थ और अभागा समझते है, तो फिर हम क्योंकर योग्य, समर्थ और भाग्यवान् हो सकते है? जो लोग संसारमें बहुत बड़े काम कर सकनेके योग्य होते है, वे भी अपने आपको अयोग्य और असमर्थ समझ कर केवल छोटे मोटे कामोसे ही सन्तुष्ट हो बैठते है और कभी कोई बड़ा काम नहीं कर पाते। वे अपनी शक्तियोंका पूरा पूरा उपयोग करना जानते ही नहीं, बल्कि यों कहना चाहिए कि वे अपनी शक्तियोंसे परिचित ही नहीं होते। भला ऐसे आदमी शक्ति रखते हुए भी उसका क्या उपयोग कर सकते है? बल्कि हम तो यहाँ तक कह सकते हैं कि ससारमें बहुत ही थोड़े लोग ऐसे है जो अपनी आधी शक्तियोंसे भी भली भाँति परिचित हो। बहुत बड़ी संख्या ऐसे ही लोगोंकी है, जो सब प्रकारकी शक्तियाँ रखते हुए भी अपने आपको नितान्त अयोग्य और असमर्थ समझते है और फलतः

अयोग्यों तथा-असमर्थोंका सा जीवन व्यतीत करके इस संसारसे चले जाते है। इस प्रकार हम केवल अपनी ही हानि नही करते बल्कि सारे संसारकी हानि करते हैं।

जो आदमी अपने आपको मिट्टी समझता हो, उसका परिणाम कुचले जानेके सिवा और क्या हो सकता है? अपने आपको दुर्बल, अयोग्य और असमर्थ समझना ही दुर्बल, अयोग्य तथा असमर्थ बनना है। परन्तु जो व्यक्ति अपनी शक्तियोपर विश्वास रखता है, जो कठिनसे कठिन कार्योंको भी अपने करनेके योग्य समझता है, वह मानो अपने चारों ओर ऐसी परिस्थिति उत्पन्न कर लेता है, जो उसके सफल और विजयी होनेके लिए परम अनुकूल होती है। अपने आपको कोई काम करनेके योग्य समझना ही मानो वह काम आधेसे अधिक कर डालना है।

हम प्रायः लोगोको किसीके सम्बन्धमे यह कहते हुए सुनते हैं कि वाह वाह उनका क्या कहना है। वे तो बड़े भाग्यवान् है। उनके सब काम आपसे आप हो जाते है। वे अगर मिट्टीको भी छू दे, तो वह सोना हो जाती है। पर वास्तवमे किसीके सम्बन्धमे ऐसी बात केवल भाग्यसे नही होती। इतने बड़े भाग्यवान् होनेके लिए मनुष्यको विचार-शील, दृढप्रतिज्ञ और आत्मविश्वासी होना पड़ता है। जो व्यक्ति किसी क्षेत्रमे पहुँचनेसे पहले ही अच्छी तरह यह बात समझे हुए रहता है कि मै अवश्य सफलमनोरथ और विजयी होऊँगा वह मानो सफल और विजयी होनेकी परिस्थितियोको अपने साथ लेकर चलता है। ऐसा आदमी स्वयं अपने आत्म-विश्वाससे तो शक्ति प्राप्त करता ही है, अपने मित्रो और परिचितोसे भी शक्ति प्राप्त करता है। क्योंकि उसके मित्र उसकी योग्यता और उसकी कार्यकुशलतासे परिचित होते है और सदा सब प्रकारसे उसे उत्साहित करते रहते है। फिर भला ऐसे आदमीके सफ-

लमनोरथ और विजयी होनेमे क्या सन्देह हो सकता है ? अब भी संसारके कई भागोमे कुछ ऐसे जंगली पाए जाते है जो यह समझते है कि जिन शत्रुओंपर हम विजय प्राप्त करते है उनकी सारी शक्ति हमारे शरीरमे आ जाती है। एक तरहसे यह बात बहुत ठीक है। संसारके प्रायः सभी क्षेत्रो और सभी कार्योंमे यह बात देखी जाती है कि जब हम किसी एक काममे सफल होते है, तब हममे एक ऐसा उत्साह आ जाता है जो हमे उससे अधिक कठिन या बड़ा काम करनेके योग्य बना देता है। इस प्रकार हम ज्यों ज्यों काम करते जाते है त्यो त्यो हमारी शक्ति और योग्यता उत्तरोत्तर बढती जाती है। इसलिए यदि जंगलियोका यह विश्वास हो कि हम जिन शत्रुओंपर विजय प्राप्त करते है उनकी शक्ति भी हममे आ जाती है, तो इसमे कुछ अनौचित्य नहीं है।

यदि हम कोई बड़ा काम करना चाहते हो तो हमे उचित है कि सबसे पहले अपनी सारी विचारशक्ति, अपना सारा ध्यान, उसी बातपर जमा दे और अपने मनमे इस बातका दृढ विश्वास कर ले कि हम यह काम अवश्य और बहुत सहजमे कर लेंगे, तो हमारा वह विश्वास अवश्य फलदायक होगा; हमारे हाथसे वह काम अवश्य पूरा उतर जायगा।

हमारी जितनी मानसिक और शारीरिक शक्तियाँ है, आत्म-विश्वास उन सबका सरदार है। वह स्वयं तो जो काम करता है वह करता ही है, हमारी सब शक्तियोंमे दूना और तिगुना बल पहुँचाता है। जबतक आत्म-विश्वास रूपी सेनापति आगे नहीं बढता, तबतक और सब शक्तियाँ चुपचाप खड़ी उसका मुँह ताका करती है। पर जब आत्म-विश्वास अपना पूरा पूरा काम करने लगता है, तब बिलकुल दबी हुई शक्तियाँ भी उठ खड़ी होती है और हमे आपसे आप ले चलकर सफलता तथा विजय तक पहुँचा देती है। जब आत्म-विश्वासके कारण हममे साहस उत्पन्न होता

है, तब हमारी कोई शक्ति ऐसी नहीं रह जाती जो अपना पूरा पूरा काम न करती हो। आदमी तो खैर आदमी ही है, घुड़दौड़का घोड़ा भी तबतक दौड़मे नही जीत सकता जबतक उसमे पूरा पूरा आत्म-विश्वास न हो।

सभी लोग किसी न किसी तरहका काम करते हैं, पर उनमेसे सफलमनोरथ होनेवाले बहुत ही थोड़े होते है, अधिकांश विफल होकर ही रह जाते है। इसका कारण यही है कि उनमें विचारोंकी दृढता नही होती। विजयी वही होता है जो यह बात अच्छी तरह समझ लेता है कि चाहे कुछ भी हो मै बिना विजय प्राप्त किए कभी चैन न लूँगा। एक प्रकारकी ऐसी दृढता, एक प्रकारका ऐसा विश्वास होता है, जो कभी पीछे हटना जानता ही नही। ऐसा ही विश्वास, ऐसी ही दृढता, मनुष्यको बड़ी बड़ी कठिनाइयोका सामना करके अग्रसर होनेमे समर्थ करती है। परन्तु जहाँ जरा भी अनिश्चय, जरा भी अविश्वास हुआ कि सारा काम चौपट हो जाता है। सफल और विफल विजयी और पराजितमे बस यही अन्तर है, जो देखनेमे तो बहुत थोड़ा जान पड़ता है पर जिसका परिणाम बहुत अधिक बड़ा और व्यापक होता है। अतः जो लोग किसी काममे पूरी पूरी सफलता प्राप्त करना चाहते हो, उन्हे सबसे पहले अपने विचारो और भावोमे परिवर्तन करना चाहिए। उन्हे अपने मनसे शंका, झिझक, अनिश्चय, अविश्वास आदि घातक बातोंको बिलकुल निकाल देना चाहिए और अपने आपपर पूरा पूरा विश्वास रखते हुए और सफलताकी पूरी पूरी आशा रखते हुए काममे लग जाना चाहिए। उस समय वे देखेगे कि सफलता कितनी जल्दी, कितना आपसे आप, उनके पास आ पहुँचती है। उस समय उन्हे आत्म-विश्वासके इस शुभ रि... आश्चर्य होगा। वे समझ लेगे कि हमे एक ऐसा मूल मन्त्र

मिल गया है, जो हमें सदा सब कार्योंमे विजयी बना सकता है; फिर आशंका, सन्देह, अनिश्चय या अविश्वास उनके पास भी न फटक सकेगा।

हम जो कार्य वास्तवमें सम्पादन करना चाहते हो, उसका आविर्भाव सबसे पहले विचारमें होना चाहिए। यदि हममे अभिप्रेत या इच्छित वस्तुका ठीक ठीक परिज्ञान हो और उसे प्राप्त करनेकी हममें बलवती कामना हो, तो हमारी सफलताका मार्ग बहुत कुछ परिष्कृत हो जाता है। यदि आरम्भमे हमारा विचार ही निर्बल होगा, तो उसकी पूर्ति क्या होगी? आज तक संसारमे जितने बड़े बड़े काम हुए है वे प्रबल कामना और बलवती इच्छाके ही कारण हुए है। बड़े कामोंमे पहले चारों ओरसे निराशा ही निराशा दिखाई देती है, कहीं किसी ओर प्रकाशका नाम तक नहीं दिखाई देता। परन्तु केवल बलवती कामना और प्रबल इच्छाके कारण उत्पन्न उत्साह और साहससे वे बड़े बड़े काम अन्तमे पूरे होकर ही रहते हैं। इसीके कारण लोग बड़ेसे बड़ा आत्मत्याग करनेके लिए तैयार हो जाते है और जिन बातोका होना स्वप्नमे भी असम्भव समझा जाता है, वही बाते प्रत्यक्ष रूपमे कर दिखलाते है। इसका कारण यही है कि हमारा विचार और हमारा विश्वास जैसा होता है वैसे ही हम भी हो जाते है। जिस आदमीमे विश्वासकी जितनी ही कमी होती है, उसे प्राप्ति भी उतनी ही कम होती है। पर जिसका विश्वास पूरा और दृढ होता है, उसीको अधिक प्राप्ति होती है। मतलब यह कि विश्वासकी मात्राका सफलताकी मात्राके साथ बहुत ही घनिष्ठ सम्बन्ध है।

जो लोग केवल अपने ही पुरुषार्थ और बाहुबलसे इस संसारमे महान् हुए है, यदि उनकी जीवनियों और कार्योंपर भली भाँति विचार किया

जाय, तो जान पड़ेगा कि आरम्भसे ही उनमें बहुत अधिक आत्म-विश्वास था। उनमे अध्यवसाय भी बहुत अधिक था। वे अपनी धुनके पक्के थे और उन्हे अपनी योग्यताका पूरा भरोसा और सफलताका पूरा विश्वास था। उनकी मानसिक प्रवृत्ति दृढ़तापूर्वक उनके उद्देश्य या लक्ष्यकी ओर लगी हुई थी और जो आशंकाएँ तथा भय आदि साधारण योग्यता तथा विश्वासके लोगोको आगे बढने नही देते थे वे उनके पास तक नहीं फटकने पाते थे। यही कारण था कि ज्यों ज्यो वे महात्मा आगे बढते थे त्यो त्यो संसार आपसे आप उनके लिए मार्ग बनाता जाता था।

जिन लोगोको हम किसी काममे बहुत अधिक सफलता प्राप्त करते हुए देखते हैं, उनके सम्बन्धमे हम और तो सैकड़ो हजारो तरहकी बाते सोच जाते है, पर वास्तवमे उनकी सफलताका जो मूल कारण होता है उसकी ओर हम ध्यान ही नहीं देते। हम यह तो कहने लगते हैं कि वे बड़े भाग्यवान् हैं, बड़े चालाक है, बड़े बड़े लोगो तक बहुत जल्दी पहुँच जाते हैं, उनकी रिश्तेदारी अच्छे अच्छे लोगोमे है, आदि आदि। परन्तु उनमे जो वास्तविक गुण होते है और जिनके कारण उन्हे सफलता होती है, उन गुणोकी ओर हमारा ध्यान ही नहीं जाता। सफलताके लिए सबसे पहले कोई नई बात निकालनेकी आवश्यकता होती है, फिर उसके सम्बन्धमे निरन्तर विचार करना पड़ता है और तब अन्त तक उसके लिए दृढतापूर्वक प्रयत्न करना पड़ता है। वास्तवमे वे अपनी समस्त मानसिक शक्तियाँ उसी कार्यके सम्पादनमे लगा देते हैं और अपनी सफलताका दृढ विश्वास रखते हैं। वे अपने मस्तिष्कमे जिस पदार्थका चित्र बनाते हैं, उसे वे प्रत्यक्ष रूपमे भी गढ़कर दिखला देते है। बस यही उनकी सफलताका मुख्य रहस्य होता है और इसीका हमे भी ध्यान रखना चाहिए।

हमे अपनी सफलताका विश्वास तो होना ही चाहिए, पर वह विश्वास अधूरा या अधकचरा नहीं होना चाहिए; वल्कि अधिकसे अधिक जितना दृढ हो सकता हो उतना और हार्दिक होना चाहिए । अर्थात् हमे अपनी सफलतामे कभी तिलमात्र भी सन्देह नही होना चाहिए। सफलतामे जितना ही सन्देह होता है, प्रयत्नमें उतनी ही दुर्वलता आती है और फिर सफलता उतनी ही दूर हो जाती है। दृढ विश्वास ही सफलताकी जान है। भीषण ताप ही धातुओंको गलाता है। इसी प्रकार पूर्ण अध्यवसाय और दृढ विश्वास ही कठिनसे कठिन कार्य सिद्ध करता है। जिस काममे पूरी तरहसे जी नहीं लगता वह कभी पूरा नही होता । समाजमे साधारण कोटिके लोगोकी संख्या इसी लिए अधिक है कि अधिकांश लोग पूरा जी लगाकर कोई काम नहीं करते। उनका निश्चय और प्रयत्न दोनो ही अधूरे और वेदम होते है और इसी लिए उनको कभी पूरी और ठीक सफलता नहीं होती।

सफलताके लिए ऐसे दृढ निश्चयकी आवश्यकता है जो कभी परा-ङ्मुख या पराजित होना जानता ही न हो । ऐसा निश्चय मनुष्यको सदा आगे ही वढ़ाता चलता है और चाहे कितनी ही जोखिम क्यो न सहनी पड़े, उसे कभी पीछे नही हटने देता। जव किसी मनुष्यका अपनी शक्ति और योग्यतापर विश्वास नहीं रह जाता, तव वह सफल-ताके लिए पूरा प्रयत्न करना छोड़ देता है और उसका प्रयत्न अधूरा रह जाता है । उस समय उसकी और तो कोई सहायता की ही नहीं जा सकती; यदि कुछ किया जा सकता है, तो केवल यही कि उसमे फिरसे आत्म-विश्वास उत्पन्न किया जाय और उसके मस्तिष्कसे यह विचार निकाल दिया जाय कि सव काम भाग्य या संयोगसे होते है और उसके मनमे यह वात वैठा देनी चाहिए कि सफलता पूरा पूरा

प्रयत्न करनेसे ही होती है; ईश्वरने उसे केवल भाग्य या संयोगपर निर्भर नही रक्खा है। उसे यह बात अच्छी तरह समझा देनी चाहिए कि यदि भाग्य कोई चीज है, तो तुम उससे भी बढकर कुछ हो; बल्कि तुम स्वयं उस भाग्यके विधाता हो। उसे समझा देना चाहिए कि स्वयं तुममे ही एक ऐसी शक्ति है, जिसका मुकाबला कोई बाहरी शक्ति नही कर सकती। बस, जब उस आदमीमे इतनी दृढता, इतना साहस, और इतना विश्वास आ जायगा, तब उसके सब काम आपसे आप होने लग जायँगे और उसके मार्गकी कठिनाइयाँ आपसे आप दूर होने लगेगी।

हममे जिस बातकी जितनी ही अधिक लगन होगी, जिस कामके लिए हम जितने ही अधिक तन्मय होंगे, वह बात—वह काम हम उतना ही अधिक, उतना ही उत्तम और उतना ही सहजमे कर सकेंगे। हम नीचेकी ओर देखकर अपने आपको और नीचे गिरा देते हैं। पर हमे सदा ऊपरकी ओर, सदा आगेकी ओर, अपनी दृष्टि रखनी चाहिए। तभी हम आदर्श उच्चता और महत्ता तक पहुँच सकते है। जो व्यक्ति दृढतापूर्वक कार्यसिद्धिकी ओर अग्रसर होता है, वह सफलता तक नही पहुँचता; बल्कि स्वयं ही मूर्त्तिमान सफलता हो जाता है। फिर उसे बाहरसे सफलता प्राप्त करनेकी नहीं रह जाती। वह स्वयं ही अपने आपमेसे सफलताका निर्माण कर लेता है। यही सफलताका मूल मन्त्र और यही मुख्य रहस्य है। इसे हृदयंगम कर लेनेपर कभी विफल या निराश होनेकी नौबत नही आती। ऐसा व्यक्ति स्वयं एक प्रकाश बन जाता है और जहाँ प्रकाश हो वहाँ अन्धकारका प्रवेश क्योकर हो सकता है?

जो काम देखनेमे असम्भव या बहुत कठिन जान पड़ता हो, यदि वो काम कोई आदमी साहसपूर्वक करने लग जाय और साथ ही उसे

अपनी सफलताका पूर्ण निश्चय भी हो, तो इससे यही सिद्ध होता है कि उस आदमीमें अवश्य कार्य करनेका कोई बहुत बड़ा गुण है और वह काम करनेके योग्य है। और काम करनेके लिए इसी गुणकी सबसे अधिक आवश्यकता होती है। जिसमे यह गुण होगा, वह अन्यान्य बड़े बड़े गुणोंके न होनेपर भी कठिनसे कठिन काम कर ले जायगा। परन्तु यदि उसमें यही मूल गुण न होगा, तो फिर चाहे उसमें और कितने ही बड़े गुण क्यो न हो पर प्रायः उसे विफलमनोरथ ही होना पड़ेगा। वह आत्म-विश्वास ही है, जो मनुष्यमे ईश्वरीय गुण और ईश्वरीय शक्ति उत्पन्न करता है। अपने आपमे सामर्थ्य और बल आदिका अनुभव करना मानो अपने आपमें ईश्वरीय शक्तिका अनुभव करना है और जब मनुष्यमे ईश्वरीय शक्ति आ जाय, तो फिर उसके लिए कोई कार्य असम्भव नहीं रह जाता।

जिस कोलम्बसने अमेरिकाका पता लगाया था, वह आत्म-विश्वासकी मानो प्रत्यक्ष मूर्ति था। स्पेनके राजमन्त्री उसकी हँसी उडाया करते थे और उसके विचारों तथा बातोमे उन्हे पागलपनका भान होता था। यदि वह उन लोगोके हँसी उड़ानेपर ध्यान देता तो कमसे कम उसे तो अमेरिकाका पता लगानेका कभी सौभाग्य प्राप्त न होता। फिर उसके बाद और कोई चाहे पता लगाता या न लगाता। पर नही, वह अपनी धुनका पक्का था और उसे अपने आपपर पूरा पूरा भरोसा था। वह अच्छी तरह जानता था कि मै जो कुछ सोचता या समझता हूँ, वह बहुत ठीक है और उसे मै पूरा कर दिखलाऊँगा। वह एक छोटेसे जहाजपर सवार होकर अज्ञात समुद्रमें चल पड़ा। उसके साथी मल्लाहोंने उसका बहुत विरोध किया और घर लौट चलनेके लिए बहुत जोर दिया; परन्तु वह उन लोगोकी बातोंमें नही आया। वह एक खास

कामके लिए घरसे निकला था। वह समझता था कि मैं यह काम अवश्य करूँगा और इसी लिए वह विना काम किए घर नहीं लौट सकता था। मल्लाहों तथा दूसरे साथियोंने विद्रोह किया और उसे चुप-चाप उठाकर समुद्रमें फेंक देने तकका विचार किया; परन्तु वह बराबर आगे बढ़ता गया और नित्य प्रति अपनी डायरीमें यही लिखता गया कि आज हम अपने रास्तेपर पश्चिमकी ओर बढ़े और अन्तमें उसके इस दृढ निश्चयका जो परिणाम हुआ उससे सारे संसारकी काया पलट गई।

यदि ध्यानपूर्वक देखा जाय तो इस प्रकारके सैकड़ों हजारों महापुरुष मिलेंगे, जिन्होंने केवल अपने अध्यवसाय, दृढ निश्चय और आत्म-विश्वासके भरोसे ही संसारमें असम्भव समझी जानेवाली सैकड़ों हजारों बातोंको सम्भव कर दिखलाया और इस प्रकार सिद्ध कर दिया कि दृढ निश्चय और आत्म-विश्वासके सामने संसारमें कोई बात असम्भव नहीं है। कोई ऐसा आविष्कारक, कोई ऐसा धर्मप्रवर्तक, कोई ऐसा वीर, कोई ऐसा महापुरुष नहीं हुआ जिसमें दृढ निश्चय और आत्म-विश्वास न हो। सच तो यह है कि विना इन दोनों बातोंके मनुष्यमें महत्त्व आ ही नहीं सकता। वह किसी प्रकार बड़ा बन ही नहीं सकता। यही बातें ऐसी हैं जो अन्तमें मनुष्यको पूर्ण सफल और विजयी बनाकर छोड़ती है। वास्तविक बात यह है कि महत्ता तो ईश्वर स्वयं ही हममें भर देता है, पर हम उसपर उचित ध्यान नहीं देते और जबरदस्ती अपने आपमें अयोग्यता और तुच्छता आदिका आरोप करके अयोग्य और तुच्छ बन जाते है। परन्तु यदि हम अपने विचारोंको कुछ और प्रशस्त करें, अपनी दृष्टि कुछ और विस्तृत करें, तो अनायास ही हम उन गुणोंसे अलंकृत हो सकते है, जो किसी वीर या महापुरुषमे पाए जाते है। यदि हम नीचेकी ओर देखना छोडकर ऊपरकी ओर देखना

आरम्भ करे, तो अवश्य ही उस स्थानपर पहुँच सकते है, जहाँ महत्ताके सिवा और कुछ है ही नही ।

यदि मनुष्यकी अवनतिका कोई सबसे बड़ा कारण है अथवा हो सकता है, तो वह एक ही कारण है और वह कारण है अपना ठीक ठीक महत्त्व न समझना, अपने आपको स्वयं अपनी नजरोमे गिरा देना। अपने आपको अयोग्य समझनेसे बढकर मूर्खतापूर्ण विचार संसारमे और कोई नहीं हो सकता। क्योकि जो आदमी खुद ही यह समझता हो कि अमुक कार्य मुझसे नही हो सकेगा, उस आदमीसे वह कार्य संसारकी और कोई शक्ति नहीं करा सकती। सबसे पहले आत्म-विश्वासको मार्ग प्रदर्शन करना पड़ता है। तब उसके पीछे पीछे और शक्तियाँ चलती है। यदि हम अपने लिए पहलेसे ही बहुत ही संकुचित सीमा निर्धारित कर ले, तो फिर उस सीमासे आगे बढनेका हमे और अधिकार ही नहीं रह जाता। इसलिए हमे अपना उद्देश्य अधिकसे अधिक आगे बढा ले जाना चाहिए जिसमे हमे आगे बढनेके लिए बराबर स्थान मिलता रहे और कहीं पहुँचकर रुकना न पड़े।

हम यह बात मानते है कि किसी व्यक्तिके लिए अपने आपको बहुत बड़ा समझना और अपने मनमे ऊँचीसे ऊँची कल्पनाओको स्थान देना बहुत ही कठिन है। परन्तु उससे भी बढ़कर कठिनता तो यह है कि बिना ऐसा किए वह कभी महान् वीर और विजयी हो ही नहीं सकता। मनुष्य जबतक ऊँची बातोकी कल्पना न करे और उन कल्पनाओको कार्य रूपमे परिणत करनेके लिए अपनी योग्यता और बलपर पूरा पूरा भरोसा न रक्खे, तब तक वह आगे बढ ही नही सकता। सबसे पहले स्वयं उच्चाकांक्षी होना ही योग्यताका एक बहुत बड़ा प्रमाण है और यदि साथमे यह भी विश्वास हो कि हम अपनी आकांक्षा अवश्य

पूरी कर लेंगे, तो फिर उसकी योग्यतामे और किसी बातकी कसर ही नहीं रह जाती। जिस परमात्माने हममे उच्चाकांक्षाएँ उत्पन्न कीं है, उसने साथ ही उसकी पूर्त्तिके साधन भी हममें रख दिए है। उसने हमे व्यर्थ इधर उधर टक्करे मारनेके लिए नहीं पैदा किया है; बल्कि किसी विशेष उद्देश्यकी पूर्त्तिके लिए उत्पन्न किया है। अतः हमे सदा यह विश्वास रखना चाहिए कि हममे उस उद्देश्यकी पूर्त्तिका सामर्थ्य भी अवश्य है। तभी हम वास्तवमे उस उद्देश्यकी पूर्त्ति भी कर सकते है और अपना जन्म तथा ईश्वरका प्रयत्न दोनो सफल कर सकते हैं।

हमारे जीवनमे जितनी घटनाएँ होती है, अथवा जितने कार्य होते है उन सबका कारण स्वय हममे उपस्थित रहता है। हमींसे सब कार्य निकलते है। जहाँ जो चीज पहले पहल दिखलाई पड़ती है वह वहींसे उत्पन्न होती है। हम जिस बातकी कामना करते है और जिसके लिए प्रयत्न करते हैं वही काम हमसे होता है। हममे एक ऐसी शक्ति होती है जो उस काम या बातको आपसे आप आकृष्ट करके हम तक पहुँचा देती है। अतः यदि हम किसी व्यक्तिको किसी क्षेत्रमें बहुत अधिक सफलता प्राप्त करते हुए देखें, तो हमें समझ लेना चाहिए कि उसने उसी सफलताका विचार किया है, उसीके लिए प्रयत्न किया है, उसीके लिए अपने आपको योग्य समझा है और उसीके लिए अपने आपको समर्थ वनाया है। उसने जो पद या मर्यादा आदि प्राप्त की है, वह स्वयं उसके विचारो और प्रवृत्तियोका फल है। इसलिए अपने देशके नवयुवकोको हम सबसे पहले और सबसे बड़ी यही सलाह देगे कि अपने आपपर जहाँ तक अधिक हो सके, विश्वास करो। अर्थात् उन्हे सबसे पहले इस बातका पूरा पूरा विश्वास रखना चाहिए कि अपने भाग्यके विधाता और निर्माता हम स्वयं हैं। उन्हे समझ लेना चाहिए कि हममे

एक ऐसी अलौकिक और अपूर्व शक्ति है जिसे यदि हम जाग्रत करके काममे लगा सकें, तो हम जो काम चाहे वही पूरा कर सकते है। जब वे यह तत्त्व भली भाँति समझ लेगे तब उनका जीवन भी श्रेष्ठ हो जायगा और वे सब प्रकारसे सफल तथा सुखी भी हो जायँगे। संसारमे विश्वास ही एक ऐसी चीज है जो हमारे लिए सुख, समृद्धि, सुनाम और सफलताका द्वार खोल सकती है। उसीके द्वारा हममे अजेय बल आ सकता है और उसीके द्वारा हम उन भाग्यवानोमे परिगणित हो सकते है, जिनके स्पर्श मात्रसे मिट्टी भी सोना हो जाती है। उसीके द्वारा मनुष्यमे एक ऐसा तेज उत्पन्न हो जाता है जो उसके चारो ओर पूर्ण प्रकाश करनेके अतिरिक्त उसके मार्गमे पड़नेवाली सब विघ्न बाधाओको तिनकेकी तरह जला देता है। उसीके द्वारा उसे एक अपूर्व दिव्य दृष्टि प्राप्त होती है जिसकी सहायतासे वह ऐसी ऐसी चीजें देख सकता है जो किसी और प्रकार दिखाई ही नही पड़ सकतीं। जब उस आत्म-विश्वासके कारण हमे वे चीजे दिखलाई पड़ने लगती है, तब हम सब बातोका विचार छोड़कर उन्हे प्राप्त करनेके लिए अग्रसर होने लगते है और अन्तमे उन्हे प्राप्त करके ही विश्राम लेते हैं। बल्कि उन चीजोंके प्राप्त हो जानेपर भी हम विश्राम नहीं लेते। क्योकि उस समय हमें उनकी अपेक्षा और भी अधिक महत्त्वकी तथा सुन्दर चीजे दिखलाई देने लगती है और तब हम उन्हे प्राप्त करने लग जाते हैं। तात्पर्य यह कि उस समय हम एक ऐसे मार्गपर पहुँच जाते है जिसमे निरन्तर आगे ही वढते जाते है और हमारे रुकने या पीछे मुड़नेकी कोई सम्भावना ही नहीं रह जाती। यही जीवनका वास्तविक पथ होता है और प्रत्येक समझदार आदमीको इसीका पथिक बनना चाहिए। इसी पथके पथिकोंने बड़े बड़े पहाड़ काटकर फेंक दिए है, बिकट नदियों-

पर पुल बाँधे है, समुद्रके नीचे सुरंगे खोदी है और शून्य आकाशमें चलनेके लिए भी वैसा ही दृढ मार्ग बनाया है जैसा कि घन पृथ्वीपर मिलता है।

विश्वास कभी धोखा नहीं देता। वह सदा जादूका सा काम करता है। बन्धन, बाधाएँ और सीमाएँ उसके सामने कोई चीज नहीं है। आगे बढने और उन्नति करनेका उससे बढ़कर कोई साधन नहीं है। वही सकल सिद्धियोका दाता है और वही समस्त सौभाग्यका सृष्टा है। उसीका ध्यान करो, उसीका चिन्तन करो और उसीको प्राप्त करनेका प्रयत्न करो। तुम्हारी सारी कामनाएँ पूरी होगी। तुम्हारा इहलोक भी सुधरेगा और परलोक भी। फिर तुम्हे संसारमे उससे बढकर और कोई चीज दिखलाई ही न पड़ेगी।

१२–दृढ़ निश्चय
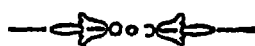
हम जो काम करना चाहते है उसके पूरा करनेमें हमारा दृढ निश्चय भी वहुत वड़ा सहायक होता है। किसी कार्यके सम्बन्धमे हमारा निश्चय जितना ही अधिक दृढ होता है उसमे सफलता भी उतनी ही अधिक होती है। हमे जो कुछ करना हो, वह वहुत ही दृढता और तत्परताके साथ करना चाहिए। तोपके गोलेको लोहेकी किसी मोटी चादरमें धीरे धीरे धँसानेका प्रयत्न कभी सफल नहीं हो सकता। सफलता तभी होगी जब वह गोला विद्युत्के वेगके साथ चलेगा। उसी दशामे वह सीधा जाकर चादरके पार हो सकेगा। ठीक यही दशा मनुष्यके प्रयत्नोकी होती है।

प्रायः लोग कहा करते है—देखिए यदि ईश्वरने चाहा तो, यदि हमारे भाग्यमे हुआ तो, यदि हो सका तो, आदि आदि। पर वे लोग यह वात नहीं जानते कि उनके कथनमें लगा हुआ यह 'यदि' सन्दिग्धताका सूचक होता है और इससे वक्ताकी अयोग्यता तथा अकर्मण्यता सूचित होती हैं। परन्तु यदि कोई दुर्वलहृदय आदमी भी किसी अवसरपर कोई वात दृढतापूर्वक कह वैठे, तो इससे उसके हृदयमे एक नया वल आ जायगा और वह अधिक तत्परतापूर्वक काममे लगकर अपेक्षाकृत अधिक सफलता प्राप्त कर सकेगा।

मनुष्यको कभी इस ढंगसे कोई वात नहीं कहनी चाहिए जिसमे किसी प्रकारका सन्देह या अनिश्चय सूचित होता हो। यहाँ तक कि हमें कभी यह भी नहीं कहना चाहिए कि हम कभी न कभी सफल

होगे। हमें सदा यही कहना चाहिए कि हम मूर्तिमान् सफलता है और सफल-मनोरथ होना हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। हमे यह नहीं कहना चाहिए कि एक वह समय भी आवेगा जब कि हम प्रसन्न और सुखी होगे। बल्कि हमे यह कहना चाहिए कि हमारा जन्म ही सदा सुखी और प्रसन्न रहनेके लिए हुआ है।

हम जो कुछ प्राप्त करना चाहते हो, उसपर हमे अपना पूरा पूरा अधिकार समझना चाहिए। हमे समझना चाहिए कि वह चीज हमारे लिए ही बनी है और हमारा जन्म उसीके लिए हुआ है। इस प्रकारके विचारसे हममें एक ऐसा अलौकिक बल आ जायगा जिससे हमारे उद्देश्यकी सिद्धिमे बहुत अधिक सहायता मिलेगी। हमें सदा यही सोचते और समझते रहना चाहिए कि—हम स्वास्थ्य है, हम बल है, हम सिद्धान्त है, हम सत्य हैं, हम न्याय है, हम सौन्दर्य हैं। क्योकि हम इन्हीं सब बातोंके आदर्शपर बनाए गए हैं। इस प्रकारके सोचने और समझनेका परिणाम यह होगा कि हमारे जीवनमे इन सब बातोका आपसे आप विकास होने लगेगा।

बात यह है कि हम जो कुछ अपने सम्बन्धमे सोचते है वही बन जाते हैं; उसके अतिरिक्त और कुछ बन ही नहीं सकते। जो लोग धन उपार्जन करनेवाले होते है, वे सबेरे उठकर यह नहीं सोचते कि देखो आज न जाने क्या होगा। देखे आज कुछ मिलता है या नही। अच्छा, हम प्रयत्न करेगे, चाहे सफलता हो और चाहे न हो। बल्कि उन्हें इस बातका दृढ निश्चय होता है कि हम आज भी अवश्य कुछ उपार्जन करेगे और नित्यकी अपेक्षा कुछ अधिक ही उपार्जन करेगे। अपने मनमें इसी बातका दृढ निश्चय रखते हुए वे दृढ़तापूर्वक अपने काममे लग जाते है

और बिना कुछ उपार्जन किए नहीं रहते। प्रत्येक व्यक्तिको अपने उद्देश्यके सम्बन्धमे सदा इसी प्रकारका विचार रखना चाहिए और केवल विचार ही नही रखना चाहिए बल्कि उस विचारपर दृढतापूर्वक विश्वास भी रखना चाहिए। क्योंकि बिना विश्वासका और कोरा विचार कुछ भी मूल्य नही रखता।

मनुष्यकी उद्देश्यसिद्धिपर इस दृढ निश्चयका जो शुभ परिणाम होता है, उससे सब लोग परिचित नहीं होते। परन्तु जो लोग उससे परिचित होते है, वे इसके रामबाण होनेमे कभी किसी प्रकारका सन्देह नहीं करते। इस प्रकारका दृढ निश्चय मनुष्यकी सोई हुई शक्तियोको जाग्रत कर देता है और उसे कार्य करनेमे बहुत अधिक समर्थ बना देता है।

इस सम्बन्धमे एक बात और है। वह यह कि हम जो निश्चय करते है वह निश्चय केवल मनमे ही न होना चाहिए बल्कि हमे अपने मुँहसे उस निश्चयका उच्चारण भी करना चाहिए। मनमे तो दिन रातमें हजारो बाते सोची जाती है। इसलिए केवल मनमे सोची हुई बातोका हमपर उतना अच्छा और अधिक प्रभाव नहीं पड़ता; परन्तु जिस निश्चयका हम अपने मुँहसे उच्चारण करते है उसका हमपर विशेष और स्थायी प्रभाव होता है। बहुधा हमारी सोई हुई शक्तियाँ इसी प्रकार जोरसे उच्चारण किए हुए निश्चयोके द्वारा ही जाग्रत होती है। प्रायः लोगोका मन दुर्बल हुआ करता है और वह एकाग्र होकर दृढतापूर्वक कोई निश्चय नही कर सकता। ऐसे मनका निश्चय प्रायः कोई निश्चय नहीं होता। परन्तु यदि उसी निश्चयमे हम मौखिक उच्चारण भी मिला दे, उससे सम्बन्ध रखनेवाले शब्द हमारे मुँहसे निकलकर हमारे कानोमें

प्रवेश करे, तो हमपर उनका कुछ और ही प्रभाव पड़ता है। उस दशामे उसमें मानो दूना जोर आ जाता है। हम प्रायः देखते है कि मामूली तौरपर हम अपने मनमे जो वाते सोचा करते है, उन वातोंका हमपर कोई स्थायी प्रभाव नहीं होता। परन्तु यदि वही वातें हम किसी पुस्तकमे पढते हैं तो उनका हमपर वहुत अच्छा और स्थायी प्रभाव होता है। हम चित्र आदि देखकर पहाड़ो, समुद्रों आदि अनेक प्राकृतिक पदार्थोंकी बहुत कुछ कल्पना कर लेते है। परन्तु उन कल्पनाओका हमपर कोई विशेष प्रभाव नही पड़ता। परन्तु यदि हम प्रत्यक्ष रूपसे पहाड़ों या समुद्रो आदिको देख ले, तो उनका हमपर एक विशेष और स्थायी प्रभाव होता है। इस प्रकार यदि हम अपने मनमे कोई बात सोच ले, तो उस सोचने मात्रका हमपर कोई विशेष प्रभाव नहीं होता; परन्तु यदि हम उसी सोची हुई वातका मुँहसे उच्चारण करे और उसी बातको फिर अपने कानोसे सुने, तो उसका हमपर एक विशेष और स्थायी प्रभाव होता है। उस दशामे उसमे एक विशेष प्रकारकी स्पष्टता, एक विशेष प्रकारका वल आ जाता है जो साधारण रूपसे सोची हुई बातमें कदापि नहीं हो सकता। केवल मनमे सोची हुई वात कार्य रूपमे परिणत नही की जा सकती, क्योंकि दिन रातमे हजारो बाते सोची जाती है और इसलिए कोई खास कामकी सोची हुई वात भी उन्हीं साधारण बातोकी कोटिमे आ जाती है; परन्तु यदि वही वात एक या अनेक बार मुँहसे कह भी डाली जाय तो उसका हमपर कुछ और ही प्रभाव होता है। उस दशामें हमारा वह निश्चय वहुत अधिक दृढ़ हो जाता है और हममे उसे कार्य रूपमे परिणत करनेकी एक नई शक्ति आ जाती है। दो चार वार इस बातका अनुभव करके प्रत्येक पाठक इस सिद्धान्तकी सत्यताका निश्चय कर सकता है।

हममे जो दुर्वलताएँ और त्रुटियाँ है उनका निवारण और पूर्ति इस क्रियासे वहुत सहजमें हो सकती है। पाश्चात्य देशोमें वहुत से लोग ऐसे है जिन्होने इस प्रक्रियासे वहुत अधिक लाभ उठाया है। वे मानो अपने आपसे वाते करते है और अपने सम्वन्धमे उन्हे जो कुछ कहना होता है वह वे अपने आपसे ही कह लेते है। इस प्रकारके आत्मगत कथनका परिणाम वही होता है जो किसी सच्चे मित्र अथवा अच्छे महात्माओके उपदेशो और परामर्शोंका होता है । इस प्रक्रियासे केवल कामनाएँ ही पूरी नहीं की जाती हैं, वल्कि अपने व्यक्तिगत दोष भी दूर किए जाते हैं । इसलिए इससे हमारी आत्मिक उन्नति भी हो सकती है और नैतिक उन्नति भी।

जव किसीको इस प्रकार अपने आपसे वाते करनी हों, तव उसे जनसमूहसे वहुत दूर किसी ऐसे एकान्त स्थानमें चले जाना चाहिए जहाँ औरोकी उपस्थितिका अनुभव न हो सके और जहाँ स्वच्छन्दतापूर्वक अपने आपसे वाते की जा सके । ऐसे स्थानपर पहुँचकर सोचना चाहिए कि हममे कौनसी त्रुटि है अथवा हमारी कार्यसिद्धिमें कौनसी वात वाधक है। यदि हम किसी काममे लगे हो, तो उसके सव अंगोपर विचार करना चाहिए। तात्पर्य यह कि हमे अपनी जो वर्तमान आवश्यकताएँ प्रतीत होती हों उनपर हमें विचार करना चाहिए और तब उनके सम्वन्धमे अपना कर्तव्य निश्चित करना चाहिए; और जव वह कर्तव्य निश्चित हो जाय, तव हमे अपने आपको जोरसे वह निश्चय कह सुनाना चाहिए। हमे जोरसे और इस प्रकार स्पष्ट शब्दोंमें कहना चाहिए जिसमे वह वात हमें वहुत अच्छी तरह सुनाई दे। हमें कहना चाहिए कि हम भविष्यमें अमुक दोष न करेंगे, हम अमुक प्रकारका व्यवहार या आचरण न करेंगे, हम अमुक कार्य अमुक प्रकारसे करेंगे,

आदि आदि। इस प्रकारके आत्मगत कथनका हमारे आचरण और कार्योंपर इतना अधिक और इतना शुभ परिणाम होगा कि उसे देखकर हमे परम आश्चर्य होगा और हम सदाके लिए समझ लेगे कि अपने दोषोके दूर करने और अपने कार्योंमें सफलता प्राप्त करनेका, इससे अच्छा और सुगम और कोई साधन है ही नहीं। इस प्रकार एकान्तमें जोर जोरसे अपने आपको सुनाकर हम जो उपदेश देगे, जो परामर्श देगे, वह किसी बड़े महात्मा या साधुके दिए हुए उपदेशो आदिसे कम प्रभावशाली न होगा।

मान लीजिए कि किसी व्यक्तिमे चिड़चिड़ापन बहुत अधिक है और उसके अधिकांश कार्य इसी एक दुर्गुणके कारण नष्ट होते है। उसे उचित है कि वह एकान्तमे जाकर नित्य अपने इस दोषपर विचार करे और सोचे कि इससे मेरी कब, कहाँ, और कितनी अधिक हानि हुई है। तब फिर उसे अपने आपसे कहना चाहिए कि मै अच्छी तरह जानता हूँ कि यह चिड़चिड़ापन ही मेरे सब काम खराब करता है, यह मेरी बहुत बड़ी मानसिक दुर्बलता है। मुझे जो कुछ करना चाहिए, वह मै इसीके कारण नही कर सकता हूँ। इस दोषके कारण लोग मेरी हँसी भी उड़ाते है, मुझे चिढाते भी है और मुझे बेवकूफ भी बनाते है और मेरे सब कार्योंमे बाधक भी होते है। इसलिए मुझे इस दोषसे अपना पीछा छुड़ाना चाहिए और जिस प्रकार हो अपने स्वभावका, अपने स्वभावके इस चिड़चिड़ेपनका अन्त करना चाहिए। यद्यपि और बहुतसे साधारण लोगोकी अपेक्षा मुझमे अनेक गुण अधिक है; परन्तु फिर इस एक दुर्गुणके कारण ही मेर सफल होनेमे अनेक बाधाएँ होती है। परन्तु अब मै अपने इस दुर्गुणपर पूर्ण विजय प्राप्त करनेका दृढ़ निश्चय करता हूँ। चाहे जो हो, अब मैं इससे अवश्य अपना पीछा

छुड़ाऊँगा और आजहीसे इसका अन्त करना प्रारम्भ करूँगा, आदि आदि।

यदि कोई व्यक्ति चरित्रभ्रष्ट हो तो उसे अपने आपसे कहना चाहिए कि मेरे शरीर और मेरी आत्माका मेरे अनाचारके कारण वहुत वुरी तरह नाश हो रहा है। इसके कारण मै अपने समस्त भावी सुखोका नाश कर रहा हूँ। मैं केवल अपना ही सर्वस्व नष्ट नही कर रहा हूँ वल्कि अपनी स्त्री, अपने वाल वच्चो और अपने परिवारके लोगोका भी वहुत अहित कर रहा हूँ और समाजमे वहुत वुरा आदर्श खड़ा कर रहा हूँ। आजसे मै शपथ खाता हूँ कि मै कभी कुमार्गमें प्रवृत्त न होऊँगा और न कभी कोई ऐसा कार्य करूँगा जिसके कारण मै लोगोंकी नजरोंसे गिर जाऊँ। मै अपने पिछले अनाचारोंके लिए पश्चात्ताप करता हूँ और भविष्यमे उनसे घृणा करनेका दृढ़ निश्चय करता हूँ। अवतक मै आदमीयतसे वहुत गिरा रहा हूँ, पर अव मै अपने आपको सुधारूँगा और अपने आपको चरित्रवान् वनाऊँगा, आदि आदि।

जव कभी एकान्तमें अवसर मिले तव मनुष्यको अपने आपको सुधारने और उन्नत करनेके लिए इसी प्रकार अपने आपसे वाते करनी चाहिए। थोड़े ही दिनोमे उसे यह देखकर वहुत अधिक आश्चर्य होगा कि इस प्रकार अपने आपसे वातें करनेका उसके चरित्रपर कैसा अच्छा प्रभाव पड़ता है और वह कितनी जल्दी वुरी आदतो और वुरे कामोको छोड़कर उनसे विलकुल अलग हो जाता है। इस प्रकारकी वातोसे थोड़े ही दिनोंमें उस व्यक्तिमे इतना अधिक वल आ जायगा कि वह अपनी सारी दुर्वलताओं और सारे दोषोंका एकदम नाश कर देगा और फिर कभी उनके फेरमें न पड़ेगा।

परन्तु इसके साथ एक बात और है। जब इस प्रकार अपने आपसे बातें की जायँ, तब अपने मनमें इस बातका दृढ निश्चय भी होना चाहिए कि हममे अपने दोपोपर विजय प्राप्त करनेकी पूरी पूरी सामर्थ्य है और अब हम कभी इन दोषोंके फेरमे न पड़ेगे। यदि हमारे विश्वासमे कुछ भी कमी होगी, अथवा अपनी योग्यता तथा सामर्थ्यमें कुछ सन्देह होगा तो परिणाम उतना अधिक शुभ न होगा। इसलिए दोषोपर विजय प्राप्त करनेकी अपनी योग्यतापर पूरा पूरा विश्वास रखना चाहिए। कहना चाहिए कि मेरा जन्म इसलिए नहीं हुआ है कि दोष और दुर्गुण मुझपर प्रभुत्व स्थापित करे। और जब तक मै अपने दोषो और दुर्गुणोको दूर न करूँगा तब तक मेरा वास्तविक उद्देश्य कभी सिद्ध न होगा। जब तक मुझमे ये शत्रु रहेंगे, तब तक ये मेरी सारी योग्यताओका नाश करते रहेंगे और मुझे कभी आगे बढ़नेका अवसर न देंगे। परन्तु अब मै इन दोषो और दुर्गणोंको अपने आपमे नहीं रखना चाहता और चाहे जैसे होगा मै इनका समूल नाश करके छोड़ूँगा। अब मै कभी बुरी बातोके पास भी न जाऊँगा और न बुरे आदमियोके साथ किसी प्रकारका सम्बन्ध रक्खूँगा। मै मनुष्य हूँ और मुझे वास्तविक अर्थमे मनुष्य बनना चाहिए। अपने पशुताके भावोको मुझे निकाल बाहर करना चाहिए। मुझमे एक विशेष दैवी शक्ति है जो ऐसी बुरी बातोसे बहुत घृणा करती है। उसीकी सहायतासे मैं अपने ये सारे दोष दूर करूँगा और अपना चरित्र सदा निर्मल तथा निष्कलंक रक्खूँगा।

यदि इस प्रक्रियाका तुरन्त ही कोई शुभ परिणाम देखनेमें न आवे, तो निराश नहीं होना चाहिए। बराबर दृढ़ निश्चय और विश्वासपूर्वक अपने आपसे बाते करते रहना चाहिए। अन्तमे अवश्य ही मनोरथ

सिद्धि होगी। इच्छाशक्ति तो इस काममे सहायता करेगी ही, पर इच्छाशक्तिकी अपेक्षा दृढ़ निश्चयमे हजार गुना अधिक बल है; और सबसे अधिक बल इस बातमे है कि मनुष्य समझे कि मुझमे एक दैवी अंश है जो सबसे अधिक बलवान् है और जो मुझे अवश्य विजयी करेगा। जब किसी व्यक्तिको अपने अन्दर रहनेवाले दैवी अंशके दर्शन होने लगेगे, तब वह उसके बल और सहायताका अनुभव करने लगेगा। जब वह अपने अन्दर रहनेवाले ईश्वरीय अशकी सहायताका विश्वास और भरोसा करने लगेगा, तब मानो वह ईश्वरीय सत्ताके साथ मिलकर एक हो जायगा। उस दशामे संसारकी कोई शक्ति उसके मुकाबलेमे न ठहर सकेगी और वह जिस ओर दृष्टि डालेगा, उसी ओर उसे विजय प्राप्त होगी।

यो देखनेमें तो यह विचार बिलकुल मूर्खतापूर्ण बल्कि पागलोकासा जान पड़ता है कि कोई आदमी एकान्तमे जाकर जोर जोरसे अपने साथ बातें करे; वह स्वयं ही बोलनेवाला हो और स्वयं ही सुननेवाला। लेकिन यदि अपने दोष दूर करनेके लिए यह प्रक्रिया की जाय, तो इसमें सन्देह नहीं कि इससे बहुत अधिक लाभ उठाया जा सकता है। ससारमे छोटा या बड़ा कोई ऐसा व्यक्तिगत दोष नही है, जो इस प्रकार एकान्तमे अपने आपसे बाते करके दूर न किया जा सकता हो। मान लीजिए कि आप बहुत ही शरमीले हैं और चार आदमियोके सामने जानेमें और उनसे बातचीत करनेमे आपको बहुत लज्जा जान पड़ती है। अब यदि आप एकान्तमे बैठकर अपने आपसे कहने लगे कि यह हमारा बड़ा भारी दोष है और जैसे होगा हम अपना यह दोष दूर करेगे, तो सचमुच आपका यह दोष बहुत ही शीघ्र दूर हो जायगा। इसी प्रकार और

भी जितने दोष है, वे सब दूर किए जा सकते हैं। आवश्यकता है केवल दृढ़ निश्चय और अभ्यासकी।

जब कोई व्यक्ति अपना कोई दोष दूर करनेके लिए अपने आपसे बातें करता हो, उस समय उसे अपने मनमें कभी इस बातका ध्यान नही लाना चाहिए कि लोग मुझे देखते होंगे और देखकर हँसते होंगे। उस समय उसे अपने मनमे समझना चाहिए कि मै किसीसे छोटा नहीं हूँ बल्कि सबके समान हूँ। कोई कारण नहीं है कि कोई मुझपर हँसे। इस प्रकारका विश्वास रखनेसे उसमें अधिक दृढ़ता तथा बल आवेगा और शीघ्र सफलता प्राप्त होगी।

यदि कोई व्यक्ति बराबर अनिश्चयकी अवस्थामे पड़ा रहता हो और जल्दी किसी बातका निश्चय न कर सकता हो, तो उसे उचित है कि वह दृढ़तापूर्वक यह निश्चय कर ले कि अब मै अपने मनमें किसी प्रकारका सन्देह उत्पन्न होनेका अवसर ही न आने दूँगा और सन्देह आनेसे पूर्व ही कुछ न कुछ दृढ़ निश्चय अवश्य कर लूँगा और उसीके अनुसार कार्य भी आरम्भ कर दूँगा। सदा अनिश्चित दशामे पड़े रहने और कुछ भी न करनेकी अपेक्षा कोई गलती कर बैठना कहीं अच्छा है। इसमे मनुष्य चाहे पहले कुछ भूले कर बैठे, परन्तु उसमे कर्मण्यता तो आवेगी। फिर कुछ दिनोमे काम करते करते वह उचित और उपयुक्त निर्णय करना भी सीख लेगा।

मतलब यह कि हममे जो दोष हो उन दोषोको निकालने और उनके विपरीत गुण स्थापित करनेका प्रयत्न करना चाहिए। यदि किसीमे अपनी योग्यतापर विश्वास न होगा, तो उसमे अपने आपपर विश्वास उत्पन्न हो जायगा। यदि उसमे साहसका अभाव होगा, तो वह साहसी हो जायगा।

आवश्यकता केवल इस बातकी है कि मनुष्य यह बात भली भाँति अपने मनमे समझ ले कि मुझमे एक ईश्वरीय शक्ति है जो मुझे सदा सब कामोमे विजयी रक्खेगी। सबसे बड़ी कठिनता तो यही है कि लोग वास्तवमे जितने योग्य होते है उसकी अपेक्षा अपने आपको कहीं कम योग्य समझते है। वे अपनी शक्तियोकी ठीक ठीक कल्पना नहीं करते। वे जान बूझकर अपनी दृष्टिमे अपना महत्त्व कम कर देते है, अपने आपको छोटा बना लेते है और स्वयं ही अपने आपको तुच्छ दृष्टिसे देखने लगते है। इसका कारण यही है कि वे यह बात नही जानते कि प्रत्येक मनुष्यमे एक ईश्वरीय अंश होता है जो उसे सर्वश्रेष्ठ बना सकता है। परन्तु जब मनुष्यको इस बातका ज्ञान हो जाता है तब उसमे एक नई शक्ति आ जाती है। उस दशामे वह अपनी शक्तियोकी ठीक ठीक कल्पना करने लगता है और कठिनसे कठिन कार्य करनेमे भी समर्थ हो जाता है। प्रत्येक व्यक्तिको सबसे पहले अपनी इसी ईश्वरीय शक्तिका ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। यही ज्ञान मनुष्यकी समस्त शक्तियोको जाग्रत करके कार्य करनेके योग्य बनाता है और उसकी सारी त्रुटियोको दूर करता है। यदि यह ज्ञान जीवनके आरम्भमे ही प्राप्त हो जाय, तो मनुष्य उससे बहुत अधिक लाभ उठा सकता है। अपने अन्तर्गत ईश्वरीय शक्तिका ठीक ठीक ज्ञान और कल्पना न होनेके कारण ही लाखो करोड़ो आदमी जन्मभर अनेक प्रकारके कष्ट भोगते रहते है और अन्तमे अनेक प्रकारकी दुर्दशाएँ भोगकर बड़ी बुरी तरहसे मर जाते है। यह सुन्दर मीठे जलकी बढ़िया नदीके किनारे प्यासे मरना नही है तो और क्या है? हमे ईश्वरने एक ऐसी खानका मालिक बना दिया है जिसमे सब कुछ मौजूद है। आवश्यकता है केवल उस खानका ज्ञान होनेकी और उसे खोदकर अपनी आवश्यकताके अनुसार चीजें

निकालनेकी। हमें सबसे पहले अपनी आवश्यकताओंका ठीक ठीक ज्ञान प्राप्त करना चाहिए, और तब उसी ईश्वरीय खानमेंसे वे सब चीजें निकालनी चाहिए। अपने उद्देश या आदर्शकी ओर अपनी सारी शक्तियोंके साथ बढना आरम्भ कर देना चाहिए और कभी किसी दशामें भी पराङ्मुख न होना चाहिए। हमें अपने मनसे नकारात्मक तत्त्व बिलकुल निकाल देना चाहिए और समझ लेना चाहिए कि हम स्वयं ही अपने ईश्वर और स्वयं ही अपने सौभाग्यके निर्माता हैं। जो आदमी ये सब बातें अच्छी तरह समझ लेता है फिर उसे किसी चीजका अभाव नहीं रह जाता। वह सब तरहसे सुखी, सम्पन्न और सफल हो जाता है; और यही जीवनका चरम उद्देश्य है जिसे सिद्ध करनेका सब लोगोंको पूरा पूरा प्रयत्न करना चाहिए।

१३—मानसिक सूचना।

ध्यायतो विषयान्पुंसः संगस्तेषूपजायते।
संगात्संजायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते॥
....
स्मृतिभ्रंशाद्बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति॥

—गीता।

जो लोग अपराधी होते है वे शरीरसे तो पीछे अपराध करते है परन्तु सबसे पहले वे अपने मनसे अपराध करते हैं। पहले वे अपने मानसिक जगतमें किसी अपराधकी बार बार कल्पना करके मानो उस अपराधका अभ्यास करते हैं और तब अन्तमे शरीरद्वारा वह अपराध करते हैं।

न्यूयार्कमें एक ऐसा अपराधी था जिसने वहाँके भिन्न भिन्न जेलोंमें पचीस वर्ष विताए थे। एक अवसरपर उसने कहा था कि मैंने कभी स्वप्नमे भी अपराधी होनेका विचार नहीं किया था। परन्तु आरम्भसे ही मेरी प्रवृत्ति ऐसे काम करनेकी ओर थी जो दूसरोको असम्भवसे जान पड़ते हों। जब मै कभी किसी बहुत बड़े आदमीके मकानपर जाता था, तो मेरे मनमें यह विचार उत्पन्न होता था कि मैं किसी प्रकार रातके समय इस प्रकार इस मकानमे पहुँच जाऊँ कि जिसमें कोई मुझे देख न सके। जब कई बार इस प्रकारका विचार मेरे मनमे उत्पन्न हुआ, तब अन्तमे एक बार मैने यह विचार कार्यरूपमे परिणत कर डाला। एक बार रातके समय मैं एक बड़े आदमीके मकानपर पहुँच गया और जब कि सब लोग सोए हुए थे तब मैं बहुत अभिमानपूर्वक हर एक कमरेमें यह सोचता हुआ घूमने लगा कि देखो मैं कितना बड़ा

बहादुर हूँ कि यहाँ तक पहुँच गया। यहाँ किसीको मेरे आनेकी खबर भी नही हो रही है और मै आनन्दसे सारे घरमे घूम रहा हूँ। तबसे मेरा साहस बढ़ गया और मै प्रायः अवसर देखकर इसी प्रकार लोगोके मकानोंमे घुसने लगा। जब जब मैं किसी मकानसे निकलता था तब तब मै यही समझता था कि मैं कोई बहुत बड़ा और बहादुरीका काम करके आ रहा हूँ। मै उन मकानोसे कुछ चीजे भी उठा लाया करता था; परन्तु वे चीजे बहूमूल्य होनेके कारण नहीं उठाया करता था बल्कि यह समझ कर उठाया करता था कि मै कितनी बड़ी जोखिमका काम कर सकता हूँ। उस समय मै स्वप्नमे भी इस बातका अनुमान नहीं कर सकता था कि मेरा यह काम अनुचित है और चोरीमे गिना जायगा। धीरे धीरे मुझे इस तरहके काम करनेकी आदत पड़ गई और उस आदतसे पीछा छुड़ाना मुश्किल हो गया। जब पहले पहल मैं पकड़ा गया तब भी मैं यह नहीं समझ सकता था कि मै किसी समय बड़ा भारी अपराधी बन जाऊँगा। परन्तु अन्तमे हुआ यही; मै धीरे धीरे अभ्यस्त अपराधी बन गया।

उक्त घटनासे पता चलता है कि मनमे कोई बुरी कल्पना करना, किसी प्रकारका दुष्ट विचार लाना, कितना अधिक भयंकर और घातक होता है। यदि मनमें एक बार भी कोई बुरा विचार लाया जाय, एक बार भी कोई दुष्ट कल्पना आवे, तो बहुत सम्भव है कि कुछ समयमे वही हमारी आदतमें दाखिल हो जाय। हम मनमें बुरी कल्पनाएँ और बुरे विचार लाते लाते अन्तमे उनके इतने अभ्यस्त हो जाते है कि फिर उनसे अपना पीछा किसी प्रकार नहीं छुड़ा सकते।

बड़े बड़े चोरोकी बातोसे पता चलता है कि वे लोग चोरी करनेसे बरसों पहले अपने मनमे चोरी करनेके तरह तरहके उपाय सोचा करते

थे। वे मकानोंमें घुसनेके नए नए उपाय सोचा करते थे और उन उपायोंको ऐसे ढंगसे काममें लाना चाहते थे कि जिसमें वे पकड़े न जायँ। मनमें इस प्रकारके चोरीके विचार लाते लाते अन्तमें वे इतने पक्के चोर हो गए कि चोरी उनकी आदतमें दाखिल हो गई और वे इच्छा होनेपर भी इससे अपना पीछा छुड़ानेमें असमर्थ हो गए। उनमेंसे तो बहुतेरे ऐसे थे जो अपने मनमें चोरी करनेके उपाय तो सोचा करते थे, पर कभी चोर बनना नहीं चाहते थे। परन्तु उनके दूषित विचार अन्तमें अपना काम कर ही गए और वे इच्छा न होनेपर भी चोर और बदमाश हो गए। जो लोग और किसी प्रकार किसी बुरे काममें नहीं फँस सकते थे उन्हें इन दूषित विचारोंने ही भीषण अपराधी बना दिया और उनका जीवन बहुत बुरी तरहसे नष्ट कर दिया।

मनुष्यको स्वयं उसीके दूषित विचार अपराधी नहीं बनाते हैं बल्कि औरोंके दूषित विचार भी उसे बहुत कुछ खराब कर देते हैं। यदि किसी साधारण नौकरपर उसका मालिक सन्देह करने लगे, उसे चोर या बदमाश समझने लगे, तो प्रायः वह नौकर विवश होकर चोर या बद-माश बन जाता है। जो लोग यों कभी बेईमानी नहीं करते, उनपर जब बेईमानी करनेका सन्देह किया जाता है तब प्रायः वे समय पाकर बेईमान हो जाते हैं। इसका कारण कदाचित् यही है कि जब किसी आदमीपर चोरी या बेईमानीका सन्देह किया जाता है, तब उसके मनमें चोरी या बेईमानीका जो भाव उत्पन्न होता है वही जड़ पकड़ लेता है और अन्तमें बढ़ता बढ़ता उसे चोर और बेईमान बना देता है। जब तक हमें किसी आदमीके चोर या बेईमान होनेका पूरा पूरा प्रमाण न मिल जाय, तबतक हमें कभी उसपर चोरी या बेईमानीका सन्देह न करना चाहिए। क्योंकि इस प्रकारका सन्देह करना ही उस व्यक्तिके

पक्षमे बहुत अधिक घातक हो जाता है । प्रत्येक व्यक्तिका मन एक बहुत ही पवित्र क्षेत्र होता है । उसमें कोई दूषित विचारका बीज बोनेका हमे कोई अधिकार नहीं है । जिस प्रकार हमे स्वयं अपने मनमे कोई दूषित विचार नहीं लाना चाहिए, उसी प्रकार किसी दूसरेके मनमे भी हमे कोई दूषित भाव या विचार नहीं उत्पन्न करना चाहिए । केवल दूसरोंके सन्देह करनेके ही कारण बहुतसे लोगोंका जीवन बहुत बुरी तरहसे और सदाके लिए नष्ट हो गया है ।

बहुतसे लोग अनजानमें या जान बूझकर दूसरोमे शंका, भय, विफलता, असत्यता आदि अनेक प्रकारके दूषित भावोका बीजारोपण करते है । ये दूषित विचार और लोगोके मनमे जड़ पकड़ लेते है और समय पाकर बहुत ही बुरे फल लाते हैं । इससे सदा प्रसन्न रहनेवाले लोग सशंकित हो जाते हैं, निर्भय रहनेवाले लोग भयभीत हो जाते है और सफल-मनोरथ होनेवाले लोग विफल-मनोरथ हो जाते है । परन्तु यदि वास्तविक दृष्टिसे देखा जाय तो हमें औरोंमें इस प्रकारके बुरे भावोका संचार करनेका कोई अधिकार नहीं है ।

प्रायः ऐसा देखा जाता है कि कोई कोमलमति बालक किसी कारणसे कोई छोटा मोटा अपराध कर बैठता है और उस अपराधके कारण कारागारमें भेज दिया जाता है । वहाँ वह बड़े बड़े चोरो और डाकुओ आदिके साथ रहते रहते स्वयं भी भारी चोर या डाकू बन जाता है । भले आदमियोंके साथ तो उसका कोई सम्बन्ध रह ही नहीं जाता, सिर्फ चोरों और डाकुओंका साथ रह जाता है । फिर भला वह चोर या डाकू न हो तो और क्या हो ? उसे न तो अच्छे आदमियोका संग मिलता है, न अच्छी पुस्तके पढ़नेको मिलती हैं और न अच्छी

वातें सुननेको मिलती है। चारो ओर चोर, वदमाश, डाकू, लुटेरे और उठाईगीरे आदि रहते है और उन्हींकी बाते सुननेको मिलती है। उनकी वातोंका उसपर स्वभावतः यही परिणाम होता है कि वह भी अन्तमे चोर, डाकू, लुटेरा या उठाईगीरा हो जाता है। यदि वह कारागारमें वन्द करनेकी जगह किसी अच्छे खुले मैदानमे रक्खा जाय, जहाँ उसे अच्छे अच्छे लोगोका साथ मिले, अच्छी बाते सुननेको और अच्छीं पुस्तके पढनेको मिले, खेती वारी या और कोई अच्छा काम सिखलाया जाय, तो वह कभी चोर या वदमाश नही हो सकता; बल्कि एक चतुर और सुयोग्य नागरिक हो सकता है। जो व्यक्ति सारे ससारसे अलग करके कारागारमें बुरे आदमियोके साथ रक्खा जाता है, वह बहुत ही दुःखी और निरुत्साह हो जाता है और अपने आसपासके लोगोकी बुरी आदते सीख लेता है। इसका कारण यही है कि उसके मनमे सदा जो भाव उठते रहते हैं, वही पुष्ट हो जाते है और अन्तमे उसके जीवनका मुख्य अंग वन जाते है; और ऐसा होना नितान्त स्वाभाविक है।

मनुष्यके जैसे विचार होते हैं वह वैसा ही वन जाता है। ये विचार हमें समाजमे लोगोसे वातचीत करनेमे, पुस्तके तथा समाचारपत्र आदि पढनेमे तथा इसी प्रकारके और अनेक साधनोसे प्राप्त होते है; और इन्ही विचारो तथा भावोसे हमारी प्रवृत्तियाँ तथा हमारा स्वभाव वनता है। यह वात किसीसे छिपी नहीं है कि कोई अच्छी पुस्तक पढ़ने या अच्छा नाटक देखनेका पाठको या दर्शकोपर कैसा अच्छा प्रभाव पड़ता है। यदि अधिक उत्तेजक या दुःखद घटनापूर्ण कोई पुस्तक पढी जाय, तो मन कितना चंचल और दुःखी हो जाता है? युरोप और अमेरिकाके कई वड़े बड़े और नामी चोरो तथा डाकुओ आदिके सम्बन्धमे अनुसन्धान करनेपर पता चला है कि चोरी

और डाके आदिकी ओर उनकी प्रवृत्ति केवल ऐसे उपन्यास पढकर अथवा नाटक आदि देखकर ही हुई है जिनमे भीषण डाकों और चोरियो आदिका वर्णन या चित्रण था । वहुतसे लोग केवल जासूसी उपन्यास पढ़कर भी और वहुतसे लोग सिनेमा आदि देखकर भी चोर और डाकू वन गए हैं। इसका कारण यही है कि कोमलमति नवयुवक अनजानमें ही चोरी और डाके आदिके भाव अपने मनमें भरने लग जाते हैं और अन्तमे वे प्रत्यक्ष रूपमें वही काम कर वैठते है जो अनेक वार अपने मानसिक क्षेत्रमें किया करते हैं।

समाचारपत्रोंमें हत्याओ और आत्महत्याओं आदिके समाचार पढ़कर लोगोंकी प्रवृत्ति ऐसे ही ऐसे कामोंकी ओर हो जाती है। अमेरिकाके कई अधिकारियोने कई वार वहाँके समाचारपत्रोके अधिकारियोंका ध्यान इस वातकी ओर आकृष्ट किया है कि वे आत्महत्याओं आदिके विस्तृत विवरण न प्रकाशित किया करें, क्योंकि उन्हे इस वातके अनेक प्रमाण मिलते रहते हैं कि ऐसे समाचार पढ़कर लोगोंकी प्रवृत्ति आत्महत्या आदिकी ओर होने लगती है। इन सव वातोका ध्यान रखते हुए तो यही कहना पड़ता है कि वहुतसे लोगोको कारागारका दंड व्यर्थ ही दिया जाता है। वास्तवमें वह दंड उन लोगोको दिया जाना चाहिए जो उनके मनमे दूपित विचार करके उन्हे कुमार्गमे प्रवृत्त करते हैं।

हमें सदा इस वातका ध्यान रखना चाहिए कि औरोमें अनजानमें अथवा जान वूझकर वुरे भाव भरनेसे वढ़कर भीपण पाप और कोई नहीं है। जिस प्रकार हमें किसी व्यक्तिको मार डालनेका कोई अधिकार नहीं है, उसी प्रकार हमें उसमें वुरे भाव भरनेका भी कोई अधिकार नहीं है। मनमें यदि एक वार कोई अपवित्र भाव आ जाता है, तो फिर

वह सहजमे निकाले नहीं निकल सकता। इसलिए हमें अपने प्रत्येक कार्य और प्रत्येक वातमे इस वातका ध्यान रखना चाहिए कि उसके द्वारा कोई ऐसा बुरा भाव न उत्पन्न हो, जो स्वय हमारे जीवनपर अथवा हमारे पार्श्ववर्त्तियोके जीवनपर किसी प्रकारका बुरा प्रभाव डाले। जव हम कोई सुन्दर महाकाव्य या वीरगाथा पढ़ते है, तो हमारे मनमे कितना उत्साह, कितना आनन्द, कितना सद्भाव और कितनी वीरता उत्पन्न होती है ? यदि कुरुचिपूर्ण पुस्तके पढनेसे या गन्दी बाते सुननेसे हमारे मनपर इसके विपरीत प्रभाव पड़े तो इसमे आश्चर्य ही क्या है ?

सव लोगोको इस वातका सदा ध्यान रखना चाहिए कि प्रत्येक वालकके मनमे सदा ऐसे ही भाव उत्पन्न किए जायँ, जो उसे प्रसन्न रक्खे, उसे उत्साहित करे, उसे सदाचारी और सुशील वनावे और सब प्रकारसे उसकी आत्मिक तथा नैतिक उन्नति करे। नगरोमे रहनेवाले वालकोकी अपेक्षा गाँवोमे रहनेवाले वालक इसी लिए वलिष्ठ, प्रसन्न और सदाचारी होते है कि वे ऐसी परिस्थितिमे रहते है जहाँ उनका स्वास्थ्य नष्ट करनेवाली अथवा उनका आचरण भ्रष्ट करनेवाली वाते अपेक्षाकृत वहुत ही कम होती हैं। अनाथालयमे रहनेवाले वालकोके सम्वन्धमे देखा गया है कि जव वे किसी ऐसे गृहस्थके घर जा पहुँचते हैं जहाँ दिन रात लड़ाई झगड़ा होता रहता है या इसी प्रकारकी और बुरी वाते होती रहती हैं, तव वहाँ उनका पुराना सुन्दर आचरण विलकुल नष्ट हो जाता है और वे भी दुष्ट, पापी तथा दुराचारी हो जाते है। अनाथालयमे रहकर वे जो सद्गुण और सद्भाव उपार्जित करते है, वे थोड़े ही दिनोमे दुष्टोंकी संगतिमें रहनेके कारण सदाके लिए बिलकुल नष्ट हो जाते हैं और फिर उनका किसी प्रकार सुधार नहीं हो सकता।

किसी व्यक्तिके दुष्ट और पापी होनेका मुख्य कारण यही होता है कि उसमे वाल्यावस्थासे ही किसी न किसी प्रकार कुछ दुर्गुण आ जाते है, जो समय पाकर भीषण रूप धारण कर लेते है और ये दुर्गुण प्रायः घरके लोगोसे ही प्राप्त किए जाते है। जिस गृहस्थीमे सदा घृणा, ईर्ष्या, द्वेष, कलह, स्वार्थसाधन, छल, कपट और झूठ आदिका साम्राज्य देखनेमे आता हो, उस गृहस्थीके वालक भला कैसे सद्गुणी और सदाचारी हो सकते हैं ? गेहूँसे हमेशा गेहूँ और जौसे हमेशा जौ ही पैदा होगा। किसी वालकके सामने सदा झूठ वोलकर हम उसे कभी सत्यवादी नही वना सकते। जहाँ ईर्ष्या और द्वेष हो वहाँ प्रेम और सद्भावका कभी प्रवेश नहीं हो सकता। जहाँ लोभ ही लोभ हो वहाँ स्वार्थत्यागका क्या काम ? और जहाँ निर्दयता हो वहाँ सहानुभूतिसे क्या मतलव ?

वोस्टनके डा० वोरसेस्टरका दृढ विश्वास है कि सूचनाओके द्वारा वहुत सहजमे दुष्ट वालकोंका चरित्र सुधारा जा सकता है। उनका मत है कि जिस समय वालक सोया हुआ हो, उस समय उसे वहुत धीरे धीरे अच्छे अच्छे उपदेश देने चाहिएँ। उससे कहना चाहिए कि तुम अपने अमुक अमुक दोप छोड़ दो और अपना आचरण अमुक प्रकारसे सुधारो। वे कहते है कि सोए हुए वालकोसे धीरे धीरे जो वात कही जाती है उससे उनकी निद्रा तो भंग नहीं होती; परन्तु जो कुछ उनसे कहा जाता है उसे वे सुन वहुत अच्छी तरह लेते है। केवल सुनते ही नहीं, वल्कि समझ भी लेते है और उनके अनुसार कार्य भी करते है। जो बात उनसे कहना हो, वह वहुत धीरे धीरे, कई वार, कई प्रकारसे और वहुत समझा वुझाकर कहनी चाहिए। वे कहते है कि इस क्रियासे मैंने वहुतसे वालकोकी बुरी आदते छुड़ाई है और उन्हे अच्छे मार्गपर लगाया है। डरनेवाले लड़कोने डरना छोड़ दिया है,

झूठ बोलनेवाले लड़कोने झूठ बोलना छोड़ दिया है, क्रोधी बालकोने क्रोध करना छोड़ दिया है, यहाँ तक कि जो बालक हकलाकर बोला करते थे उन्होंने हकलाना भी छोड़ दिया है। अब इससे अधिक और क्या चाहिए?

मनुष्य जैसी परिस्थितिमे रहता है, वैसा ही वह हो भी जाता है। हमारे मनमे जो भाव उठते है वही मानो हमारे लिए सबसे बड़ी परिस्थिति उत्पन्न करते है। इसलिए भावो और विचारोका हमपर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। यह प्रभाव इतना अधिक और निश्चित होता है कि यदि हम चाहें तो स्वयं अपनी इच्छासे अपने मनमे अनेक उत्तम भाव उत्पन्न करके अनेक प्रकारसे अपना बहुत कुछ लाभ कर सकते है, यहाँ तक कि अपना भाग्य भी बदल सकते हैं। यदि हम अपने मनमे दृढतापूर्वक पवित्रताका भाव स्थापित कर रक्खें, तो आसपासके लोगोंके अपवित्र भाव हमारा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते। बल्कि यदि हमारी इच्छाशक्ति बलवती हो, तो हम अपने पवित्र भावोंके द्वारा दूसरोंके अपवित्र भाव भी नष्ट कर सकते है। यदि हममे सत्य और न्यायकी दृढ धारणा हो, तो हम दूसरोंके असत्य और अन्यायका बहुत सहजमे अन्त कर सकते हैं।

अपने मनमे सुन्दर भाव उत्पन्न करके और दृढ निश्चयपूर्वक हम अपना चरित्र तो सुधार ही सकते हैं, पर साथ ही हम अपने अनेक रोग भी दूर कर सकते हैं। यह मत हमारा नहीं उन्हीं डा० वोरसेस्टरका है। दुखियों और पतितोंके लिए इससे अधिक शुभ संवाद और क्या हो सकता है? हममें जो ईश्वरीय अंश है, उसे हमे जाग्रत करना चाहिए और उसीसे सब काम लेना चाहिए। कभी कभी ऐसा भी देखा जाता है कि जिस व्यक्तिने अपना आधेसे अधिक जीवन अनेक प्रका-

रके पापों और अनाचारोमे व्यतीत किया है वही किसी महात्मा, सज्जन मित्र या स्त्रीकी सगतिसे सुधरकर वहुत ही साधु और सच्चरित्र हो जाता है। ऐसी अवस्थामे उसे देखकर लोग प्राय: कहा करते है कि अमुक व्यक्तिका उसपर इतना अच्छा प्रभाव पड़ा है कि वह सुधर गया। परन्तु यदि वास्तविक दृष्टिसे देखा जाय तो वह प्रभाव कहीं वाहरसे आकर उसपर नही पड़ता। स्वय उसमे एक शक्ति सदासे प्रस्तुत रहती है, जो पहले तो सोई हुई होती है परन्तु जो उपयुक्त अवसर पाते ही जाग्रत हो जाती है और उसे राक्षससे देवता वना देती है।

कुछ लोग ऐसे होते हैं जो अपने आपको परम अभागा समझते है और जिन्हे और लोग भी अभागा ही समझते है। परन्तु यदि वास्तविक दृष्टिसे देखा जाय, तो जान पड़ेगा कि उन्होने स्वयं ही अपने आपको परम अभागा वना रक्खा है। यदि वे अपने मनसे अभाग्यका विचार निकाल दे और अपने आपको भाग्यवान् समझ उसीके अनुसार आचरण करने लगे, तो वे शीघ्र ही सचमुच भाग्यवान् हो सकते हैं। अर्थात् उन्हे अपने हृदयसे नाशक विचारोंको निकालकर दूर कर देना चाहिए और उनके स्थानपर अच्छे विचारोकी स्थापना करनी चाहिए। इसका परिणाम यह होगा कि वह शीघ्र ही सुयोग्य और कर्मठ हो जायगा और भाग्यवानोकी भाँति सम्पन्न तथा सुखी हो सकेगा।

विकासवादके प्रसिद्ध आचार्य डार्विन साहवका मत है कि प्रत्येक मानसिक अवस्थाका हमारे शरीरपर कुछ न कुछ परिणाम होता है और हमारी वह मानसिक अवस्था हमारे किसी न किसी अंगपर प्रभाव डालकर उसमे किसी न किसी प्रकारका विकार उत्पन्न करती है। अर्थात् यदि

हम अपने मनमे कोई भाव लावे, तो उसका हमारी आकृति आदिपर भी उसीके अनुसार कुछ प्रभाव पड़ता है। उदाहरणार्थ यदि हम क्रोध करे, तो हमारे मुँहसे कठोर वाक्य निकलने लगते हैं, आँखे लाल हो जाती है, होठ फड़कने लगते है और इसी प्रकारकी दूसरी अनेक बातें होने लगती है। इसी प्रकार यदि हम एकाग्रचित्तसे ईश्वर-चिन्तन करने वैठे, तो हमारी आकृति वहुत ही गम्भीर और शान्त हो जाती है। मतलव यह कि हमारे मनकी जैसी अवस्था होती है, वैसी ही हमारी शारीरिक अवस्था भी ही जाती है। दूषित भावोसे आकृति भी दूषित हो जाती है, और उत्तम भावोसे आकृति भी सौम्य तथा सुन्दर हो जाती है। यही कारण है कि वहुधा लोग भारी भारी दुष्टोको देखते ही उनकी आकृतिसे उनकी दुष्ट प्रकृतिका अनुमान कर लेते है। इसलिए प्रत्येकको उचित है कि वह अपने मनमे सदा उत्तम भाव रक्खे और दूषित भावो तथा विचारोको पास भी न फटकने दे।

मनुष्यके मनमे जो भाव उत्पन्न होते है, वे आपसे आप भी उत्पन्न होते है और असंख्य बाहरी साधनोसे भी प्राप्त होते है। हम दूसरोकी वातचीत और आचरण आदिसे भी भाव ग्रहण करते है और पुस्तकोंसे भी। हम घटनाओसे भी भाव ग्रहण करते है और चित्रोसे भी। हम अपने मित्रोसे भी भाव ग्रहण करते है और शत्रुओसे भी। वीरोसे भी भाव ग्रहण करते है और कायरोसे भी। उनमेसे वहुतसे भाव अच्छे होते है और वहुतसे वुरे; परन्तु वे सव भाव चाहे अच्छे हो या वुरे, हमपर अपना कुछ न कुछ प्रभाव अवश्य छोड़ जाते है। यदि हम अधिक संख्यामे वुरे भाव ग्रहण करते है, तो हम भी वुरे हो जाते है और यदि अच्छे भाव ग्रहण करते है तो अच्छे हो जाते है। इसी तरहसे आदमी अच्छे या वुरे वनते है।

परन्तु मनुष्योका अच्छा या बुरा बनना यहीं समाप्त नही हो जाता। प्रत्येक मनुष्यमे एक ईश्वरीय अश होता है जिसे साधारण भाषामे लोग आत्मा, मनोदेवता आदि कहते है। हमारी आत्मामे सदैव इतनी शक्ति रहती है कि यदि हम उसकी थोड़ीसी सहायता करे और उसे जाग्रत करके उसके अनुकूल परिस्थिति उत्पन्न कर दें, तो हम चाहे कितने ही बुरे क्यों न हों बहुत ही सहजमे और बहुत ही शीघ्र सज्जन, सच्चरित्र और सुखी हो सकते है। हमारा चरित्र बाहरसे देखनेमे चाहे कितना ही अधिक कलंकित क्यो न जान पड़ता हो; परन्तु फिर भी हमारे अन्दर एक ऐसी शक्ति होती है जो सदा पवित्र और निष्कलंक रहती है और जो हमे भी नए सिरसे निष्कलंक और परम पवित्र बना सकती है। प्रत्येक पतित व्यक्ति यदि चाहे तो इसी शक्तिके द्वारा अपने सब पापोसे मुक्त होकर सज्जन सच्चरित्र बन सकता है और उसे ऐसा बनना भी चाहिए।

१४—मानसिक चिन्ता
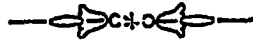
चिन्ता चिता समानास्ति
विन्दुमात्रं विशेषतः।

किसीने कहा है कि चिन्ता और चितामे केवल एक विन्दुका अन्तर है और नहीं तो दोनो बराबर हैं। बल्कि चिताकी अपेक्षा चिन्ता और भी अधिक भयंकर होती है। क्योकि चिता तो केवल मृत शरीरोको ही जलाती है, पर चिन्ता जीवित व्यक्तियोको ही दिन रात जलाया करती है।

एक और विद्वानका मत है कि कुछ लोग ऐसे होते हैं जो तीन प्रकारके कष्टोंसे पीडित रहते है। एक तो उन कष्टोसे जो अवतक उन्हे हुए थे, दूसरे उन कष्टोसे जो इस समय उन्हे भोगने पड़ते हैं और तीसरे उन कष्टोसे जिनकी वे भविष्यमें आशा करते हैं। मतलव यह कि इस समय उन्हे जो कष्ट भोगने पड़ते है वे तो भोगने ही पड़ते हैं, पर साथ ही वे पिछले तथा भावी कष्टोका ध्यान करके अपने ऊपर व्यर्थ ही और भी अनेक कष्ट वुला लेते है।

यदि कोई व्यक्ति संसारसे चिन्ताका नाश कर देता, तो वह संसारका इतना अधिक उपकार करता जितना अनेक वड़े वड़े महात्माओ और आविष्कर्ताओ आदिने मिलकर भी न किया होगा। प्रायः सभ्य जातियोके लोग उन जंगलियोकी दशापर वहुत दया दिखलाते है जो कल्पित देवो और दानवोके भयसे सदा भयभीत रहते हैं; परन्तु यदि ऐसे लोग स्वयं अपने आसपास रहनेवाले सभ्य लोगोंकी दशापर विचार करे, तो उन्हे वह दशा भी वहुत शोचनीय और दयाके योग्य जान पड़ेगी।

प्रायः शिक्षित और सभ्य लोग दिन रात अनेक प्रकारकी ऐसी भीषण चिन्ताओंसे ग्रस्त रहते हैं कि उन्हें न तो भोजन ही अच्छा लगता है और न रातको पूरी नींद ही आती है। वह चिन्ता उनके सारे सुखों और सारे आनन्दोंका नाश कर देती है, यहाँ तक कि उनका स्वास्थ्य भी बिलकुल नष्ट कर देती है और उनके जीवनका अधिकांश बहुत ही कष्टपूर्ण बना देती है। यह डाइन चिन्ता जन्मसे मरण तक उनके साथ लगी रहती है और कभी उनका पीछा नहीं छोड़ती। यहाँ तक कि व्याह शादी तथा आनन्दपूर्ण उत्सवोंके समय भी वह उनका पीछा नहीं छोड़ती। हर जगह, हर मौकेपर, हर घरमें, हर दूकानपर, जहाँ देखो वहाँ, वह अपना विकराल आकार लिए उपस्थित रहती है।

इस चिन्ताके कारण मानव बुद्धिका जो भीषण नाश होता है उसका सहजमें अनुमान नहीं किया जा सकता। इसने बड़े बड़े बुद्धिमानोंको मूर्ख बनाया है, बड़े बड़े वीरोंको कायर कर दिया है, बड़े बड़े उत्साहियोंको निरुत्साह कर दिया है, बड़े बड़े आशावादियोंको निराश कर दिया है और इसी प्रकारकी न जाने कितनी अधिक बुराइयाँ और खराबियाँ की हैं। सृष्टिके आदिसे अब तक मनुष्य जातिकी जितनी अधिक हानि इस चिन्ताके कारण हुई है, उतनी कदाचित् और किसी कारण नहीं हुई है।

यह चिन्ता लोगोंको अनेक प्रकारके पाप और दुष्कर्म करनेके लिए विवश करती है। उन्हे शराबी और नशेबाज बना देती है और उनका ईमान तक बिगाड़ देती है। लोग इसके विकराल स्वरूपसे इतना अधिक घबराते है कि वे इससे बचनेके लिए अपनी आत्मा और अपना शरीर तक बेच डालते हैं और संसारमें कोई काम करनेके योग्य नहीं रह जाते। ^ तमाशा यह है कि इतने पर भी यह दुष्ट उनका पीछा नहीं

छोड़ती। वल्कि यों कहना चाहिए कि वे स्वयं ही इससे अपना पीछा नही छुड़ा सकते । इसी चिन्ताके कारण हर साल हजारो आदमी आत्महत्या करते है और लाखो पापी तथा अत्याचारी वन जाते है। परन्तु इतना सव कुछ होने पर भी हम लोग चिन्ता करना नहीं छोड़ते, वरावर उसे अपने पीछे लगाए रहते है। यदि किसी प्रकार किसी दूसरे लोकसे कोई व्यक्ति इस लोकमे आ सके और वह हम लोगोकी दशा देखे, तो शायद यहीं समझेगा कि हम लोग चिन्ताको ही सवसे अधिक प्रिय समझते है और कभी उसे अपने हृदयसे अलग करना नहीं चाहते।

प्रायः सभी लोग यह वात वहुत अच्छी तरह समझते है कि जो व्यक्ति अपनी शक्तियोसे पूरा पूरा लाभ उठाकर सफल और सुखी होना चाहता हो, उसे इस चिन्ता राक्षसीके चंगुलसे निकलकर दूर रहना चाहिए। क्योकि यही सफलता और सुखकी सवसे वड़ी शत्रु है। परन्तु फिर भी समझमे नहीं आता कि वे क्यो इससे अपने आपको मुक्त नही कर पाते। यह कितने आश्चर्यकी वात है कि वे अनेक भावी आपत्तियोकी झूठी कल्पना करके सदा चिन्तित रहते है। वे अच्छी तरह जानते हैं कि यह चिन्ता केवल मानसिक शान्ति और शारीरिक वल तथा योग्यता आदिका ही नाश नहीं करती वल्कि स्वयं जीवनका वहुत वड़ा अंश नष्ट कर देती है। परन्तु जव फिर भी वे चिन्ता करते हुए पाए जाते है, तो विवश होकर यही कहना पड़ता है कि वे चिन्ताको ही सवसे अधिक चाहते है और जान वूझकर उसके फेरमे पड़े रहते है। यह चिन्ता हमारे हाथ पैर खूव कसकर वाँध देती है और हमारी दुर्दशाओको देखकर प्रसन्न होती है। हम परम दुखी हो जाते है और अपना सारा जीवन नष्ट कर वैठते है; परन्तु फिर भी उससे मुक्त होनेका कोई उपाय नही करते।

हम जानते हैं कि हमारा अमुक नोकर चोर है और जब अवसर पाता है तभी हमारा कुछ न कुछ माल उड़ा ले जाता है। लेकिन फिर भी यदि हम उसे अपने यहाँ नौकर रक्खे रहते हैं तो फिर हम बेवकूफ नहीं हैं तो और क्या है ? यही दशा सदा चिन्तित रहनेवालेकी समझनी चाहिए। हमारे मानसिक गृहमेसे यह चिन्तारूपी चोर सदा कुछ न कुछ चुराया करता है सदा हमारी कुछ न कुछ हानि करता रहता है; परन्तु फिर भी हम उसे मस्तिष्कसे निकाल बाहर करनेका साहस नहीं करते, यहाँ तक कि उसे निकाल बाहर करनेका कभी विचार भी नहीं करते। घर या दूकानका नौकर यदि चोर होता है, तो वह केवल रुपया पैसा या छोटी मोटी चीजे ही चुराया करता है; परन्तु चिन्ता तो हमारी सारी शक्तियोका नाश करती है और जो बाते हमारे जीवनको वास्तविक जीवन बना सकती है, उन्हीं बातोके मूलमे कुठाराघात करती है। भला ऐसे भारी शत्रुको दिन रात अपने मस्तिष्कमे स्थान दिए रहना मूर्खता-पूर्ण आत्मघात नहीं तो और क्या है ?

हमे उन जंगलियोकी दशापर तो बहुत दया आती है जो उपासना तथा पूजन आदिके उद्देश्यसे अपने शरीरके अंग छेदते या काटते हैं अथवा इसी प्रकारके और अनेक कार्य करते हैं जिनसे बहुत अधिक शारीरिक कष्ट होते हैं; परन्तु क्या स्वयं हमारी दशा भी ठीक उन्हीं जंगलियोंकी सी नहीं है ? हम भी तो जान बूझकर नित्य ऐसी क्रियाएँ करते रहते है जिनसे हमे बहुत अधिक मानसिक वेदना होती है। हम मानो जबरदस्ती वह वेदना मोल लेते हैं। अभी जिन बातोके होनेमे महीनों बल्कि बरसोकी देर होती है, उनके लिए हम आजही-घोर चिन्ता करने लगते हैं। उनमेसे बहुतसी बातो तो ऐसी

होती है जो कभी प्रत्यक्ष रूपसे घटित ही नही होती और जिनका अस्तित्व केवल हमारे मस्तिष्कमे ही होता है।

वहुतसी स्त्रियाँ ऐसी होती है जो दिन रात अनेक प्रकारकी व्यर्थ चिन्ताएँ किया करती है। यदि उनके वच्चे कहीं दो चार दिनके लिए वाहर चले जाते है अथवा घंटे दो घंटेके लिए कहीं वाहर खेलनेके लिए निकल जाते है, तो फिर वे दम भर भी चैन नहीं लेती। उनके सम्वन्धमे नाना प्रकारकी उलटी सीधी कल्पनाएँ किया करती है, उठ उठकर इधर उधर झाँका करती हैं, घरके लोगोपर विगड़ा करती है और जो आता है उसीसे या तो उनके सम्वन्धमे पूछा करती है और या उन्हींका जिक्र किया करती है। उन्हे सदा यही भय लगा रहता है कि कहीं मेरे वच्चेको नजर न लग जाय, कहीं वह गिर न पड़े, कहीं गाड़ी घोड़ेके नीचे न आ जाय। यद्यपि वे वच्चे नित्य वाहर जाते और नित्य सकुशल घर लौट आया करते है और उनके साथ कभी इस प्रकारकी कोई दुर्घटना नही होती; परन्तु फिर भी वे नित्य इसी प्रकारकी चिन्ताएँ करके मानसिक कष्ट भोगा करती है। यदि कहींसे कोई तार आ गया तो फिर क्या पूछना है। चाहे वह पढ़ा जाय और चाहे न पढा जाय, चाहे उसमें कैसी ही खवर क्यो न हो; परन्तु वे तारका नाम सुनते ही रोने लगती है। वल्कि इसी डरसे वे वह तार किसीसे पढ़ाती भी नहीं कि उसमे किसीकी मृत्युका समाचार होगा। वस इसी प्रकारकी वेसिरपैरकी चिन्ताओंसे वे दिन रात अपने आपको परेशान रखती है।

दिनभर व्यर्थकी चिन्ताएँ करनेके कारण हमारी वहुतसी शारीरिक शक्ति यो ही नष्ट हो जाती है और सन्ध्याके समय हम इतने शिथिल हो जाते है कि हमारे शरीरमे विलकुल दम नही रह जाता। हम अपनी

इस शिथिलताके अनेक प्रकारके कारणोकी कल्पना करने लगते हैं और मानो चिन्ताओंपर और अधिक चिन्ताका बोझ लाद लेते है। ऐसे ही लोगोको बुढ़ापा भी बहुत जल्दी आ घेरता है और वे बहुत शीघ्र और समयके पहले दुर्बल तथा असमर्थ हो जाते हैं। ऐसे लोग न तो अपने जीवनमें कोई अधिक परिश्रमका काम करते हैं और न कोई भारी विपत्ति ही सहते है। परन्तु फिर भी दिन रात व्यर्थकी बहुत अधिक चिन्ताएँ करते रहनेके कारण वे अपनी शारीरिक शक्तियोका इतना अधिक नाश कर लेते है कि समयसे बहुत पहले वृद्ध, दुर्बल और असमर्थ हो जाते है।

विलायतमे एक स्त्री थी जिसने अपने ऊपर आ सकनेवाली और सम्भावित विपत्तियोकी कल्पना करके उनकी एक बहुत बड़ी सूची तैयार की थी। वह प्रायः उसी सूचीका पारायण किया करती थी और नित्य यही सोचकर चिन्तित रहा करती थी कि आज इनमेसे अमुक विपत्ति मुझपर आवेगी और आज मुझे अमुक विपत्तिका सामना करना पड़ेगा। बस वह नित्य इसी प्रकारकी चिन्ताएँ किया करती थी। संयोगसे एक बार उसकी वह सूची खो गई और बरसो तक उसका कहीं पता न लगा। कई बरस बाद वह सूची फिर उसे मिल गई। परन्तु उसे बहुत अच्छी तरह देखनेपर भी उसे एक भी ऐसी विपत्ति न दिखाई दी जो इन कई बरसोके बीचमे उसपर आई हो। मतलब यह कि उसने जितनी विपत्तियोकी कल्पना की थी, उनमेसे एक भी वास्तवमें घटित नहीं हुई थी। उन विपत्तियोका उसके मस्तिष्कके अतिरिक्त और कहीं अस्तित्व न था। वह व्यर्थ ही उनसे डरा करती थी और व्यर्थ ही चिन्तित रहा करती थी। यदि आप भी चाहें तो इसकी परीक्षा करके देख सकते हैं। जितनी विपत्तियो आदिके आनेकी आप सम्भा-

चना करते हो, उन सवकी एक सूची वनाकर रख छोड़िए और कुछ दिनों वाद उसे निकालकर देखिए। उनमे शायद ही वहुत थोड़ीसी ऐसी विपत्तियाँ होगी, जो वास्तवमे आपपर आई होगी। शेप सब विपत्तियाँ वास्तविक नहीं वल्कि केवल कल्पित ही होती हैं। किसी वड़े शहरमे जाकर देखिए। आपको सैकड़ों हजारो आदमी इधरसे उधर परेशान और वदहवास घूमते हुए दिखाई देंगे। उनकी आकृतिसे ही ऐसा जान पड़ेगा कि मानो सारे संसारकी चिन्ता उन्हींके सिर आकर पड़ी है। यदि वे रेल गाड़ी या ट्राम गाड़ीमे वैठे होगे तो वार वार सिर वाहर निकालकर झाँकते हुए दिखाई देगे और अपना गन्तव्य स्थान सामने न देखकर ऐसी आकृति और चेष्टा करते हुए दिखाई देगे मानो वे उसकी गतिको और वढाना चाहते है। रास्तेमे वे ऐसे वदहवास होकर दौड़ते हुए दिखाई देगे कि उनके धक्केसे कहीं कोई वालक गिर पड़ेगा तो कहीं किसी गरीवके सिरका वोझा। उनकी हर एक वातमे जल्दवाजी और चिन्ता दिखाई देगी और उनके चेरेपर वल पड़े हुए होंगे। ये सव लक्षण वहुत ही चिन्तापूर्ण और अस्वाभाविक जीवनके है। परन्तु हमारा जीवन वास्तवमें इस वुरी तरहसे व्यतीत होनेके लिए नहीं वनाया गया है। उसमे तो एक विशेष प्रकारकी निश्चिन्तता, एक विशेप प्रकारकी स्वाभाविकता, और एक विशेप प्रकारका सौन्दर्य होना चाहिए। परन्तु आजकलके अधिकांश लोगोंके जीवनमे ये वाते नामको भी नहीं पाई जातीं और इसी लिए वे लोग उतना और वैसा काम भी नहीं कर सकते जितना और जैसा काम उन्हे करना चाहिए।

काम करनेसे आज तक कोई नहीं मरा; परन्तु चिन्ताने हजारों लाखो आदमियोके प्राण ले लिए है। कोई काम करनेसे हमारी उतनी अधिक शारीरिक हानि नहीं होती जितनी अधिक उस

कामसे भयभीत होनेमे होती है। प्रत्यक्ष रूपमे वह काम करनेसे पहले हम अपने मस्तिष्कमे हजारो वार उसका अभिनय कर जाते है और वह भी साधारण रूपसे नहीं वल्कि ऐसे रूपसे जो हमे वहुत अधिक अप्रिय और कटु जान पड़ता है। इसका परिणाम यही होता है कि जब प्रत्यक्ष काम करनेका अवसर आता है उससे वहुत पहले ही हम अपने आपको इतना अधिक शिथिल कर लेते है कि फिर वह काम करनेके योग्य ही नहीं रह जाते।

यह वात तो निश्चित ही है कि जब आदमीका मन ठिकाने नहीं रहता, तब वह कोई काम ठीक तरहसे और पूरा पूरा नहीं कर सकता। किसी कामको आरम्भ करनेसे पहले हमारे मस्तिष्क और शरीरमें पूरा पूरा वल होना चाहिए। यदि हमारा मन ठिकाने नहीं होगा, तो न तो हम कोई वात अच्छी तरह सोच सकेंगे और न समझ सकेंगे। सोचने और समझनेका काम हम अच्छी तरह तभी कर सकेंगे, जब हमारा मस्तिष्क विलकुल स्वच्छ रहेगा और उसमें चिन्ता आदिका नाम भी न रहेगा। वड़े वड़े वैज्ञानिको और डाक्टरोंने अनेक प्रकारके अनुसन्धान करके यह सिद्ध किया है कि जो लोग सदा वहुत अधिक चिन्ता किया करते हैं, उनके रक्तमे एक विशेप प्रकारका विप उत्पन्न हो जाता है जो हमारे सारे शरीरके स्वास्थ्यके लिए वहुत अधिक घातक और हानिकारक होता है। वहुत अधिक चिन्ता करनेका सवसे वुरा परिणाम यह होता है कि मनुष्यकी सोचने समझनेकी सारी शक्ति नष्ट हो जाती है। प्रायः ऐसे आदमी देखनेमे आते है जो किसी कारणसे अपना सर्वस्व नष्ट कर देते हैं और तब उनकी दशा विलकुल पागलोकीसी हो जाती है। उनकी सोचने समझनेकी शक्ति विलकुल नष्ट हो जाती है और वे कोई काम करनेके योग्य नहीं रह जाते। इसका मुख्य कारण यही है कि वे दिन

रात चिन्ता करते करते अपने सोचने और समझनेकी शक्तिका बिलकुल नाश कर बैठते हैं और तब उनकी अवस्था दिनपर दिन इतनी अधिक हीन होती जाती है कि उनके फिरसे उठनेकी कोई सम्भावना नही रह जाती। उसी दशामे वे निराश होकर उन चिन्ताओसे मुक्त होनेके लिए मद्यपान करने लगते है अथवा और किसी प्रकारका नशा करने लगते है। मानो धीरे धीरे सुलगती हुई आग और जोरसे सुलगाई जाने लगती है जो अन्तमे समस्त मानसिक और शारीरिक शक्तियोको भस्म करके ही छोड़ती है।

जो व्यक्ति अपने जीवनमे कभी कोई काम अच्छी तरह या पूरे तौरसे न कर सका हो, उसे सबसे पहला काम यह करना चाहिए कि वह चिन्तासे अपने आपको मुक्त कर ले। हमारे सुख और उन्नतिमे जितनी अधिक वाधक छोटी छोटी चिन्ताएँ हुआ करती है, उतनी अधिक वाधक और कोई वात या चीज नही होती। घोड़ा मेहनत करनेसे उतना ज्यादा परेशान नहीं होता जितना मक्खियोसे परेशान रहता है। मेहनत उसे चिन्तित नही करती, पर मक्खियाँ उसे चिन्तित कर देती है। फिर गाड़ी खीचनेसे वह उतना नही घवराता जितना वार वार रासके खींचे जाने और चावुकके हिलनेसे घवड़ाता है। इसी तरह आदमी भी वड़े वड़े कामोंसे उतना परेशान नहीं होता जितना व्यर्थकी छोटी मोटी चिन्ताओसे। इसलिए प्रत्येक समझदार आदमीका यह मुख्य कर्तव्य है कि वह अपने आपको सदा सब प्रकारकी चिन्ताओसे मुक्त रक्खे और व्यर्थकी वातोकी फिक्र करके अपने आपको परेशान न करे। क्योकि यही चिन्ता एक ऐसी चीज है जो हमारी शक्तियोका भी नाश करती है और हमारे सुखका भी।

वहुतसे लोग ऐसे हुआ करते हैं जो सदा कुछ न कुछ चिन्ता करते रहनेको ही अपना परम कर्तव्य समझते हैं। इसी तरहकी एक वृद्धा स्त्री थी जिसने अपने डाक्टरसे कहा था कि डाक्टर साहव, अव तो मेरा दिमाग विलकुल काम नहीं करता। यदि मैं किसी वातकी चिन्ता करना चाहूँ तो चिन्ता ही नहीं कर सकती। वात यह थी कि वह स्त्री सदासे वहुत अधिक चिन्ता करती आई थी और चिन्ता करनेकी ही अभ्यस्त थी; परन्तु चिन्ता करते करते उसका मस्तिष्क इतना अधिक दुर्वल हो गया था कि वह अव चिन्ता करनेके योग्य ही न रह गई थी। परन्तु वहुत दिनोसे उसे चिन्ता करनेका जो अभ्यास पड़ा हुआ था उसके कारण वह इतनी विवश थी कि अव विना चिन्ता किए उससे रहा ही न जाता था और चिन्ता करनेमे असमर्थ होना उसे एक प्रकारका रोग जान पड़ता था। यही दशा और भी वहुतसे लोगोकी हुआ करती है। वे समझते है कि सदा किसी न किसी वातकी चिन्ता करते रहना हमारा कर्तव्य है। वे सोचते हैं कि जो आदमी चिन्ता न कर सकता हो वह आदमी ही क्या? ऐसे लोगोंको यह जान रखना चाहिए कि चिन्ता मनुष्यकी शक्तियोका सवसे अधिक नाश करनेवाली है और उससे हर एक आदमीको जहाँ तक हो सके पीछा छुड़ानेका प्रयत्न करना चाहिए।

वहुतसी आपत्तियाँ ऐसी होती हैं कि यदि पहलेसे उनकी अधिक चिन्ता की जाय, तो यो चाहे वे विपत्तियाँ कभी न आनेको हो; परन्तु केवल चिन्ता करनेके कारण ही वे विपत्तियाँ आपसे आप आ जाती हैं। उदाहरणार्थ रोग है। यदि किसी रोगकी वरावर कुछ समय तक चिन्ता की जाय, तो और कोई कारण न होने पर भी केवल चिन्ताके कारण ही वह रोग हो जाया करता है। यदि आप यह चिन्ता करते

रहे कि कहीं हमे बुखार न आ जाय, तो इस प्रकारकी अधिक चिन्ताका परिणाम यही होगा कि आपको बुखार आ जायगा। भीषण संक्रामक रोगोंके सम्बन्धमे तो यह बात और भी अधिक चरितार्थ होती है। जब कभी प्लेग या हैजा आदि फैलता है, तब बहुतसे लोग पहलेसे केवल उसकी चिन्ता करनेके कारण ही उन रोगोसे पीड़ित हो जाते हैं और व्यर्थ ही असमयमे मृत्युके मुखमें चले जाते है। यह बात इतनी स्पष्ट है कि इसकी अधिक व्याख्या करनेकी आवश्यकता नहीं जान पड़ती और इसलिए हम अपने पाठकोसे केवल इतना ही कहना चाहते हैं कि वे और सब अवसरोंपर तो निश्चिन्त रहा ही करें; परन्तु ऐसे अव-सरोपर वे चिन्तासे मुक्त रहनेका और भी अधिक प्रयत्न किया करे।

एक बार प्रोफेसर गेट्सने इस सम्बन्धमे स्वयं अपने ऊपर परीक्षा की थी। उन्होने अपना एक अँगूठा खड़ा किया और दस मिनट तक अपना सारा ध्यान उसीपर जमाए रक्खा। परिणाम यह हुआ कि दस ही मिनटमे वह अँगूठा खूनसे बिलकुल भर गया और उसका ताप दूसरे अँगूठेकी अपेक्षा दो डिग्री बढ़ गया। इससे यह सिद्धान्त स्थिर होता है कि यदि हम अपने किसी विशेष अंगपर अपनी सारी विचार-शक्ति लगा दे और उस अंगके रोगी होनेकी कल्पना करते रहे, तो थोड़े ही समयमे वह अंग उसी रोगसे पीड़ित हो जायगा जिस रोगकी हम उसके सम्बन्धमें कल्पना करते रहेगे।

बहुतसे लोग ऐसे होते है जो व्यर्थ ही अपने सम्बन्धमे अनेक प्रका-रके रोगोकी कल्पना कर लिया करते है। वे समझते है कि हमको अमुक रोग है और बहुत दिनो तक किसी रोगकी कल्पना करते रहनेका परिणाम यह होता है कि अन्तमे उनको वही या उससे मिलता जुलता

कोई रोग हो ही जाता है। कुछ न कुछ शिकायत तो प्रायः सभीको वनी ही रहा करती है। किसीको भोजन ठीक तरहसे नहीं पचता, किसीको कभी कब्जकी शिकायत रहती है, कभी किसीका दिमाग ठीक तरहसे काम नहीं करता और कभी किसीको ठीक तरहसे नींद नही आती। जो लोग ऐसी छोटी छोटी वातोकी कभी परवाह नही करते, उनकी शिकायत तो प्रायः समय पाकर आपसे आप दूर हो जाया करती है; परन्तु कुछ लोग ऐसे होते है जो ऐसी शिकायतोके कारण दिन रात चिन्तित रहते है। वे समझते है कि हम वहुत वड़े रोगसे पीड़ित है। हमारा अमुक रोग अकेला ही नही है, वल्कि वह एक दूसरे रोगके कारण है और इन दोनो रोगोंके मिलनेसे एक तीसरा नया रोग पैदा हो गया है, आदि आदि। यही सोचकर वे कहीं रातका खाना छोड़ देते है, तो कहीं वहुत कम और वहुत थोड़ी चीजे खाने लगते है। वे समझते है कि अमुक पदार्थ तो हमे पच ही नहीं सकता और अमुक पदार्थ खानेसे हमारी यह हानि होगी और अमुक पदार्थ खानेसे हमारा यह रोग वढेगा अथवा यह नया रोग उत्पन्न होगा। ऐसे लोग जन्मभर डाक्टरो, हकीमो और वैद्योकी चिकित्सा किया करते है और फिर भी सदा वीमारके वीमार ही वने रहते है। एक कहावत है कि वहमकी दवा लुकमानके भी पास नहीं है। फिर भला वे अच्छे हो तो क्योकर हो? उन्हें वास्तवमे तो कोई रोग होता ही नहीं। रोग तो उनके मस्तिष्कमे हुआ करता है जो सदा यही समझता है कि हमे अमुक रोग है और अमुक व्याधि है। ऐसी समझका तो कोई इलाज हो ही नही सकता, इसलिए वे कुछ समयमे सचमुच भारी रोगी हो जाते हैं और फिर कभी किसी प्रकार अच्छे हो ही नहीं सकते। परन्तु यदि ऐसे लोग किसी प्रकार व्यर्थकी चिन्ताओंसे अपना पीछा छुड़ाकर सदा प्रसन्न

रहना सीख सके, आहार विहार आदि ठीक तरहसे करने लगे, खुली हवामे रहने लगे तो उनके सब रोग बहुत सहजमे दूर हो सकते है।

चिन्ताका हमारी पाचन-शक्तिपर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है और जब पाचन-शक्ति अपना काम ठीक तरहसे नहीं करती, तो फिर शरीरके और सब अंग भी कुछ न कुछ दूषित और शिथिल हो जाते है। अधिक चिन्ता करनेसे आदमीके बाल भी बहुत जल्दी और समयसे बहुत पहले सफेद हो जाते है, बल्कि बहुधा बिलकुल झड़ जाते है। एक और प्रभाव यह होता है कि चेहरेपर झुर्रियाँ पड़ जाती है और आदमी थोड़ी अवस्थामे ही अधिक बुड्ढा जान पड़ने लगता है। चिन्ताके कारण मनुष्य केवल अपने आपको बुड्ढा समझने ही नहीं लग जाता बल्कि वह सचमुच बुड्ढा हो जाता है। सब प्रकारकी चिन्ताओसे अधिक निकृष्ट चिन्ता वह होती है, जो किसी कार्यमे विफल होनेके कारण होती है। उससे मनुष्यकी भावी उच्चाकाक्षाओंका नाश हो जाता है, आगे कार्य करनेके लिए उत्साह नहीं रह जाता और वह समस्त उद्देश्य ही नष्ट हो जाता है जिसके लिए मनुष्य चिन्ता करता है। अतः किसी उद्योगमे विफल होनेपर कभी चिन्तित या निराश न होना चाहिए, बल्कि दोबारा नए उत्साहसे उस काममे लग जाना चाहिए और उसमें सफलता प्राप्त करनेके नए उपाय ढूँढ निकालने चाहिए। इस प्रकार मनुष्य अनेक हानियोसे भी बच जाता है और अन्तमे अपना कार्य भी सिद्ध कर लेता है।

बहुतसे लोग ऐसे होते हैं, जो सदा केवल पिछली बातोका स्मरण कर करके चिन्तित रहा करते है। अपने गत जीवनमें उन्हे जितनी कठिनाइयो और विपत्तियोका सामना करना पड़ा हो, उन सबको वे सदा अपनी दृष्टिके सामने रखते है और उन्हींको याद करके सदा दुखी

और चिन्तित रहा करते है। उनकी समझमे यह मोटी सी बात नहीं आती कि बीती हुई बातोके लिए पछतावा करनेसे कुछ भी लाभ नहीं होता। अपनी पिछली भूलो, दोषों, विफलताओ और विपत्तियो आदिका ध्यान करते करते उनकी दृष्टि इतनी संकुचित हो जाती है कि वे सदा पीछेकी ओर ही देखते रह जाते है। आगेकी ओर देखनेका उनको न तो कोई अवसर ही मिलता है और न उनकी रुचि ही होती है। उनका भूत जीवन तो पहले ही नष्ट हो चुका हुआ होता है पर अपनी मूर्खताके कारण वे अपना भविष्य भी बुरी तरहसे चौपट कर लेते है। उनकी दृष्टि सदा जीवनके अन्धकारपूर्ण अशपर ही रहती है, उसके प्रकाश-पूर्ण पार्श्वकी ओर देखना वे जानते ही नहीं। यदि ऐसे लोगोका सारा जीवन दु:खमय ही बना रहे तो इसमे सिवा उनके और किसका दोष है?

जितने ही अविक समय तक कोई अप्रिय चित्र हमारे मनमे बना रहता है उतना ही अधिक वह दृढ़ और स्थायी हो जाता है और फिर उसे निकाल बाहर करना उतना ही अधिक कठिन हो जाता है। इस-लिए अप्रिय बातोका स्मरण जहाँ तक हो सके, तुरन्त ही अपने हृदयसे निकाल बाहर करना चाहिए। व्यर्थकी चिन्ता करनेसे आज तक कभी किसीको कोई लाभ नहीं हुआ और न भविष्यमे कभी कोई लाभ हो सकता है। कोरी चिन्ता करके आज तक कभी कोई अपनी दशा नहीं सुधार सका। हाँ, सैकड़ो हजारो बल्कि लाखो आदमियोंने अपनी दशा और भी अधिक बिगाड़ ली है। इसलिए प्रत्येक समझदार मनुष्यको उचित है कि वह कभी किसी प्रकारकी चिन्ता न किया करे। केवल चिन्ता करनेसे कभी कोई काम पूरा नहीं हो सकता। संसारके सभी काम किसी गुप्त और बहुत बलवती शक्तिके अधीन हुआ करते है और उस शक्तिपर हमारा कोई अधिकार नहीं होता। हमारा अधिकार तो

केवल अपने परिश्रम और प्रयत्न पर ही होता है। हम यदि संसारमे कोई काम कर सकते है, तो केवल परिश्रम और प्रयत्न करके ही कर सकते हैं। परन्तु जब हम चिन्ता ही चिन्ता करने लगते हैं, तब मानो हम अपनी वह शक्ति ही नष्ट कर देते है जिसके द्वारा हम किसी प्रकार सफलता प्राप्त कर सकते है। चिन्ता तो हमारी मानसिक शक्तियोका भी नाश करती है और शारीरिक शक्तियोका भी।

इन सब बातोंका विचार करते हुए हमें यही उचित है कि हम सदाके लिए व्यर्थकी चिन्ता करना छोड़ दे और सदा प्रसन्न और निश्चिन्त रहनेका अभ्यास डाले। कुछ लोगोमे यह आदत हुआ करती है कि वे अपने सभी मित्रो और परिचितो आदिसे सदा अपनी विपत्तियो और कष्टो आदिका ही जिक्र करते रहते है। यह बात बहुत ही बुरी है और सदाके लिए त्याग देनेके योग्य है। अपनी विपत्तियो आदिको हमे सदाके लिए बिलकुल भूल जाना चाहिए। बार बार जिक्र करते रहनेसे तो उनकी स्मृति ज्योकी त्यो बनी रहती है। जहाँ तक हो सके सदा इस बातका भी ध्यान रखना चाहिए कि हमारा स्वास्थ्य ठीक रहे। क्योंकि अस्वस्थोकी अपेक्षा स्वस्थ व्यक्ति चिन्ताओसे शीघ्र मुक्त हो सकते हैं। चिन्ताका अधिक विकास प्रायः अस्वस्थताकी या स्वास्थ्यकी असाधारण अवस्थामे हुआ करता है। यदि हम स्वस्थ होंगे, पवित्रतापूर्वक अपना जीवन व्यतीत किया करेंगे और अपने विवेकके विरुद्ध कभी कोई काम न करेंगे, तो हमे जल्दी कभी चिन्तित ही न होना पड़ेगा। साथ ही हमे सदा प्रसन्न रहनेका भी अभ्यास रखना चाहिए। जो लोग सदा और सब अवस्थाओंमें प्रसन्न रह सकते है, चिन्ता उनका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकती। यदि कभी कोई अप्रिय बात हो भी जाती है, तो तुरन्त

उसकी ओरसे अपना ध्यान हटाकर दूसरी ओर लगा लेते है और स्वयं निश्चिन्त तथा प्रसन्न रहते है ।

ज्यो ही अपने सामने कोई चिन्ता या भय दिखलाई दे, त्यो ही हम उनकी ओरसे अपनी दृष्टि हटा ले और अपने मनमे उत्साह, आशा तथा विश्वासका संचार करे । जो बाते हमारी प्रसन्नता और सफलताके लिए बाधक हो, उन्हे अपने पास भी न फटकने देना चाहिए । चिन्ता-ओसे बचनेका सबसे अच्छा उपाय यही है कि हम सदा अपने मनमे उसके विरोधी भावको स्थान दिया करे, अर्थात् हम सदा निश्चिन्त और प्रसन्न रहा करे। जहाँ निश्चिन्तता और प्रसन्नता रहती है, वहाँ चिन्ता और दुःखका कभी प्रादुर्भाव नहीं हो सकता । इसलिए सब लोगोको सदा प्रसन्न और निश्चिन्त रहना चाहिए । दुःख और चिन्ताको अपने पास न आने देना चाहिए। संसारमे सुखी और सफल-मनोरथ होनेके लिए यही दोनो बाते सबसे अधिक आवश्यक होती है।

१५—भय

आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान् न बिभेति कश्चन ।

—तैत्तिरीय उपनिषद्, अनु० ९

न बिभेति यदाचार्यं यदा चास्मान्न बिभ्यति ।
यदा नेच्छति न द्वेष्टि ब्रह्म सम्पद्यते तदा ॥

किसीने कहा है कि भय आदमियोको दूसरोका गुलाम बना देता है । एक और विद्वानका मत है कि भयसे मनुष्यकी मानसिक, नैतिक और आत्मिक शक्तियोंका नाश हो जाता है, बल्कि उसकी मृत्यु तक हो जाती है ।

प्रश्न हो सकता है कि भय क्या है । यदि वास्तविक दृष्टिसे देखा जाय तो भय एक मानसिक भ्रमके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है । उसमे कोई वास्तविकता है ही नहीं । परन्तु फिर भी हम देखते हैं कि सयाने आदमियोंके लिए भय वही काम करता है जो बच्चोंके लिए भूत करता है । वास्तवमें भूतका कोई अस्तित्व नहीं होता, पर उसका नाम लेते ही बच्चे काँप उठते और रोने लगते हैं । भयका भी वास्तवमे कोई अस्तित्व नहीं होता । परन्तु सयाने लोग उस बिना अस्तित्ववाली चीजसे उतने ही भयभीत रहते हैं जितना कि किसी वास्तविक भीषण पदार्थसे ।

भय भी मानव-जीवनका नाश करनेवाला एक बहुत बड़ा और भीषण साधन है । इससे मनुष्यकी समस्त शक्तियोंका नाश हो जाता है । इससे मनुष्यका स्वास्थ्य नष्ट होता है, शारीरिक बल घटता है और मानसिक शक्तियोंका नाश होता है । इससे आशाका नाश होता है, उत्साहका अन्त हो जाता है और मन इतना अशक्त हो जाता है कि वह फिर कोई नई बात सोचने या समझनेके योग्य ही नहीं रह जाता ।

भयकी अवस्थामे जो काम किया जाता है, वह कभी ठीक और पूरा नही होता । जिस समय मनुष्य भयभीत होता है उस समय वह कभी कोई बड़ा काम कर ही नहीं सकता । भय सदा मनुष्यकी दुर्बलता और कायरताका सूचक होता है । जब आदमी भयभीत हो जाता है, तब वह कठिन अवसर आ पड़नेपर कभी बुद्धिमत्तापूर्वक काम नही कर सकता । बात यह होती है कि भयकी दशामे मनुष्य कभी अच्छी तरह सोच विचार ही नही सकता ।

जब आदमीको अपने विफल-मनोरथ होनेका भय होता है, तब उसका सारा उत्साह नष्ट हो जाता है और उसे अपने सामने भीषण कष्ट या दरिद्रताके दृश्य दिखाई देने लगते है । उस दशामे वह मानो कष्ट और दरिद्रताको आपसे आप अपनी ओर आकृष्ट करने लगता है। उसका सारा कारबार नष्ट हो जाता है और वह किसी कामके योग्य नही रह जाता । यदि सच पूछिए तो ये सब बाते तो बहुत पीछे होती है; परन्तु इन सब बातोसे पहले एक और बहुत बड़ी बात होती है और वह बात यह है कि उसकी सारी मानासिक शक्तियोका दिवाला निकल जाता है और उसकी सारी योग्यताएँ तथा सारे गुण जवाब दे देते है । परन्तु यदि हम किसी विकट अवसरपर भयभीत न हो जायँ, अपने मनमे उत्साह तथा साहस रक्खे और ठीक तरहसे दूरदर्शितापूर्वक अपना काम करते चले, तो शायद ही हमे कभी विफल-मनोरथ होना पड़े । परन्तु यदि हम भयभीत हो जायँगे, तो उन समस्त गुणो और शक्तियोसे हाथ धो बैठेंगे, जिनकी सफलता प्राप्त करनेके लिए परम आवश्यकता होती है ।

किसी आनेवाली घटना आदिसे भयभीत होना मानो उसके सामने पराजय स्वीकृत कर लेना है । यदि हम अपने किसी शत्रुको दूरसे

देखते ही उसके सामने अपना सिर झुका देंगे, तो भला हम उसपर कैसे विजय प्राप्त कर सकेंगे! इससे भी अधिक निकृष्ट और नाशक भय वह होता है जो विना किसी घटना आदिके हुए ही पहलेसे केवल उसकी कल्पना या अनुमान करके ही किया जाता है। वहुतसे लोगोकी यह आदत हुआ करती है कि वे सदा यही समझकर भयभीत रहा करते हैं कि हमपर अमुक विपत्ति आना चाहती है, हमारी अमुक हानि हुआ चाहती है, हमे अमुक रोग हुआ चाहता है, हमारे परिवारपर अमुक विपत्ति आना चाहती है, आदि आदि। मतलव यह कि वे सदा अनेक प्रकारके वुरे वुरे चित्र वनाकर अपनी दृष्टिके सामने रखा करते है और उन्हे देख देखकर डरा करते है। वे प्राय: कहा करते है कि कोई नहीं कह सकता कि मनुष्यपर कव कौनसी विपत्ति आ जायगी। इसलिए प्रत्येक व्यक्तिको सदा सव प्रकारकी विपत्तियोंके लिए तैयार रहना चाहिए। इस प्रकारकी वुद्धिमत्ता और दूरदर्शितासे तो ईश्वर ही रक्षा कर सकता है। संसारकी और कोई शक्ति तो इसके भीषण प्रभावसे मनुष्यको नहीं वचा सकती।

किसी आपत्तिके आनेसे पहले ही उसका ध्यान करके डर जानेसे शारीरिक शक्तियोका जितना अधिक ह्रास होता है, उतना कदाचित् और किसी कारणसे नहीं होता। इसलिए भावी विपत्तियोसे भयभीत होनेसे वढकर मूर्खतापूर्ण और कोई वात नही हो सकती। क्यों कि जिन विपत्तियोसे हम भयभीत होते है, वे विपत्तियाँ वास्तवमे तो उस समय उपस्थित होतीं हीं नहीं, उनका अस्तित्व केवल हमारी कल्पनामे होता है और वह कल्पना भी प्राय: विलकुल निराधार और निर्मूल हुआ करती है। क्योकि जो विषय प्रस्तुत या उपस्थित ही न हो, वह निराधार और निर्मूल नहीं तो और क्या है। पहलेसे ही किसी वातसे भयभीत

होनेका एक और दुष्परिणाम यह होता है कि जब वह बात वास्तवमें आकर हमारे सामने उपस्थित होती है, तब हमारे पहलेसे ही भयभीत रहनेके कारण उसका परिणाम हमारे लिए और भी अधिक भयंकर हो जाता है। मान लीजिए कि हम पहलेसे ही बुखारसे बहुत डरते है और सोचते है कि बुखारमे हमें बहुत अधिक कष्ट होता है, इतना अधिक कष्ट होता है कि प्राणान्तसा होने लगता है। साथ ही हम यह भी समझते है कि अमुक ऋतुमे अथवा अमुक प्रकारका बुखार बहुत अधिक घातक होता है और उससे आदमी जल्दी बचता ही नहीं। अब यदि हम कभी दैवसंयोगसे उसी ऋतुमे अथवा उसी ज्वरसे पीडित हुए, तो हमारा भय अधिक बढ़ जाता है और हम उसका मुकाबला करनेके लिए विलकुल समर्थ नहीं रह जाते। इस बातका स्वभावतः यही परिणाम होता है कि हमारे लिए वह ज्वर बहुत अधिक घातक सिद्ध होता है और सम्भव है कि हमारे विश्वासके अनुसार ही वह हमारे प्राण भी ले ले।

भयसे मनुष्यकी आयु बहुत अधिक क्षीण हो जाती है। क्यो कि उससे हमारे समस्त अगोके कार्योंमे बहुत बड़ी बाधा पहुँचती है और हमारा स्वास्थ्य बहुत खराब हो जाता है। सदा बहुत अधिक भयभीत रहनेवाले लोग समयसे बहुत पहले केवल बुड्ढे ही नहीं हो जाते बल्कि समयसे बहुत पहले मर भी जाते है। प्रायः दुर्बल और भावुक मनुष्योको भय बहुत सताया करता है। ऐसे लोग अपनी कल्पनाके द्वारा किसी विपत्ति या कष्टकी भयंकरता बहुत अधिक बढा लिया करते है और समझने लगते है कि इसका अधिकसे अधिक जो बुरा परिणाम हो सकता वह सब हमपर हुए बिना न रहेगा। परन्तु जिन लोगोंका मन और शरीर बलवान् हुआ करता है, वे आनेवाली विपत्तियोकी बहुत

कम चिन्ता किया करते हैं। वे प्रायः उनकी ओरसे लापरवाह रहा करते है और सोचते है कि जब कोई बात होगी तब देखा जायगा। वे यह भी समझते है कि जब वह विपत्ति आवेगी, तब हम अच्छी तरहसे उसका मुकाबला करेंगे। इस प्रकार सोचनेका परिणाम यह होता है कि उनमें विपत्तियों और रोगो आदिको सहने और उनका सामना करनेकी पूरी पूरी शक्ति बनी रहती हैं। पहले तो जल्दी वह विपत्ति या रोग आता ही नही और यदि कभी किसी कारणसे वह आ भी गया, तो वे अच्छी तरह उसका मुकाबला करते हैं और सहजमे उससे पार पा जाते है। अतः प्रत्येक व्यक्तिको अपने मनकी इसी प्रकारकी अवस्था और स्थिति रखनी चाहिए और आनेवाली विपत्तियोका कभी ध्यान भी न करना चाहिए।

बहुतसे माता पिता इतने मूर्ख होते है कि वे अपने छोटे छोटे बच्चोमे आरम्भसे अनेक प्रकारके भयो और आशकाओ आदिका संचार करते रहते है। सबसे पहले तो वे उन्हे भूत प्रेत आदिसे डराया करते है और कहा करते हैं कि देखो अमुक स्थानपर अकेले न जाना, अमुक स्थानपर नगे सिर न जाना, अमुक स्थानपर हाथमे खानेकी कोई चीज लेकर न जाना, आदि आदि। फिर वे उन्हे यह कह कहकर डराया करते है कि अमुक समयमे नंगे न घूमना, अमुक समयमे धूपमें न घूमना, अमुक समयमें छतपर न जाना। वे कहते है कि अगर तुम ऐसा करोगे तो हम नहीं जानते और ऐसा करोगे तो तुम जानना। बेचारा अबोध बालक उन लोगोकी इस प्रकारकी बातोका और कुछ अर्थ तो जानता या समझता ही नही, वह केवल भयभीत होकर रह जाता है। इस प्रकार भयका दुःखदायक बीज बहुत आरम्भसे ही उसके कोमल हृदयमे बो दिया जाता है जिसका भीपण दुष्परिणाम उसे जन्म-

भर सहना पड़ता है। बचपनसे ही उनके सिरपर भयका जो भूत सवार करा दिया जाता है वह फिर जन्मभर उनका पीछा नहीं छोड़ता और सचमुच भूत बनकर उनके साथ लगा रहता है। यह भूत उन्हे कभी सुखी और प्रसन्न नही रहने देता। जिस समय माता पिता छोटे छोटे बालकोको अनेक प्रकारकी बातोसे भयभीत करते हैं, उस समय वे अपने मनमे तो यही समझते है कि हम बालकोके साथ बड़ा उपकार कर रहे हैं, उनको बहुत अच्छी बाते बतला रहे है, उनके भावी जीवनका बहुत हित कर रहे है। परन्तु वास्तवमें उनके डरानेका परिणाम इसके बिलकुल विपरीत होता है। बालकके हृदयमे भयका संचार करना मानो किसी जीवित मासमे जहरीला काँटा चुभाना है। वह जहरीला काँटा स्वयं तो जिस स्थानपर रहता है उस स्थानपर सदा पीड़ा उत्पन्न करता ही रहता है, पर साथ ही उसका विष अन्यान्य अंगोमे भी संचार कर जाता है। इसलिए बालकोको कभी किसी बातसे डराना नहीं चाहिए; बल्कि उनको निर्भय और निःशंक बनानेका प्रयत्न करना चाहिए।

जिस बालकको आरम्भसे किसी बातसे डराया न जायगा वह क्या जानेगा कि भय किसे कहते है? फिर वह अपना सारा जीवन निर्भय होकर और बहुत सुखसे व्यतीत करेगा। स्वयं प्रकृतिने हमारे लिए कभी भयकी सृष्टि नहीं की है। भय तो हमारे मस्तिष्कसे ही उत्पन्न होता है और उसी भयका हम छोटे बालको तकमें बहुत आरम्भसे ही संचार कर देते है। एक बहुत बड़े डाक्टरका मत है कि बहुतसे छोटे छोटे बच्चे केवल इसी लिए मर जाते हैं कि उनके मनमे किसी न किसी ...के भयका संचार कर दिया जाता है। यदि आरम्भसे ही समझ-

दारीसे काम लिए जाय और वच्चोको सदा भयभीत होनेसे वचाया जाय, तो वहुतसे वच्चे अकाल मृत्युसे वच सकते हैं।

वच्चोको वहुत अधिक डरा देना तो वहुत सहज है, पर पीछेसे उनके मनसे वह डर निकालना और शान्त तथा स्वस्थ करना वहुत ही कठिन काम है। मूर्ख माताएँ छोटे वच्चोंको ठीक रास्तेपर लानेका और कोई उपाय तो जानती ही नहीं, रह रहकर वात वातमे उन्हे डराया करती हैं। जहाँ वच्चा जरा भी किसी वातके लिए जिद करने लगता है, किसी वातके लिए मचलता है, या और किसी कारणसे रोने लगता है, वहाँ वे चट उसे डराकर शान्त करनेका प्रयत्न करती है। इस क्रियासे वालक चुप तो हो जाता है; परन्तु उसका वह चुप होना उसके वहुत अधिक भयभीत होनेके कारण होता है। यह भय तुरन्त ही वालकके स्वास्थ्यपर अपना भीषण प्रभाव तो डालता ही है; परन्तु इससे उसकी मानसिक अवस्थापर और भी अधिक वुरा प्रभाव पड़ता है।

डाक्टर हालकाम्व कहते हैं कि भय एक ऐसा सूत्र होता है जो यदि जीवनके आरम्भमें आ जाय तो उसके अन्त तक वरावर चला चलता है। हम जन्मसे ही अपने चारो ओर भय तथा आशंका आदि देखते रहते है और जो माता हमे जन्म देती तथा हमारा पालन-पोपण करती है, वह भी हमे जन्म देनेसे महीनो वल्कि हफ्तो पहलेसे वहुत ही भयभीत रहती है। इस प्रकार हमारा जन्म ही मानो भयसे आरम्भ होता है। फिर हम अपने माता पिता और घरके वड़े वूढोसे डरते है, अपने शिक्षको आदिसे डरते हैं, अपने साथियोसे डरते हैं, भूत प्रेत आदिसे डरते हैं, कायदे कानूनोसे डरते है, सजाओ और जेलोसे डरते है और डाक्टरो तथा चिकित्सकी आदिसे डरते हैं। जव हम सयाने होते हैं

तब हमारा जीवन घोर चिन्तामे बीतता है और यह चिन्ता भी भयका ही एक छोटा मोटा रूप हुआ करता है। अपने काम धन्धोंमे हम विफलताओं आदिसे डरते है, अपनी भूलोसे डरते है, अपने शत्रुओसे डरते है, दरिद्रतासे डरते है, लोकापवादसे डरते है, दुर्घटनाओसे डरते है, रोगोसे डरते है, मृत्युंसे डरते है और मृत्यु उपरान्त होनेवाली यातनाओ तथा नरक आदिके विचारोसे डरते हैं। इस प्रकार जन्मसे मरण-पर्यन्त वास्तविक और कल्पित सभी प्रकारके भय हमारे पीछे लगे रहते है। ये भय केवल कल्पित ही नही हुआ करते, बल्कि गत मानव समाजके मिथ्या विश्वासो और झूठी कल्पनाओ आदिके संकलित और समुच्चयात्मक रूप हुआ करते है।

जब कभी किसी बड़े वंकका दिवाला निकल जाता है, तव वहुतसे लोग ऐसे वकोमेसे भी जिनकी अवस्था वहुत अच्छी होती है और जिनका शीघ्र दिवाला निकलनेकी कोई सम्भावना नही होती, अपना अपना रुपया निकालनेके लिए दौड़ पड़ते है। यह भी हम लोगोके भयभीत होनेका एक वहुत वड़ा प्रमाण है। इस भयके कारण हम कभी अच्छे अच्छे बंकोंका भी दिवाला निकाल देते हैं और इस प्रकार अकारण ही वहुतोकी वहुत वड़ी हानि कर बैठते है। यद्यपि उस समय भयभीत होनेकी कोई आवश्यकता नही होती; परन्तु फिर भी अपनी आदतसे लाचार होते है और व्यर्थ ही डर जाते है। दिवाला तो किसी कारणसे एक वकका निकलता है; परन्तु हम लोग अपनी मूर्खताके कारण उसके साथ साथ और भी कई वंकोका दिवाला निकाल देते है। इस प्रकार थोड़ेसे लोगोके भयभीत हो जानेके कारण कभी कभी सारे समाजकी वहुत वड़ी हानि हो जाती है। फिर सारे समाजमे इसी तरहकी वाते होने लगती है, जिनका प्रभाव अन्यान्य नगरो तथा पेशों

आदिपर भी पड़ता है और उसके परिणामस्वरूप कुछ समय तक समाजपर बराबर विपत्तियोपर विपत्तियाँ आती रहती हैं।

अब एक और प्रकारके भयको लीजिए। बहुतसे लोगोको सदा इस बातका भय लगा रहता है कि और लोग हमारे बारेमें क्या सोचते होगे, क्या समझते होगे और क्या कहते होगे। वे अपने जीवनमे पग पगपर यही सोचकर सदा भयभीत रहते है। बहुतसे लोग ऐसे होते हैं जो संसारकी और किसी बातसे उतना नहीं डरते जितना दूसरोके हँसी उड़ानेसे डरते है। ऐसे लोग केवल इसी लिए अपनी बहुत बड़ी बड़ी हानियाँ कर बैठते है और बहुत कुछ शारीरिक तथा मानसिक कष्ट उठाते है कि जिसमे उनको किसी बातपर कोई हँसे नहीं, उनका मजाक न उड़ावे।

अमेरिकाका एक रक्तवर्ण इंडियन था जिसका मित्र एक डाक्टर था। एक बार उस डाक्टरने अपने इंडियन मित्रको अपने यहाँ यो ही कुछ बात चीत करनेके लिए बुलाया। जिस समय वह इंडियन वहाँ पहुँचा उस समय उस डाक्टरके कई ऐसे मित्र वहाँ बैठे हुए थे जो वहाँके पागलखानेके बोर्डके सदस्य थे। उन सदस्योने यो ही हँसी हँसीमे उस इंडियनसे पूछा कि आपका दिमाग तो दुरुस्त है न? इतना सुनते ही वह इंडियन बेतरह घबराया। उसने अपने मित्रसे पूछा—क्या तुम मुझे पागलखाने भेजना चाहते हो? बस इतना कहते ही उसकी बोली बन्द हो गई, वह बेहोश हो गया और कुछ ही घंटोके बाद मर गया।

एक बार एक डच चित्रकार एक ऐसे कमरेमे गया जिसमे बहुतसी ठठरियाँ आदि रक्खी हुई थीं। वहाँ वह उन ठठरियोके चित्र बनानेके लिए

बुलाया गया था। चित्र बनाते बनाते वह थक गया और वहीं थोड़ी देरके लिए सो गया। इतनेमें भीषण भूकम्प आया जिससे वह जाग पड़ा। उस समय भूकम्पके कारण उन ठठरियोको हिलते हुए देखकर वह इतना भयभीत हुआ कि उससे वहाँ ठहरा न गया और वह एक खिड़कीमेंसे नीचे बाहरकी ओर कूद पड़ा। यद्यपि नीचे कूदनेमे उसे कुछ भी चोट नहीं आई थी; परन्तु फिर भी उन हिलती हुई ठठरियोंको देखकर वह इतना भयभीत हो गया था कि वह थोड़ी ही देर बाद मर गया।

कई बार ऐसा देखा गया है कि युद्ध क्षेत्रमें लड़नेवाले सिपाही बिना गोली गोला लगे केवल भयसे ही मर गए हैं। किसी प्रकार उन्हे यह सन्देह हो गया कि हमें गोली लग गई। यद्यपि वास्तवमें उन्हें गोली बिलकुल नहीं लगी थी; परन्तु फिर भी वे तुरन्त उसी प्रकार मर गए जिस प्रकार लोग गोली लगनेके कारण मर जाते हैं। इस प्रकारकी एक घटना एक बार न्यू ऑर्लियन्समे हुई थी। एक बार एक बहुत हट्टा कट्टा हब्शी अस्पतालमें पहुँचाया गया। जो लोग उसे उठाकर अस्पताल ले गए थे, उन्होंने रास्तेमें उसे यह कहकर बहुत डरा दिया था कि लड़ाईमे तुम्हें जो गोली लगी थी, वह तुम्हारे अन्दर चली गई है जिसके कारण तुम्हारे शरीरके अन्दर अन्दर कहींसे बहुत तेज खून बह रहा है। यद्यपि वह हब्शी शरीरसे बहुत हृष्ट पुष्ट था और उसका रंग बिलकुल काला था तथापि मारे भयके उसका रंग बिलकुल सफेद हो गया। उसके हाथ पैर बिलकुल काँप रहे थे और ऐसा जान पड़ता था कि वह थोड़ी ही देरमें मर जायगा। उसके शरीरमे ऊपरसे कहीं खून निकलता हुआ नहीं दिखलाई देता था। उसे गोली अवश्य लगी थी, क्यों कि उसने अपने पहननेके कोटमें गोलीका छेद देखा था। रास्तेमें लोगोंने

उससे कह दिया था कि गोली तुम्हारे अन्दर पहुँच गई है, जिससे तुम्हारे अन्दर अन्दर बहुत खून वह रहा है। वस, इसी लिए वह बहुत अधिक घबरा गया था और मृतप्राय हो रहा था। परन्तु बहुत अच्छी तरह जाँच करनेपर पता चला कि गोली उसके शरीरके अन्दर नहीं पहुँची है। क्योंकि शरीरके ऊपर गोलीका कहीं कोई निशान नहीं था। बात यह हुई थी कि गोली उसे लगी अवश्य थी; परन्तु उसके बटनके साथ लगकर चिपटी हो गई थी और इसी लिए शरीरमें प्रविष्ट नहीं हुई थी। जब उसका कोट झटकारा गया तब उसमेंसे वह गोली निकल कर जमीन पर गिर पड़ी। अब उस हब्शीको दृढ विश्वास हो गया कि मुझे कहीं गोली नहीं लगी है। वह तुरन्त ही बिलकुल भला चंगा हो गया और मुरदनीके जितने चिह्न उसके शरीरपर प्रकट हुए थे वे सब तुरन्त नष्ट हो गए। वह चट टेबुलपरसे उतर पड़ा और हँसता हुआ अपने घर चला गया। यह वही हब्शी था जो पाँच मिनट पहले बिलकुल मृतकोंकीसी दशाको पहुँच रहा था और जो यदि और कुछ देर तक उसी अवस्थामें पड़ा रहता, तो अवश्य मर गया होता।

नेपोलियन प्रायः ऐसे अवसरोंपर भीषण प्लेगके रोगियोंके पास अस्पतालमें जाया करता था जब कि अच्छे अच्छे डाक्टर भी वहाँ जानेसे डरते थे। वहाँ जाकर वह उन रोगियोंको स्पर्श करता था और उनकी अवस्था देखता था। वह कहा करता था कि जो आदमी प्लेगसे नहीं डरता, वही प्लेगका नाश कर सकता है।

मनुष्यको सुखी और सफल होनेके लिए निर्भय रहना इतना अधिक आवश्यक है कि उसे छोटी अवस्थासे विद्यालयोंमे ही सदा निर्भय रहनेकी शिक्षा दी जानी चाहिए। जिस मनुष्यमे अनेक दोष और त्रुटियाँ हो, उसमें यदि यथेष्ट साहस हो, तो उन दोषो और त्रुटियोंका मार्जन हो

जाता है। परन्तु जो मनुष्य सदा भयभीत रहता है, वह वास्तवमे मनुष्य ही नही कहा जा सकता। जहाँ कहीं जरा भी भयभीत होनेकी सम्भावना हो, वहाँ पहलेसे ही अपने मनमे साहस उत्साह और आशा आदिका संचार कर लेना चाहिए। संसारमे कोई ऐसा भय नहीं है जो निर्भयता और साहसके सामने ठहर सके। डाक्टर ड्यूकका मत है कि भयसे पागलपन, लकवा, गंजापन, दाँतोका गिरना, वालोका पकना, गर्भपात, तथा अनेक प्रकारके चर्मरोग हो जाते है। हमे जिस चीजके खानेसे खाँसी, कब्ज या इसी प्रकारका और कोई राग हो जाता है हम वह चीज खाना छोड़ देते है। इसलिए हमे भयका भी उसी प्रकार परित्याग कर देना चाहिए। क्योकि इससे भी अनेक प्रकारके रोग होते है। उन्हीं डाक्टर ड्यूकका यह भी मत है कि जब किसी समाजमे कोई भीषण संक्रामक रोग फैलता है, तव वहुतसे लोग केवल भयभीत होनेके कारण ही उन रोगोके शिकार हो जाते हैं। अतः जिस प्रकार हम भीषण सक्रामक रोगोसे वचनेके लिए सचेत और सतर्क रहते हैं, उसी प्रकार हमें भयभीत होनेसे भी सदा वचते रहना चाहिए। डाक्टर हालकाम्बका मत है कि भय स्वयं ही एक भीषण संक्रामक रोग है। जो मनुष्य बहुत अधिक भयभीत हो जाते है, उनके शरीरमे और किसी संक्रामक रोगके कीटाणुओके प्रविष्ट होनेकी आवश्यकता नहीं रह जाती। भय ही उनके लिए उस सक्रामक रोगका काम कर जाता है। लोग जितने ही अधिक भयभीत होते है, उतना ही अधिक कोई सक्रामक रोग समाजमें फैलता है। अभी कुछ दिन हुए रूसमे भीषण रूपसे हैजा फैला था। उस समय अस्पतालोंमे हैजेके ऐसे वहुतसे रोगी लाए जाते थे जिनमें ऊपरसे देखनेसे हैजेके प्रायः सभी लक्षण दिखाई पड़ते थे; परन्तु जव भली भाँति परीक्षा की जाती थी, तो पता चलता था कि उनके

शरीरमें हैजेके कीटाणुओंका कहीं नाम भी नहीं है और उनका सारा रोग केवल भयजन्य ही है। इसलिए वहाँके अधिकारियोंको एक घोषणा-पत्र निकालकर लोगोंको इस बातके लिए सचेत करना पड़ा था कि लोग व्यर्थ ही भयभीत न हों। वहाँ यह भी देखनेमे आता था कि जिन लोगोंको सचमुच हैजा हो जाता था, वे भी पन्द्रह मिनटके अन्दर ही मर जाते थे। इसका कारण यही था कि वह पहलेसे ही इतने अधिक भयभीत होते थे कि रोगका आक्रमण होते ही, बल्कि यों कहना चाहिए कि उससे बहुत पहले ही, अपनी सारी रोगनिवारिणी शक्ति खो बैठते थे। इसी लिए समझदारोंको यह सिद्धान्त स्थिर करना पड़ा था कि स्वय हैजेसे तो बहुत ही थोड़े आदमी मरे; परन्तु भयके कारण बहुत अधिक आदमी मर गए।

बहुतसे लोग अपने धार्मिक विश्वासके अनुसार समझा करते हैं कि मृत्युके उपरान्त आत्माको अनेक प्रकारके भीषण कष्ट भोगने पड़ते है और उन कल्पित कष्टोंका वर्णन सुनकर वे लोग बहुत पहले यहींसे कष्ट भोगने लग जाते हैं। बहुतसे लोग ज्योतिषियों और भड्डरों आदिकी भविष्यद्वाणियाँ सुनकर ही बहुत चिन्तित तथा भयभीत हो जाते हैं। यदि किसी व्यक्तिसे कहा जाय कि तीस या पैंतीस वर्षकी अवस्थामें तुम्हारा भाई, स्त्री, या लड़का मर जायगा, तो बरसों पहलेसे उसके चित्तकी जो अवस्था होगी उसकी कल्पना करना सहज नहीं है। इस भयके कारण उसके मन तथा शरीरकी क्या दशा होगी, यह ईश्वर ही जाने। इस प्रकारकी बहुतसी भविष्यद्वाणियाँ केवल इसलिए ठीक उत-रती हैं कि जिस बातकी कल्पना या अनुमान बहुत दिनो तक बराबर किया जाता है, वह बात प्रायः अपनी मानसिक प्रवृत्तिके कारण ही आपसे आप हो जाया करती हैं। लार्ड बायरन जब छोटी अवस्थाके

थे तभी उनसे किसीने कह दिया था कि तुम सैंतीस वर्षकी अवस्थामें मर जाओगे। इस अवस्था तक पहुँचनेसे बरसो पहलेसे वे सदा चिन्तित रहा करते थे। अन्तमे जब वे सैंतीस वर्षके हुए, तब अपने उसी विश्वासके कारण बीमार पड़े और तब उन्हे अपनी मृत्यु और भी निश्चित जान पड़ने लगी। अपने इसी विश्वासके कारण वे रोगको सहन करनेमे असमर्थ हो गए और अन्तमे मर भी गए। इसी प्रकारकी और सैकड़ो हजारो बातें बतलाई जा सकती हैं, जिनसे केवल जंगली और अशिक्षित ही नही बल्कि सभ्य और शिक्षित लोग भी सदा भयभीत रहा करते है और उस भयके परिणामस्वरूप अनेक प्रकारके कष्ट भोगते हैं। इस प्रकारके मिथ्या विश्वास अशिक्षितोमे और भी अधिक होते है। शिक्षाके प्रचारसे इस प्रकारके मिथ्या विश्वास बहुत कम होते जा रहे है और अब शीघ्र ही इनका बिलकुल अन्त हो जाना चाहिए।

यदि मानव समाजमेंसे किसी प्रकार मिथ्या भय और आशंकाएँ आदि निकाल दी जा सके, तो उसका बहुत बड़ा कल्याण हो और उसकी उन्नतिकी गति बहुत अधिक बढ जाय। भयका यह भीषण बन्धन ही मानव समाजकी उन्नति और कल्याणमे बहुत बड़ा बाधक हो रहा है। इससे अनेक प्रकारके कष्ट, अनेक प्रकारकी हानियाँ, अनेक प्रकारकी दुर्घटनाएँ, अनेक प्रकारकी विफलताएँ तथा इसी प्रकारकी और बहुतसी ऐसी बाते होती है जो मनुष्योको बिलकुल दास बनाए रखती है। प्रत्येक शिक्षित और समझदार व्यक्तिका यह कर्तव्य है कि वह लोगोके मनसे इस प्रकारके भय दूर करनेका प्रयत्न करे और सब लोगोको यह समझावे कि मनुष्य अपने भाग्यका स्वयं ही विधाता है और उसे कभी किसी बातसे डरनेकी आवश्यकता नही है। जो बातें

हमारी सुख समृद्धिमे बाधक होती है उन्हें हम स्वयं ही दूर कर सकते है । ईश्वर हमपर विपत्तियोके पहाड़ नही गिराता, बल्कि हम स्वयं ही अपने लिए विपत्तियोको निमन्त्रित करते है । ईश्वरने तो हममें एक ऐसी शक्ति उत्पन्न कर दी है, जिससे हम सब प्रकारकी विपत्तियोका नाश कर सकते है और उसी शक्तिके द्वारा हम सब प्रकार सुखी, सम्पन्न तथा सफल-मनोरथ हो सकते है ।

१६—आत्म-संयम

कामक्रोधौ लोभमोहौ देहे तिष्ठति तस्कराः ।
ज्ञानरत्नापहाराय तस्माज्जाग्रत जाग्रत ॥
बंधुरात्माऽऽत्मनस्तस्य येनाऽऽत्मैवात्मना जितः ।
अनात्मनस्तु शत्रुत्वे वर्तेतात्मैव शत्रुवत् ॥
सर्वोपायात्तु कामस्य क्रोधस्य च विनिग्रहः ।
कार्यः श्रेयोऽर्थिना तौ हि श्रेयो धातार्थमुद्यतौ ॥
यश्च नित्यं जितक्रोधो विद्वानुत्तमपूरुषः ।
क्रोधमूलो विनाशो हि प्रजानामिह दृश्यत ॥

श्रीमती ओलिफेण्टका कथन है कि यदि मुझपर यह प्रमाणित कर दो कि तुम अपनी इच्छाओ और विचारोको अपने वशमे रख सकते हो, उनका दमन कर सकते हो, तो मै कहूँगी कि तुम सुशिक्षित आदमी हो और यदि तुममें यह वात नहीं है, तो फिर तुम्हारी सारी शिक्षा किसी कामकी नहीं है ।

जो व्यक्ति स्वयं अपने आपपर शासन नहीं कर सकता, वह कभी कोई वड़ा काम नहीं कर सकता । इसी आत्म-संयमके कारण हजारों लाखो ऐसे आदमियोका जीवन सदाके लिए नष्ट हो जाता है, जो वहुत सुशिक्षित होते है, अच्छी अच्छी आकांक्षाएँ रखते हैं और अनेक प्रकारके गुणोसे सम्पन्न होते है ।

लोग प्रायः जरा जरासी वातपर वहुत गरम हो जाया करते है और क्रोधमें आकर अपनी वड़ी वड़ी हानियाँ और वड़े वड़े अपराध कर वैठते है । किसी जेलखानेमे जाकर वहाँके कैदियोसे पूछे, तो उनमेसे [illegible]रे आपको वहुत पश्चात्ताप करते हुए मिलेगे । वे कहेगे कि हमने

अमुक अवसरपर समझदारीसे काम नहीं किया; एक आदमीसे लड़ बैठे, एक लडकेको मार बैठे, उसीका हमे इस समय यह परिणाम भोगना पड़ रहा है। मिजाजकी वह गरमी तो शायद एक मिनट भी नही रहती, पर उसका परिणाम महीनो बल्कि बरसो तक भोगना पड़ता है। फिर कोई प्रतिकार नहीं हो सकता और पश्चात्ताप मात्र हाथ रह जाता है। इसी प्रकार बहुतसे लोग जरासा गुस्सेमे आकर सदाके लिए अपनी बडी नौकरी या मर्यादा आदि खो बैठते है। बरसोकी बनी बनाई बात दम भरमे बिगाड़ दी जाती है। बहुतसे दूकानदारोकी दूकान केवल इसलिए नहीं चलती कि उनका स्वभाव बहुत क्रोधी या चिड़चिड़ा होता है। वे अपने ग्राहकोसे बात बातमे झगड़ बैठते है, लोगोको गालियाँ दे बैठते है, या उन्हे मार बैठते है। बहुतसे लोग आत्म-संयमके अभावके कारण अपनी वृद्धावस्था बहुत ही कष्टमय बना लेते है। वे अच्छी तरह जानते है कि छोटी छोटी बातोके कारण ही हमारा बहुत नुकसान होता है; परन्तु फिर भी वे अपनी जबान और अपने मिजाजको काबूमें नहीं रख सकते। जब जो मुँहमे आता, तब वही कह देते है और इस प्रकार दूसरोको अप्रसन्न कर देते है। वे न तो किसीके साथ रह सकते है और न किसीके साथ काम कर सकते है।

बहुतसे लोग क्रोध या क्षोभके समय बिलकुल राक्षसोकासा रूप धारण कर लेते हैं। ऐसे लोग जब क्रुद्ध होते है तब अपने सामने जो कुछ पाते हैं उठा उठा कर फेकने लगते है या जो सामने आता है उसीको मार बैठते है। यहाँ तक कि जो लोग उन्हे समझा बुझाकर शान्त करना चाहते है, उन्हें भी वे गालियाँ देने लगते हैं। ऐसे लोग छोटे छोटे बच्चो और पशुओं आदि तकको मारते मारते बेदम कर देते है। उनपर क्रोधका भूत ऐसा सवार रहता है कि उन्हे आगा पीछा या

अच्छा बुरा कुछ भी नही दिखाई देता। ऐसे लोग गुस्सा उतर जानेके बहुत देर बाद तक भी बिलकुल बेसुध और बेकामसे रहते है। उस समय वे न तो कुछ सोच सकते है, न कुछ समझ सकते है, न कुछ कह सकते है और न कुछ कर सकते है।

जब आदमीपर गुस्सेका भूत सवार होता है, तब वह कुछ समयके लिए बिलकुल पागलसा हो जाता है। वह अपने आपमे नहीं रह जाता और उसी भूतके वशमे हो जाता है। समझदार वही कहलायगा जो ठीक तरहसे सोच समझकर काम कर सकता हो। पर जो आदमी बिना अच्छा बुरा समझे बूझे कोई काम कर बैठता हो वह पागल नही तो और क्या कहा जायगा? ऐसी अवस्था बीत जानेके उपरान्त बहुतसे लोग प्रायः बहुत अधिक पश्चात्ताप भी करते है। पर उस समय पछतानेसे क्या होता है? पर तमाशा यह है कि फिर जब वैसा ही प्रसग आता है तब वह पश्चात्ताप उनके किसी काम नहीं आता और वे फिर ज्योके त्यो हो जाते है।

क्रोध, ईर्ष्या, घृणा आदिने मानव समाजका अब तक जो कुछ अपकार किया है, उसका ठीक ठीक चित्र किसी प्रकार नहीं खींचा जा सकता। लोग किसी जरासी बातके कारण किसीसे बहुत चिढ जाते है और बरसो उससे बदला लेनेकी चिन्तामे लगे रहते है। फिर जब उनको कोई उपयुक्त अवसर मिलता है तो वे अपने उस शत्रुकी जहाँ तक हो सकता है अधिकसे अधिक हानि करते है; यहाँ तक कि कभी कभी उसके प्राण भी ले लेते हैं।

बहुत दिनो तक अविश्रान्त शारीरिक श्रम करनेसे भी मनुष्यकी शारीरिक शक्तियोंका जितना अधिक क्षय या नाश नही होता उससे अधिक शक्तिका नाश एक बार बहुत ज्यादा गुस्सा आ जानेसे होता

है और जब वह गुस्सा उतर जाता है तब उस आदमीकी दशा कैसी शोचनीय, कैसी अनुतापदग्ध और कैसी अनुकम्पनीय हो जाती है! तेजसे तेज शराबकी बोतल भी हमारे शरीरकी उतनी अधिक हानि नहीं कर सकती जितनी अधिक हानि एक बारका आया हुआ गुस्सा करता है। यदि हम बरसों तक लगातार बहुत अधिक तमाखू या सिगरेट आदि पीते रहें तो भी हमारी उतनी अधिक शारीरिक हानि न होगी, जितनी ईर्ष्या और द्वेष आदिके कारण होती है। नित्य अफीम खानेसे भी उतनी अधिक हानि नहीं हो सकती जितनी चिढ़ने और कुढनेसे हुआ करती है। इस प्रकार हम आत्मसंयमके अभावमे अपनी आयुका अवश्य ही बहुत अधिक क्षय कर लेते है।

अमेरिकामें एक ऐसा परिवार था जिसके छोटे बड़े सब आदमी मिलकर लड़ने लग जाया करते थे और ऐसा लडते थे कि देखने सुन-नेवाले दंग रह जाते थे। वे सब आपसमे एक दूसरेको खूब नोचते खसोटते थे और कपड़े लत्ते फाड़ डालते थे। उनके चेहरे बिलकुल बदल जाते थे और वे पहचाने नहीं जाते थे। उन्हे देखनेसे ऐसा जान पड़ता था कि मानो बहुतसे शैतान आपसमे लड़ रहे है। भला इस प्रकारकी बातोंसे वैमनस्य, विरोध और शत्रुता बढनेके अतिरिक्त और क्या नतीजा निकल सकता है? ऐसे ही अवसरोपर लोग अपने परिवारके किसी आदमीकी हत्या तक कर सकते हैं। यह बात दूसरी है कि लड़ाई शुरू होनेसे दस मिनट पहले चाहे वे उनका बाल तक बाँका न होने देना चाहते हो। जो लोग बहुत अच्छे और सज्जन होते है वे भी मारे क्रोधके इतने अन्धे हो जाते है कि उन्हे भला बुरा कुछ भी दिखाई नहीं देता। कभी कभी तो ऐसा होता है कि क्रोध आदि भीषण मनोविकार उत्पन्न होनेपर लोग बेहोश हो जाते है और दूसरोंकी

हानि करनेसे वहुत पहले स्वयं अपनी ही हानि कर वैठते हैं। कभी कभी हम क्रोध, घृणा, ईर्ष्या आदि करनेके उपरान्त मन ही मन यह सोचकर लज्जित तो अवश्य होते हैं कि हमने वहुत अनुचित काम किया, ऐसा हमे नहीं करना चाहिए। परन्तु ऐसे व्यापारोसे हमारी जो शारीरिक और मानसिक हानियाँ होती हैं उनकी ओर कभी हमारा ध्यान ही नही जाता। हम यही समझते है कि क्रोध आता है और चला जाता है; परन्तु यह वात नही है। वह आते ही हमारे शारीरिक और मानसिक वलका वहुत भीपण रूपसे नाश करता है और जाते समय हमारे शरीरमे ऐसा विकट विप छोड़ जाता है जिसका परिहार जल्दी किसी प्रकार हो ही नहीं सकता। उस विपसे हमारी जो शारीरिक और मानसिक हानि होती है उसकी किसी प्रकार पूर्त्ति नहीं हो सकती।

जिस समय मनमे कोई ऐसा भीपण मनोविकार उत्पन्न होता है, जिसका हम दमन नहीं कर सकते, उस समय हमारे शारीरिक तत्त्वोमे कई प्रकारके रासायनिक परिवर्तन होते हैं और उन परिवर्तनोके कारण अनेक प्रकारके नाशक विप उत्पन्न होते है। पर हमारी शक्तियाँ तो सदा मौन रहती हैं, कुछ वोलना चालना तो जानती ही नहीं, इसलिए हमे यह पता ही नहीं चलता कि वे नाशक विप कितने भीषण रूपसे काम करते है। हम लोग वहुत दिनोसे वरावर यही समझते हुए चले आ रहे हैं कि हमे जितने रोग होते हैं वे सव किसी न किसी शारीरिक अव्यवस्थाके कारण होते हैं और उनका नाश केवल औपधो आदिसे होता है। परन्तु यह वात हम लोगोंकी समझमे किसी प्रकार आती ही नहीं कि हमारे रोगोका हमारी मानसिक अवस्थाओ और विकारोके साथ भी वहुत घनिष्ठ सम्वन्ध है। वल्कि यों कहना चाहिए कि वहुतसे रोग मानसिक विकारोके कारण ही उत्पन्न होते है। वड़े वड़े

वैज्ञानिकोने परीक्षा करके देखा है कि जब कोई भीषण मनोविकार उत्पन्न होता है तब रक्तमे एक प्रकारका विप उत्पन्न हो जाता है। भय, क्रोध, ईर्ष्या आदिके उपरान्त शरीर जो बहुत अधिक शिथिल हो जाता है उसका कारण यही विप होता है। वे मनोविकार तो सहजमें शान्त हो जाते हैं; पर अपने पीछे जो भीपण विप छोड़ जाते है उन्ही विषोके कारण हमारी वहुतसी शक्तियोका नाश हो जाता है और हमारे शरीरमें शैथिल्यका संचार हो जाता है।

जब जब हमारे मनमे क्रोध, ईर्ष्या, भय आदि मनोविकार उत्पन्न होते हैं, तब तब इसी प्रकार हमारी शक्तियोका नाश होता है और हमारे शरीरमे विपोंका सचार होता है। हमारी सब मानसिक तथा शारीरिक गतियाँ रुककर विपरीत दिशाकी ओर हो जाती है। हमारी प्रत्येक शक्ति उस मनोविकारका विरोध करती है; परन्तु हमपर जो भूत सवार होता है वह हमे कुछ सुनने समझने नहीं देता। यदि हम विचारकी दृष्टिसे देखें तो शीघ्र ही हमें पता चल जायगा कि भीपण मनोविकारोका हमारे शरीर तथा मनपर कितना नाशक प्रभाव होता है और उस दशामे हम फिर कभी क्रोध, ईर्ष्या द्वेप या घृणा आदि करनेका साहस भी न करेंगे। समाजमे अधिकांश लोग जो अस्वस्थ या अधिक दुर्वल दिखाई देते है सो इसका कारण यही है कि वे भीपण मनोविकारो आदिके कारण धीरे धीर अपने शरीरमे अनेक प्रकारके वहुत अधिक विप सचित कर लेते हैं जिनसे उनका स्वास्थ्य नष्ट हो जाता है। प्रत्यक्षमे उन्हे अपने अस्वस्थ होनेका कोई कारण नहीं दिखाई देता। वे सोचते है कि हम अच्छेसे अच्छा खाते है, अच्छा पहनते हैं, सुखसे जीवन व्यतीत करते है; परन्तु फिर समझमे नहीं आता कि हम इतने दुर्वल और अस्वस्थ क्यो रहते है। परन्तु उनकी दुर्वलता और अस्वस्थताका मुख्य कारण यही होता है कि

उनके मनमे प्रायः अनेक प्रकारके भीपण और दुष्ट मनोविकार उत्पन्न होते रहते हैं, जो उनके स्वास्थ्यमें वहुत अधिक वाधा पहुँचाते रहते हैं। हमें यह वात वहुत अच्छी तरह समझ रखनी चाहिए कि जव तक हम भीपण मनोविकारोंसे अपना पीछा न छुड़ावेगे और जव तक उनके परिणामस्वरूप अपने शरीरमें अनेक प्रकारके विप उत्पन्न करना न छोड़ेगे, तव तक हम संसारके और सव प्रकारके उपाय करके भी कभी स्वस्थ तथा सवल नहीं हो सकते। स्वास्थ्य और सवलताका मूलमन्त्र यही है कि मनुष्य सदा प्रसन्न रहा करे और किसी प्रकारकी घटनाओसे कभी क्षुव्ध न हो और अपने मनकी शान्ति कभी नष्ट न होने दे।

हमारे शारीरिक तथा मानसिक अंगोंकी रचना ही ऐसे ढंगसे की गई है कि उनका ठीक ठीक काम वहुत शान्तिकी अवस्थामें ही चल सकता है। जिस कलको वार वार झटका दिया जायगा, वार वार वुरी तरहसे हिलाया डुलाया जायगा, वार वार ठोका पीटा जायगा, वह कभी ठीक तरहसे पूरा पूरा काम नहीं कर सकेगी। पूरा और ठीक काम तभी होगा जव उसे वहुत ही शान्तिपूर्वक चुपचाप चलने दिया जाय और अनावश्यक रूपसे कभी छेड़ा न जाय। यही वात हमारे शारीरिक तथा मानसिक अंगोंकी है। वे तभी ठीक तरहसे और पूरा पूरा काम कर सकेगे जव हम कभी उनकी शान्तिभंग न करेगे और उन्हें चुपचाप अपना काम करने देंगे। पर यदि हम उन्हे वार वार तंग किया करेगे, हर दम उन्हे छेड़ते रहेगे और क्षुव्ध करते रहेगे, तव वे कभी अपना काम ठीक तरहसे नहीं कर सकेंगे। उस दशामे हमारे शरीर और मस्तिष्कके सव कल-पुरजे विगड़ जायँगे। हमे पता भी न लगेगा कि हमारा शरीर ठीक तरहसे क्यो नहीं संचालित हो रहा है और न हम उनकी किसी प्रकार मरम्मत ही कर सकेंगे। हाँ, हम

उनकी त्रुटियो और दोषोसे सदा चिन्तित अवश्य रहेगे और वह चिन्ता हमारे स्वास्थ्यमें और भी अधिक बाधक होगी।

जो व्यक्ति अपने मनको वशमें न रख सकता हो समझ लेना चाहिए कि उसकी शिक्षा बहुत ही त्रुटिपूर्ण हुई है। ऐसा व्यक्ति यही प्रमाणित करता है कि अपने जीवनमें वह बहुत ही थोड़े समयतक मनुष्य रहता है और शेप समयमे उसकी दशा पशुओ बल्कि राक्षसोकीसी हो जाती है। उसका वही पशुभाव या राक्षसीभाव समय समयपर विकट रूप धारण कर लेता है 'जिसपर वह व्यक्ति किसी प्रकार अपना अधिकार नहीं दिखला सकता। वह स्वयं उस पशु या राक्षसके अधिकारमे चला जाता है और सब काम उसीके कहनेके अनुसार करने लगता है। वही पशु या राक्षस उसके मानसिक राज्यमे भीपण विद्रोह उत्पन्न कर देता है और जो चाहता है वही करने लग जाता है। स्वयं वह मनुष्य इतना अधिक दुर्बल होता है कि उसे अपने वशमे नही रख सकता और पशुभावको मनमाने तौरपर खुलके खेलने देता है। इसीको आत्म-संयमका अभाव कहते हैं।

परमात्माने प्रत्येक व्यक्तिमे एक ऐसी प्रबल और परम शुद्ध शक्ति स्थापित कर रक्खी है कि यदि वह चाहे तो दुष्टसे दुष्ट मनोविकारपर बहुत ही सहजमे विजय प्राप्त कर सकता है और उसे दबा सकता है। परन्तु इसके लिए सबसे पहले उसे उस शक्तिसे परिचित होनेकी आवश्यकता होती है और उससे काम लेना सीखना पड़ता है। जब एक बार मनुष्यको अपनी उस शक्तिका ज्ञान हो जाता है और वह उससे काम लेना सीख लेता है, तब कभी किसी परिस्थितिमें वह आपेसे बाहर नहीं हो सकता। उसके मनमे कभी किसी प्रकारका क्षोभ उत्पन्न नहीं

होगा और वह सदा शान्त, स्वस्थ तथा सन्तुष्ट रहेगा। उस दशामे वह कभी किसी दोष या कुप्रवृत्ति आदिका दास न बन सकेगा।

हममे जो गुण अथवा शक्ति न हो उस गुण या शक्तिको प्राप्त करनेके लिए हमे सबसे पहले यह कल्पना कर लेनी चाहिए कि वह गुण या शक्ति हममे मौजूद है। यह कल्पना करनेके उपरान्त हमें अपने जीवनका प्रत्येक व्यवहार ऐसा ही रखना चाहिए कि मानो वह गुण या शक्ति हममे बहुत पहलेसे वर्तमान है। कुछ दिनोतक इसी प्रकारका आचरण करते रहनेसे परिणाम यह होगा कि वह गुण या शक्ति आपसे आप हममे आ जायगी और फिर हमे कभी 'उसके अभा-वका ध्यान भी न होगा। हमे अपने सामने सदा अपनी पूर्णताका आदर्श रखना चाहिए और यही समझना चाहिए कि हममे सब प्रकारके गुण वर्तमान है और किसी प्रकारका दोष हमपर कभी अधिकार नहीं कर सकता। हम जिस चीज तक पहुँचना चाहते हो या जो बात प्राप्त करना चाहते हो उसे अपनी सारी शक्तिसे अपनी ओर खींचकर इतना झुकाना चाहिए कि वह आपसे आप आकर हमारे पास तक पहुँच जाय। हम उसे अपनी ओर झुकानेके लिए जितना ही अधिक प्रयत्न करेंगे उतनी ही अधिक मात्रामे हम उसे प्राप्त कर सकेंगे।

यदि हम जरा जरा सी बातपर बहुत नाराज हो जाया करते हों, सबसे लड़ बैठते हो, लोगोको मार बैठते हो अथवा इसी प्रकारका और कोई अनुचित कृत्य कर डाला करते हो तो हमे अपनी इस दुर्बलताका रोना कभी रोना नहीं चाहिए और न लोगोसे यह कहते फिरना चाहिए कि भाई हम क्या करें हम बिलकुल लाचार है जब हमपर गुस्सा सवार होता है तब हम आपेमे नही रह जाते; बिलकुल बेबस हो जाते है। बल्कि हमें ऐसा भाव धारण करना चाहिए कि हम बहुतही धीर

गम्भीर और शान्त आदमी है और हमारी शान्ति कभी किसी प्रकार भंग की ही नही जा सकती। उस समय हमे अपने मनमे सदा यही समझते रहना चाहिए कि हमारा मिजाज विलकुल गुस्सेवर नहीं है, हम सदा अपने आपको वशमें रख सकते है और कोई वात या घटना हमे क्षुव्ध नही कर सकती; हम कभी किसी वातसे नाराज नहीं होते न कभी चिढते है। अपने मनमे सदा इस प्रकारके विचार रखनेका परिणाम यह होगा कि हम वहुत थोड़े समयमे वहुत शान्त, धीर और गम्भीर हो जाँयगे और तव किसी प्रकारकी उत्तेजना हमे क्षुव्ध न कर सकेगी।

जिन लोगोंमें झूठा अभिमान या स्वार्थपरता होती है वे अपेक्षाकृत अधिक शीघ्र नाराज हो जाते है या चिड़चिड़ा उठते हैं। परन्तु जिन लोगोमें ये सव वाते नहीं होती वे जल्दी क्रोधके वशमे नहीं होते। जिस मनुष्यमे सचमुच मनुष्यता होगी वह न तो कभी झूठा अभिमान ही करेगा, न स्वार्थी ही होगा और न वातवातपर नाराज ही होगा। मनुष्यत्वके अभावमे ही ये सव वाते होती है। इसलिए प्रत्येक व्यक्तिको वास्तविक अर्थमे मनुष्य वननेका प्रयत्न करना चाहिए।

हम यह वात अच्छी तरह जानते है कि जव आदमीका मिजाज गरम हो जाता है तव भीपण मनोविकारोको वशमे रखना वहुत ही कठिन होता है, परन्तु साथ ही हम यह वात भी अच्छी तरह जानते हैं कि उन मनोविकारोंके वशमें होना और आपेसे वाहर हो जाना कितना अधिक हानिकारक और दुष्परिणाम उत्पन्न करनेवाला होता है। इससे आदमीकी अनेक शक्तियोका तो वृथा नाश होता ही है, पर साथ ही वह लोगोंकी दृष्टिमें वहुत हास्यास्पद और निन्दनीय भी हो जाता है। जो व्यक्ति अपने मनको अपने वशमे नहीं रख सकता,

वह मानो यह सिद्ध करता है कि वह अपनी वृत्तियोका, स्वामी नहीं बल्कि, दास है।

क्षण भरके लिए भी, विचारशीलताके सिंहासनसे च्युत होना और पाशविक वृत्तियो तथा भावोके वशमे हो जाना मनुष्यके लिए बहुत अधिक भयानक तथा घातक होता है; क्योकि देखा गया है कि बहुत-से लोग अपने पशुभावको बढ़ाते बढाते पागलपन तककी सीमाको पहुँच गए है। कमसे कम मनुष्यपदसे तो वे अवश्य ही गिर जाते हैं; और मनुष्यत्वसे गिरना भी एक प्रकारका पागलपन ही है। किसीको गालियाँ देना, किसीको मार बैठना, किसीको उठाकर पटक देना आदि पागलोके ही काम है। समझदारीकी हालतमे कभी कोई ऐसे काम नहीं करता। क्रोध करना पागलपन तो अवश्य है, फिर चाहे वह स्थायी पागलपन न होकर अस्थायी ही क्यो न हो। इसी अस्थायी पागलपनकी झोंकमे लोग अपने अच्छे अच्छे मित्रोसे सदाके लिए बिगाड़ कर बैठते है और अपने प्रिय सम्बन्धियो तकको खो देते है। छोटे छोटे बच्चे अपने अनुभवसे सीख लेते है कि आगको छूनेसे हाथ जलता है और तेज चाकूको छूनेसे उँगली कट जाती है; पर कैसे आश्चर्यकी बात है कि हम लोग बड़े सयाने और समझदार होकर भी और बराबर अनुभव करते रहनेपर भी यह बात नही सीखते कि स्वभावकी दुष्टतासे कितनी अधिक हानियाँ होती हैं।

जो व्यक्ति विचारशील होता है और अपने मनको वशमे रखना जानता है वह यह बात अच्छी तरह जानता है कि अपने मानसिक शत्रुओसे अपनी रक्षा किस प्रकार की जाती है। जब कभी क्रोध करनेका या इसी प्रकारका और कोई अवसर आता है तब वह कोई ऐसा काम नहीं करता जिससे वह क्रोध और भी बढे; बल्कि शान्तिपूर्वक ऐसा

उपाय करता है जिससे वह क्रोध शान्त हो और जलती हुई आग ठंडी हो जाय। जो भाव मनमें उठनेको हों, यदि उसके विरोधी भावको मनमें स्थान दिया जायगा तो वह पहला भाव आपसे आप और बहुत शीघ्र दब जायगा। जब कभी कहीं आग लगती है तब उसे बुझानेके लिए कोई मिट्टीका तेल लेकर नहीं दौड़ता, बल्कि पानी लेकर दौडता है। इसी प्रकार जब मिजाज गरम हो तब ऐसा काम नहीं करना चाहिए जिससे वह गरमी और भी बढ़े, बल्कि ऐसा काम करना चाहिए जिससे शान्ति आवे। प्रायः ऐसा होता है कि जब कभी किसी लड़केका मिजाज गरम होता है, वह किसी बातपर बिगड़ता, चिढता या जिद करता है तब उसे दबानेके लिए लोग शान्त नहीं करते बल्कि खुद भी बिगड़ने और चिढने लग जाते है। इस प्रकार वे मानो आगको आगसे बुझाना चाहते हैं; साथ ही वे लड़केका मिजाज और भी बिगाड़ देते है। उचित यह है कि लड़केको शान्त होनेका उपदेश दिया जाय और उसकी वृत्तियोंको ठीक मार्गपर लगाया जाय। परन्तु ऐसा न करके बहुत लोग अपने मिजाजकी तेजी दिखाकर उसका मिजाज और भी बिगाड देते हैं और उसे बिगडना तथा नाराज होना ही सिखलाते है। इस प्रकारकी बातोंका बालकोंपर बहुत ही बुरा प्रभाव पडता है और उनका स्वभाव आरम्भसे ही बहुत खराब हो जाता है जिसे बादमे सुधारना बहुत ही मुश्किल हो जाता है।

जब हम किसीको कीचड या दलदलमें फँसा हुआ देखते है तब उसे बाहर निकालनेका प्रयत्न करते हैं, न कि स्वयं भी जाकर उसी कीचड़मे फँस जाते हैं। परन्तु जब हम किसीको क्रुद्ध देखते हैं तब स्वयं भी क्रोध करने लग जाते हैं। ऐसे अवसरपर स्वयं कभी क्रोध नही करना चाहिए, बल्कि ऐसी बातें करनी चाहिए जिनसे दूसरेका क्रोध शान्त हो।

यदि कोई विकट अवसर आने पर स्वयं भी क्रोध करनेके वदले दूसरेका क्रोध किसी प्रकार शान्त कर दिया जाय और तव वादमे उसे समझाया बुझाया जाय तो वह एक प्रकारसे अनुगृहीत होता है और आगेके लिए वहुत कुछ सँभलनेका प्रयत्न करता है। परन्तु यदि स्वयं भी उसके साथ क्रोध किया जाय तो उसका स्वभाव भी विगड़ता है और अपना स्वभाव भी बिगड़ता है। हम मानो अपने आपको भी खराव करते हैं और औरोको भी खराव करते है।

आचार-व्यवहारमें सवसे अधिक आवश्यकता इस वातकी है कि मनुष्य अपने विचारो, भावो और वृत्तियो आदिको वशमे रक्खे। यदि वह ऐसा नहीं कर सकता है तो फिर वह किसी कामका आदमी नहीं है। परन्तु यदि वह अपने मिजाजको कावूमे रखना जानता है तो वह वहुत वड़ा बलवान् होता है और दूसरोका विगड़ा हुआ मिजाज वहुत जल्दी ठिकाने ला सकता है। कल्पना कीजिए कि कोई आदमी वहुत अधिक क्रोधकी दशामे आपके सामने आता है और ऐसी वाते करता है जिनसे आप वहुत उत्तेजित हों। परन्तु आप किसी प्रकार उत्तेजित नहीं होते और बहुत ही शान्त भावसे उसके सामने खड़े रहते है। अपनी इस धीरता और गम्भीरताका विचार करके स्वयं आपमे भी वहुत अधिक बल आता है और आपके सामने क्रोध करनेवालेको भी वहुत बडी शिक्षा मिलती है। अपने विचारोंपर प्रभुत्व प्राप्त करनेका यही दोहरा शुभ परिणाम होता है। अतः क्यो न आप भी प्रयत्न करे और क्यो न अपने विचारो तथा भावों आदिको अपने वशमे रखना सीखे। इससे आपके चरित्रमें इतना अधिक बल आवेगा जितना और किसी प्रकार आ ही नहीं सकता।

१७--प्रसन्नता ।

यदि ससारके सब लोगोको यह बात अच्छी तरह मालूम हो जाय कि सदा हँसने और प्रसन्न रहनेका हमारे स्वास्थ्यपर कितना अच्छा प्रभाव पड़ता है तो फिर आधेसे अधिक डाक्टरो वैद्यो और हकीमो आदिके लिए मक्खियाँ मारनेके सिवा और कोई काम ही न रह जाय। हास्य वास्तवमे प्रकृतिकी सबसे बड़ी पुष्टाई है। हास्यसे बढकर बलवर्धक और उत्साहवर्धक और कोई चीज हो ही नहीं सकती। इससे हमारी त्रस्त तथा अस्वस्थ मनोवृत्ति शान्त और प्रसन्न होती है और रूखे तथा कंटकाकीर्ण व्यवहार मार्गकी भीषणता बहुत कुछ कम हो जाती है । हास्यसे ही हमारे शरीरमे नए जीवन और नए बलका संचार होता है और हमारे आरोग्यकी वृद्धि होती है ।

कैलिफोर्नियामे एक स्त्री थी जो बहुत दिनों तक खिन्न और चिन्तित रहनेके कारण उन्निद्र आदि कई रोगोसे पीड़ित हो गई थी । जीवन उसे एक भारसा जान पड़ने लगा था। अन्तमे उसने निश्चित किया कि चाहे हँसनेका कोई अवसर आवे चाहे न आवे, पर मै नित्य दिनमे तीन बार अवश्य खूब खिलखिलाकर और पेटभरके हँसा करूँगी। तद-नुसार उसने बात बातपर हँसना आरम्भ किया । यदि कभी हँसनेका कोई अवसर नहीं आता था तो वह अपने कमरेमे चली जाती थी और वहाँ एकान्तमें खूब अच्छी तरह हँसा करती थी। इसका परिणाम यह हुआ कि उसका स्वास्थ्य बहुत शीघ्र सुधर गया और उसके सब रोग आपसे आप बिना किसी दूसरी चिकित्साके जाते रहे ।

जीवन-पथमे प्रायः अनेक ऐसे ऊबड़ खाबड़ स्थान मिलते है जिनमें लोगोंको ठोकरे, धक्के और झटके लगते है। जो लोग हँसना और प्रसन्न रहना नही जानते वे उन ठोकरो और झटको आदिसे वहुत कष्ट पाते है। परन्तु सदा प्रसन्न रहनेवाले लोगोके लिए ऐसे अवसरपर आनन्द और हास्य मानो मुलायम गद्दोका काम देते है और वे उन ठोकरो और धक्को आदिको कुछ भी अनुभव नहीं करते। ऐसे लोगोकी जीवन-यात्रा वहुत ही सुगम और सुखपूर्ण हुआ करती है। जव हम किसी अप्रिय घटना आदिके कारण अस्वाभाविक परिस्थितिमे पहुँच जाते हैं, तब हास्य और आनन्द हमे फिर तुरन्त अपनी स्वाभाविक परिस्थितिमे ले आता है। जीवनमे जितने क्षत आदि होते है उन सवके लिए हास्य वढिया मरहमका काम देता है। इससे हमारा स्वास्थ्य भी सुधरता हैं और आयु भी वढती है। जो लोग सदा प्रसन्न रहते और हँसी खुशीमे अपना समय विताते है वे उन लोगोकी अपेक्षा कही अधिक दीर्घजीवी होते है, जो दिन रात रोनी सूरत वनाए रहते है, सदा चिन्तित और दुःखी रहते है और कभी प्रसन्न होना जानते ही नही।

अस्वाभाविक अवस्थामेसे स्वाभाविक अवस्थामे आनेके लिए खूव जी खोलकर हँसनेकी अवश्यकता होती है। हास्य एक प्रकारका ऐसा व्यायाम है जिससे हमारी समस्त मनोवृत्तियोको एक नया वल प्राप्त होता है और हमारी सारी थकावट, सारी शिथिलता दूर हो जाती हैं।

स्पार्टाके भोजनालयमे वहाँके सुप्रसिद्ध नेता लाइकरगसने हास्य देव-ताकी एक मूर्त्ति स्थापित कर रक्खी थी, क्योकि उसका मत था कि [illegible] हमारी पाचनशक्तिको वढानेका जितना अधिक गुण है उतना [illegible] किसी पदार्थमे नहीं है।

आजकलका सभ्य जीवन और सांसारिक परिस्थिति कुछ ऐसी हो रही है कि लोगोको हॅसनेका बहुत ही कम अवसर मिलता है। सबसे पहले तो अधिक हँसना और वह भी सार्वजनिक समाजमे हँसना ही असभ्यताका चिह्न समझा जाता है, दूसरे आजकल जीवन-निर्वाहकी समस्या इतनी कठिन हो रही है कि लोग दिन रात उसीके कारण चिन्तित रहते है और हँसनेका उन्हे अवसर ही नहीं मिलता। युवावस्थाका आरम्भ होते ही हँसीका मानो अन्त हो जाता है। आजकलके नवयुवक पढने लिखने और किताबे रटनेमे ही इतने अधिक व्यस्त रहते है कि उन्हे हॅसनेकी छुट्टी ही नहीं मिलती। जब पढ लिखकर तैयार होते है और संसारमे प्रवेश करते है तब जीविकाके निर्वाहकी चिन्ता इतनी बलवती होती है कि हँसनेकी ओर उनका ध्यान ही नही जाता। इसी लिए कहना पड़ता है कि आजकलके लोग हँसना भूलतेसे जा रहे हैं। यदि उनके सामने कभी कोई विशेष प्रसन्नताकी बात हुई भी तो वे जरासा मुस्कराकर ही रह जाते है। शरीरके सब अंगोको हिला देनेवाला अट्टहास तो वे जानते ही नहीं और यदि जानते भी हों तो वैसी हँसी हँसनेकी गिनती असभ्यतामे की जाती है। लोगोको दिन रात काम धन्धे और धन कमानेकी चिन्ता लगी रहती है और हँसीमें गँवानेके लिए उनके पास समय ही नहीं होता। वे जानते ही नही कि बहुत अधिक सोचने आदिके कारण दिमागमे जो उलझने और गॉठे पड़ जाती है, उन्हें सुलझाने और दूर करनेके लिए हास्यसे बढ़कर और कोई उपाय है ही नहीं। दिन रातकी चिन्ताके कारण शरीर और मस्तिष्कमें जो शिथिलता आ जाती है उसे दूर करनेका हास्यसे बढकर और कोई उपाय है ही नही। यदि जीवन वास्तविक दृष्टिसे कभी जीवन हो सकता है तो हँसी खुशीसे ही हो सकता है। दुःखी और खिन्न रहना तो मृत्युका चिह्न है।

जो लोग खिलखिलाकर और खूब हँसना बिलकुल भूल गए हों उन्हें उचित है कि वे किसी कमरेमे जाकर अन्दरसे किवाड़ा बन्द कर लिया करे और वहाँ खूब मजेमे जी खोलकर कुछ देर तक हँसा करे। उस कमरेकी तसबीरे देखकर हँसा करे, मेज कुरसी आदि देखकर हँसा करे, शीशा देखकर हँसा करे और हर एक चीजको देखकर हँसा करे। हँसनेसे उनका बन्द बन्द खुल जायगा, सारे शरीरकी थकावट उतर जायगी और वे बिलकुल हलके और ताजे हो जायँगे। उन्हे अपने शरीरमे नए बल और नए जीवनका संचार होता हुआ जान पड़ेगा।

लिंकन सदा अपने टेबुलपर हास्य विनोदकी एक न एक पुस्तक रक्खा करता था। जब कभी वह काम करते करते कुछ थक जाता था, कुछ खिन्न हो जाता था अथवा उसे जी घँसता हुआ जान पड़ता था, तब वह उसी पुस्तकको उठाकर उसके कुछ प्रकरण या पृष्ठ पढ जाता था। इससे उसकी सारी शिथिलता और सारा खेद दूर हो जाता था और वह बड़े आनन्दसे फिर अपने काममे लग जाता था।

हास्य, चाहे किसी प्रकारका हो, सदा बहुत अधिक लाभदायक हुआ करता है। उंसे ईश्वरकी सबसे बड़ी देन समझना चाहिए। उससे हमे अनेक प्रकारके लाभ होते हैं। हमारा स्वास्थ्य सुधरता है, हमारी मनोवृत्तियाँ शुद्ध होती हैं और हमारे प्रयत्नोमे उससे सफलता होती है। बहुतसे लोग केवल इसी लिए सफलता नही प्राप्त कर सकते कि वे हँसी खुशीमे अपना जीवन नहीं बिता सकते और सदा दुःखी तथा खिन्न रहते हैं। वे अपने आसपासका वातावरण बिलकुल विषाक्त कर लेते हैं और अपनी शक्तियोका बुरी तरहसे नाश कर लेते है और इसी ८९ वे सफल नही हो सकते। यदि वे किसी प्रकार हँसने और प्रसन्न

रहनेका अभ्यास डाल सके तो वे अपनी परिस्थितिमें फिर सुधार कर सकते हैं और फिर जीवनमे अच्छी सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

डा० सैंडर्सनका मत है कि बलवर्धक औषधोसे हमारे शरीरको जो बल प्राप्त होता है वह कृत्रिम होता है और पीछेसे उससे कई प्रकारकी हानियाँ और दोष भी उत्पन्न होते है। परन्तु आनन्दपूर्ण वृत्तिमे स्वाभाविक बलवर्धक गुण तो है ही, साथ ही पीछेसे उससे किसी प्रकारका अपकार या हानि नहीं होती। आनन्दपूर्ण वृत्तिका शुभ परिणाम शरीरके प्रत्येक अवयवपर पड़ता है। इससे आँखोमे चमक आती है, मुखपर कान्ति आती है, चालमे कोमलता आती है और हमारे शरीरमे जीवनका आधार जितनी सूक्ष्म शक्तियाँ है उन सबका बहुत अच्छा पोषण और वृद्धि होती है। इसके कारण शरीरमे रक्तका बहुत स्वतन्त्रतापूर्वक संचार होता है, स्वास्थ्यकी वृद्धि होती है और रोगका नाश होता है।

ससारमे कोई ऐसी औपध नही है जो उपयोगितामे आनन्दपूर्ण वृत्तिका मुकाबला कर सके। जो व्यक्ति सदा प्रसन्न रहता हो और खूब हँसता हो वह हजार दवाओकी एक दवा है। बहुतसे लोग केवल इसी लिए वेदम और अधमरेसे रहते है कि वे अपनी वृत्ति आनन्दपूर्ण नही रख सकते। हमारे जीवन और स्वास्थ्यके लिए जितनी अधिक उपयोगी आनन्दपूर्ण वृत्ति होती है, उतनी अधिक उययोगी और कोई चीज नही होती। जिन खेल तमाशो आदिमे हँसीका बहुत ज्यादा मसाला होता है उनमे दर्शकोकी संख्या भी अपेक्षाकृत बहुत अधिक होती है। इससे सिद्ध होता है कि मनुष्योको अपना जीवन धारण करनेके लिए हास्यकी बहुत अधिक आवश्यकता है। जब हम कोई ऐसा खेल तमाशा देखकर आते है जिसमे बहुत अधिक हँसी होती है तब हमारी शारीरिक तथा मानसिक अवस्थामे कितना अधिक परिवर्तन

हुआ रहता है। जिस समय हम वह खेल देखनेके लिए जाते है उस समय बिलकुल थके हुए होते है और हममे किसी प्रकारका उत्साह नहीं होता; परन्तु जब हम वह हास्यपूर्ण खेल देखकर घर लौटने लगते हैं उस समय मानो हममे एक नया जीवन आ जाता है। हमारे मनमे उत्साह और प्रफुल्लता भरी रहती है और शरीरमें बहुत अधिक बल जान पड़ता है। इसकी परीक्षा आप सहजमे ही कर सकते हैं। दिनभर कठिन परिश्रम करनेके उपरान्त जब आप थके मँादे घरपर आते है तब आपके शरीरमे दम नहीं रहता। पर जहाँ आपने लड़के बच्चोके साथ कुछ देरतक हँस हँसकर बाते कीं, या मित्रमडलीमें बैठकर थोड़ा हँसी मजाक किया, वहाँ आपकी सारी थकावट दूर हो जाती है और आप फिर तरो ताजा हो जाते है। थोड़ी देर तक खूब अच्छी तरह हँसनेसे उतनी ही शिथिलता दूर होती है जितनी रातभर खूब अच्छी तरह सोनेसे होती है। इसलिए प्रत्येक व्यक्तिको अपने जीवनके नित्यक्रममे हॅसी मजाकको भी पूरा स्थान देना चाहिए। मान लिया कि हमको जीविकानिर्वाह करनेके लिए दिन रात कठिन परिश्रम करना पडता है; परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि हम दिन रात मुहर्रमी सूरत बनाए बैठे रहा करें और कभी अपना चित्त प्रसन्न ही न करे।

आनन्दपूर्ण वृत्तिमे हमारे स्वास्थ्यको सुधारनेकी जो शक्ति है वह तो है ही, पर साथ ही उसमे हमारे नैतिक आचरणको सुधारनेकी भी बहुत बड़ी शक्ति है। सुन्दर और निर्दोष परिहाससे आज तक कभी किसीका चरित्र नही बिगड़ा, हाँ सुधर हजारो लाखो आदमियोका गया है। परिहास भी मनुष्यके लिए उतना ही आवश्यक है जितना भोजन। एक बड़े फ्रान्सीसी चिकित्सकका मत है कि हमे बच्चोको बहुत ही छोटी अवस्थासे सदा प्रसन्न रहनेकी आदत डालनी चाहिए। वह कहता है

कि अपने बच्चोको सदा प्रसन्न रहने और जोर जोरसे हँसनेके लिए प्रोत्साहित करते रहो। खूब अच्छी तरह और जोरसे हँसनेसे सीना फैलता है और रक्तका खूब अच्छी तरह संचार होता है। कभी कभी और जरासा मुस्कराकर ही न रह जाना चाहिए वल्कि खूब जोरसे और ऐसी हँसी हँसनी चाहिए जिससे सारा मकान गूँज उठे।

हम लोग ऐसी वाते सीखनेकी ओर तो वहुत ध्यान देते है जो हमारे रोजगारमे काम आती है, पर ऐसी वातोकी ओर वहुत काम ध्यान देते है जिनसे हमारा स्वास्थ्य सुधरता है और हमारे स्वास्थ्यको सुधारनेवाली चीजोमे परिहासका वहुत ऊँचा स्थान है। यदि वास्तविक दृष्टिसे देखा जाय तो वालकोको लिखना पढ़ना सिखानेकी अपेक्षा भी कही अधिक आवश्यकता इस वातकी है कि उन्हे सदा प्रसन्न रहनेकी शिक्षा दी जाय और वृत्तिको आनन्दपूर्ण वनाना सिखलाया जाय। यह तो जीवनकी सवसे पहली और वहुत वड़ी आवश्यकता समझी जानी चाहिए। आनन्दपूर्ण वृत्तियोको सदा और जहाँतक अधिक हो सके वढ़ानेका प्रयत्न किया जाना चाहिए।

वालकोंके प्रति हमारा सवसे पहला कर्तव्य यह है कि हम उनकी स्वाभाविक प्रसन्नताका पूरा पूरा विकास होने दे और उन्हे सदा खूव जी खोलकर अच्छी तरह हँसने दें। वल्कि समय समयपर हम स्वयं ही ऐसे अवसर उपस्थित करे कि वे भी खूव हँसे और हम भी उनके साथ साथ हँसे। वहुतसे लोग लड़कोको जोर जोरसे हँसनेके लिए मना किया करते हैं और ज्यादा हँसनेपर उन्हे डाँटते डपटते रहते है। यह वहुत ही वुरी वात है। वालक स्वभावतः हँसना और प्रसन्न रहना चाहते है। उन्हे हँसनेसे रोकना मानो उनके शारीरिक, मानसिक और नैतिक विकासमे वाधा डालना है। यदि हम किसी वालकको लगातार

कुछ समयतक हँसनेसे रोकते रहे तो उसके हृदयसे आनन्द विलकुल निकल जायगा और तब उसके लिए इसका परिणाम वहुत ही घातक होगा । वहुतसी माताएँ अपने वालकोको हँसने और शोर करनेसे रोकती है और इस प्रकार वे उनकी स्वाभाविकता नष्ट कर देती है । वे बालकोको छोटी अवस्थामे ही वयस्को और वृद्धोका सा आचरण करनेके लिए वाध्य करती है । परन्तु वे अपने अज्ञानके कारण वालकोकी बहुत वड़ी और ऐसी हानि करती है जिसकी पूर्ति कभी और किसी प्रकार नहीं हो सकती ।

एक प्रसिद्ध लेखकका मत है कि जिन वालकोंकी वृत्ति आनन्दपूर्ण नहीं होती, वे वड़े होने पर कुछ भी नहीं होते । जिन वृक्षोमे कलिया नहीं होतीं उनमे कभी फल भी नहीं लग सकते ।

बालक स्वभावसे ही सदा प्रसन्न रहना और हँसना चाहते हैं और यदि घरमें उनकी यह आकांक्षा पूरी न हो तो फिर उनका घरमे रहना कठिन हो जाता है । उन्हे जव अवसर मिलता है तब वे हँसने और प्रसन्नता प्राप्त करनेके लिए बाहर निकल जाते हैं । वहुत से वयस्क आदमी भी सन्ध्या या रातके समय आनन्द प्राप्त करनेके लिए घरसे वाहर निकल जाते है । जब कभी किसी बालक या वयस्कको आनन्द प्राप्तिके लिए घरसे बाहर निकलते हुए देखो तो समझ लो कि घरमे उसके लिए आनन्दकी यथेष्ट सामग्री प्राप्त नहीं हो सकती । जिस घरमे आनन्दकी यथेष्ट सामग्री उपस्थित रहती है, वह घर न तो वालक छोड़-कर जाना चाहते है और न वयस्क ही वहाँसे टलना चाहते है । जहाँ जिसे आनन्द मिलेगा वह वहीं रहेगा । इसलिए प्रत्येक घर आनन्दका इतना बडा केन्द्र होना चाहिए कि न तो बच्चे ही उसे छोड़कर कहीं जाना चाहे और न वयस्क ही ।

हमारे लिए भी और हमारे बाल-बच्चोंके लिए भी हँसीसे बढ़कर अच्छी और सस्ती और कोई दवा ही नहीं हो सकती। यह दवा सबको बहुत बड़ी बड़ी मात्राओंमें दी जानी चाहिए। इससे वह खर्च तो बच ही जायगा जो बार बार डाक्टरोंको बुलाने और दवाएँ आदि खरीदनेमे पड़ता है; साथ ही उनके आचार विचारमे भी बहुत अधिक पवित्रता आ जायगी। उस समय न तो देशमे इतने जेलखानोकी ही आवश्यकता रह जायगी, न इतने पागलखानोंकी, न इतने अस्पतालों और न इतने खैरातखानोंकी ही आवश्यकता रह जायगी।

बालकोंके लिए प्रसन्नता और आनन्दकी उतनी ही अधिक आवश्यकता होती है जितनी नए पौधोंके लिए अच्छी और उपजाऊ जमीनकी। यदि आरम्भिक परिस्थितियाँ उपयुक्त और अनुकूल न हो, तो पौधे या तो बिलकुल ही सूख जाते हैं और या उनमे ऐसे दोप आ जाते है जो बादमे उनके बड़े वृक्ष होनेपर किसी प्रकार दूर नहीं किए जा सकते। पौधोंकी रक्षा और वृद्धि आदिके सम्बन्धमें जो कुछ करनेकी आवश्यकता होती है वह आरम्भमे ही होती है। आरम्भिक त्रुटियोंका सुधार बादमे नहीं हो सकता। ठीक यही बात बच्चोंके सम्बन्धमें भी है। यदि बाल्यावस्थामे ही उनकी शक्तियोका पूरा पूरा विकास न हो सका तो फिर बड़े होने पर वे कुछ भी नहीं हो सकते। सदा प्रसन्न रहनेसे सब शक्तियोका पूरा पूरा विकास होता है और उनको उन्नत करनेकी सम्भावनाएँ बहुत बढ़ जाती है। जिन बालकोंकी आनन्दपूर्ण वृत्तिका बाल्यावस्थामें ही नाश कर दिया जाता है, वही बड़े होनेपर मुरदोंकासा जीवन व्यतीत करते है। उनका समस्त सार और रस तो आरम्भमें नष्ट कर दिया जाता है। फिर उनके जीवनमें यदि जीवनकी वास्तविक झलक न दिखाई दे, तो इसमें आश्चर्यकी कौनसी बात है।

१८—दुःख—विस्मरण ।

संसारमें ऐसी बहुतसी अप्रिय बातें हुआ करती है, जिनका स्मरण मात्र करनेसे आदमीको बहुत दुःख हुआ करता है । उन बातोंका स्मरण आते ही मनुष्यको बहुत अधिक क्षोभ होता है, उसका चित्त चंचल हो उठता है और उसके मनका उत्साह और बल जाता रहता है । यदि सब लोग ऐसी बातोंकी स्मृति सदाके लिए बिलकुल भुला सकते होते, तो सबका बहुत अधिक कल्याण हो जाता । यदि हम अपने मनमे केवल वही सुन्दर विचार और प्रिय स्मृतियाँ रख सकते जिनसे हमें उत्साह और बल मिलता तो हम लोगोंके जीवनकी उपयोगिता और क्षमता कई गुनी अधिक हो जाती ।

कुछ लोग ऐसे हुआ करते ह जो दुर्भाग्यवश सदा अप्रिय बातें ही स्मरण रक्खा करते हैं । वे जब आपसे मिलेंगे तब एक न एक रोना रोते हुए ही मिलेंगे । या तो वे अपनी किसी ऐसी पुरानी बातका जिक्र करेंगे जिससे उनके साथ साथ आपका चित्त भी दुःखी हो और या किसी कल्पित भावी आपत्तिकी ही चर्चा करने लगेंगे जिससे आप भी कुछ चिन्तित और भयभीत हो जायँ । वे आपसे कहेंगे कि एक बार उनके साथ एक बहुत भीषण दुर्घटना हो गई थी, एक बार वे मरते मरते बचे थे, एक बार उनका बहुत बड़ा नुकसान हो गया था, एक बार वे बहुत ज्यादा बीमार पड़ गये थे, एक बार उनके बहुत प्रिय सम्बन्धीकी मृत्यु हो गई थी, आदि आदि । वे अच्छी बातों और प्रिय अनुभवोका तो कभी कोई जिक्र ही न करेंगे; जब जिक्र करेंगे तब

ऐसी ही वातोंका जिक्र करेंगे जिन्हे सुनकर आपको भी कुछ दुःख हो। और वे स्वयं तो परम दुःखी होकर वह वात कहेंगे ही। मतलब यह कि उन्हें सदा बुरी वातें ही याद रहेगी और अच्छी वातें इस प्रकार भूल जायँगे कि मानो कभी हुई ही नहीं थीं। और यदि कभी कोई अप्रिय वात हो गई होगी तो वह उनके किए विस्मृत हो ही न सकेगी।

परन्तु कुछ लोग ऐसे भी होते हे जिनका आचरण इसके ठीक विपरीत होता है। वे सदा प्रिय वातो और अच्छी घटनाओंका ही जिक्र करेंगे और अपने जीवनकी वही वाते आपको सुनावेगे जिनमे उनको सवसे अधिक आनन्द आया होगा और जिसे सुनकर आप भी वहुत प्रसन्न होंगे। यह वात नहीं है कि उन्हे कभी विपत्तियो या कष्टोका सामना करना ही न पड़ा हो। नहीं उनके जीवनमें भी अनेक दुर्घटनाएँ हुई होगी, उनकी भी अनेक वार हानियाँ हुई होगी, अनेक वार उन्हें दुःख या शोकसागरमें निमग्न होना पड़ा होगा। परन्तु उनकी वृत्ति ही इतनी शुभ और आनन्दपूर्ण होगी कि वे कभी उनका जिक्र करना पसन्द ही न करेंगे और जव कुछ कहेंगे तव अच्छी वातोंके सम्बन्धमे ही कहेगे। उनकी वातोसे आपको ऐसा जान पड़ेगा कि मानो उनके साथ कभी कोई दुर्घटना हुई ही नहीं, कभी उनपर कोई आपत्ति आई ही नहीं और कभी उन्हे दुःखी या चिन्तित होना ही नहीं पड़ा। आपको ऐसा जान पड़ेगा कि मानो संसारमें उनका कोई शत्रु है ही नही, जितने लोग हैं वे सव उनके मित्र है और उनपर पूर्ण कृपा रखते है। ऐसे ही लोग होते है जो औरोको अपनी ओर आकृष्ट करते हैं और जिनके साथ सव लोग प्रेम तथा मित्रता रखते है।

बात यह है कि जिसके मनमे सदा उदार, प्रेमपूर्ण और आनन्दमय विचारोकी स्थिति रहती है, वे ही दूसरोंसे अपने सम्बन्धकी अच्छी और प्रिय बातें कहा करते है। और जो लोग अपने मनमे संकीर्ण कठोर विचार रक्खेगें वे इतने पतित हो जाँयगे कि सदा स्वयं दुखी रहने और दूसरोको दुखी करनेके अतिरिक्त और कुछ कर ही न सकेगे।

कुछ लोगोके मन गूदड़वालोकी दूकानके समान हुआ करते है। उनमे कुछ चीजें तो अवश्य अच्छी और कीमती हुआ करती है, पर वे बहुतसे कूड़े कर्कटमे मिली हुई होती है। उनमे किसी प्रकारकी व्यवस्था या क्रम नहीं होता। उनमें अच्छी और बुरी सभी तरहकी बाते हुआ करती है। वे कभी कोई चीज निकालकर बाहर फेकना जानते ही नही। क्योकि उन्हे डर लगा रहता है कि कही कोई ऐसी चीज न फेक दी जाय जो कभी पीछे काम आनेके योग्य हो। इसी वृत्तिके कारण उनका मन गूदड़खानेकी तरह बिलकुल भरा हुआ होता है, उसमे अनेक प्रकारके विचारोके ढेर लगे रहते है। उन विचारोमेसे अधिकाश विचार बिलकुल रद्दी और बेकाम होते है; परन्तु फिर भी वे उनके मनमे रहते अवश्य है। यदि ऐसे लोग समय समय पर अपना मानसिक भडार बराबर साफ करते रहा करे, उसमेसे रद्दी और वाहियात चीजें निकालकर फेकते रहा करें, अच्छी और कामकी चीजोको व्यवस्थापूर्वक सजाकर रक्खा करें, तो उन्हीं चीजोका मूल्य बहुत कुछ बढ़ सकता है और वह मूल्य इस प्रकार बढ़ सकता है कि वे बहुतसे नए और अच्छे काम कर सकते है। जिन लोगोंका मन सदा अव्यवस्थित रहेगा जिसमे अनेक प्रकारकी निरर्थक बातें भरी रहेगी, वह कभी कोई काम न कर सकेगा।

अपने मनमे कभी किसी प्रकारका कूड़ा कर्कट इकट्ठा न होने देना चाहिए। जिन विचारोकी हमको कोई आवश्यकता न हो और जिनका हमारे लिए कोई अर्थ न हो, उन विचारोका भार हमे कभी वहन नहीं करना चाहिए। हमे अपनी जीवनयात्राका निर्वाह बहुत ही हलके फलके होकर करना चाहिए। बहुतसे लोग हमेशा इसीलिए घाटेमे रहते है कि वे कभी कोई चीज निकालकर बाहर फेंकना ही नही जानते। हमे इस विचारसे कभी कूड़ा कर्कट इकट्ठा नही करना चाहिए कि यह कभी न कभी हमारे काम आवेगा। वह कूड़ा कर्कट कभी काम तो आता ही नहीं, उलटे बहुतसा स्थान रोकता और गन्दगी फैलाता है और कभी कभी उसके कारण हमे अपनी बहुत ही जरूरी और कामकी चीजोंसे भी हाथ धोना पड़ता है। इसलिए हमे सदा अपना सारा कूड़ा कर्कट निकालकर बाहर फेकते रहना चाहिए और रद्दी या बेकार चीजोंको कभी अपने यहाँ जमा न होने देना चाहिए। इस प्रकारका अभ्यास मनुष्यको बहुत अधिक लाभ पहुँचाता है।

कभी कभी हमे ऐसे लोग भी मिला करते है जिनके मन किराएकी गाड़ीकेसे हुआ करते है, किराएकी गाड़ीपर कभी तो आपको बड़ा भारी विद्वान् सज्जन महात्मा बैठा हुआ मिलेगा और कभी कोई चोर जुआरी शराबी या बदमाश दिखाई देगा। गाड़ीवानको जो सवारी पहले मिलेगी उसीको वह बैठा लेगा, उसे इस बातसे कोई मतलब नहीं कि यह किराएदार भला आदमी है या लुच्चा। ठीक यही दशा इन लोगोंके मनकी भी होती है। वे कभी यह सोचनेका कष्ट नहीं उठाते कि असुक विचार अच्छा है या बुरा, हानिकारक है या लाभदायक। जब जो उनके सामने आता है तब वही ग्रहण कर लेते हैं। न उनमेसे कुछ चुनते हैं और न छाँटते है। ऐसे मनकी दशा

स्पंजकीसी होती है। उसके सामने जो तरल पदार्थ औ[illegible]नन्दमय वह सोख लेता है। स्वभावतः ऐसा मन कभी दूषित [illegible] और विचारोसे रहित पवित्र और स्वच्छ नही हो सकता, क्योकि उस[illegible]ठोर निन्दनीय और गिरानेवाली बाते भी आ आकर भर जाती है।

चरित्रकी श्रेष्ठतामे एक सबसे बड़ी बात यह होती है कि मन व्यव[illegible] रहता है और किसी प्रकारका दुष्ट भाव उसमें प्रवेश नहीं होत[illegible] चरित्रकी श्रेष्ठता अच्छे काम करनेसे होती है और जिस समय म[illegible] अप्रिय या दुष्ट विचार भरे होते है उस समय मनुष्य कोई अच्छा [illegible] कर ही नहीं सकता। जब तक मस्तिष्क शुद्ध और स्वच्छ नहीं [illegible] तब तक मनमे किसी प्रकारका उत्साह या सामर्थ्य आदि आ ही [illegible] सकता। जो लोग अपनी शक्तिके अनुसार अधिकसे अधिक अच्छेसे अच्छा काम करना चाहते है, उन्हे उचित है कि वे सदा प्रसन्न रहा करे और अपने मनमें शुद्ध सुन्दर तथा उन्नत विचार [illegible] करे। जो बात तुम्हारे मनमें किसी प्रकारका क्षोभ या अशान्ति उत्पन्न क[illegible] हो, तुम्हे दुखी और अप्रसन्न करती हो, तुम्हारे मनमे किसी प्रकार[illegible] चिन्ता उत्पन्न करती हो अथवा तुम्हारी मानसिक स्वतन्त्रता और स्वच्[illegible]न्दतामे बाधक हो, उस बातको कभी अपने मनमें आने ही न दो। अ[illegible] यदि तुम ऐसा न करोगे तो फिर वह बात ही प्रबल होकर तुम्हे कि[illegible] कामका न रक्खेगी, वह तुम्हारी सब योग्यताओ और शक्तियोका ना[illegible] कर देगी।

यह श्रेष्ठ और सुन्दर मानसिक मन्दिर हमें इसलिए नहीं दिया गया है [illegible] हम इसमें तुच्छ, नीच और बुरे विचार भरते रहे। यह तो देवताओंका निवा[illegible] स्थान है, इसमें केवल उच्च विचार तथा कमनीय कामनाएँ ही रहनी चाहि[illegible]

यदि हम तुच्छ और निन्दनीय विचारोंके सामने अपने देव भावको दव जाने दे, तो यह हमारे लिए वहुत ही लज्जाकी वात है । मनको सदा अप्रिय और दुःखद विचारोंसे भरा रखना भी उतना ही वुरा है जितना कि चोरी आदि दुष्कर्म करना । जव मनुष्यको अपने आपका और अपनी योग्यताका पूरा पूरा ज्ञान हो जाता है और वह अपने वल तथा सामर्थ्य आदिसे भली भाँति परिचित हो जाता है, तव वह अपने उन मानसिक शत्रुओंको कभी अपने पास भी नहीं फटकने देता जो साधारण अवस्थाओंमे जन्मसे मृत्यु तक उसके पीछे लगे रहते है और उसे कुछ भी काम नहीं करने देते। मनुष्य सदा सौन्दर्य, सत्यता, प्रेम, प्रसन्नता और पूर्णता प्रकट करनेके लिए वनाया गया है, इनके विपरीत भाव प्रकट करनेके लिए नहीं ।

जो व्यक्ति अपने मनसे अप्रिय और निरर्थक वाते सदाके लिए निकालकर वाहर नहीं फेंक सकता, वह कभी ठीक ढंगसे और अच्छी तरह जीवन व्यतीत करना नहीं जानता । अप्रिय और निरर्थक विचार ही हमारी उन्नतिमे वाधक होते है और हमे कभी सुखी तथा प्रसन्न नहीं रहने देते। चाहे हमसे कितनी ही वड़ी भूल या अपराध क्यो न हुआ हो, हमे उसे सदाके लिए भूल जाना चाहिए। कभी गड़े हुए मुरदोंको उखाड़ते नहीं रहना चाहिए, कभी वीती हुई वातोका सोच नहीं करना चाहिए। यदि हमे याद ही रखना हो तो वह शिक्षा याद रखनी चाहिए जो हमें उस भूल या अपराधके कारण प्राप्त होती है । यदि हमसे कोई भारी भूल हो जाय, तो उससे हमे एक ही लाभ उठाना चाहिए और वह लाभ यह है कि हम उससे शिक्षा प्राप्त करते हुए और आगे वढ़े । अपनी हानियो, दोषो और विफलताओंके लिए कुढ़ने और चिन्तित रहनेका कभी कोई शुभ परिणाम हो ही नहीं सकता।

इसलिए अप्रिय विचार या अनुभवसे सदा अपना पीछा छुड़ाना चाहिए और जिस प्रकार हम किसी चोर या बदमाशको अपने घरसे निकाल देते है, उसी प्रकार इन दुष्ट विचारोंको भी निकाल देना चाहिए। जो बाते हमारी शान्ति तथा सुखकी शत्रु हों, उन बातोको कभी अपने मनमे स्थान नहीं देना चाहिए।

यदि तुम्हारे मनमे दूसरोंके प्रति किसी प्रकारके तुच्छ या बुरे भाव हो, यदि तुम्हारे मनमे किसीसे बदला चुकानेका भाव हो, यदि तुम किसीके साथ ईर्ष्या दोष या घृणा रखते हो, तो इन नाशक विचारोको अभी और सदाके लिए अपने मनसे निकाल बाहर करो। अपने आपसे कहो कि मनमे इस प्रकारके दूषित और निकृष्ट विचार रखना मनुष्यत्व नही है, पशुत्व है। इस प्रकारके भाव नीच मनुष्योंके योग्य है और उन्हीको शोभा देते है। जो मनुष्य संसारमे प्रतिष्ठापूर्वक रहना और कोई अच्छा काम कर दिखलाना चाहता हो, उसके लिए ये विचार कभी उपयुक्त नहीं हैं।

यदि जूतेमे कोई काँटा निकल आवे तो वह चलनेमें तबतक कष्ट देता रहता है जबतक वह निकाल न दिया जाय। इसी प्रकार यदि मनमे ईर्ष्या, क्रोध, दुःख, चिन्ता या इसी प्रकारका और कोई दूषित विचार हो तो वह तबतक हमें कष्ट देता रहता है जबतक हम उसे निकाल बाहर न करे। हम बिना अपनी भारी मानसिक तथा शारीरिक हानि किए किसीके साथ ईर्ष्या, द्वेष या घृणा आदि कर ही नही सकते। इस प्रकारके दूपित विचार हमारी वृत्तियोको बहुत ही कठोर कर देते है और हमे पशुके तुल्य बना देते है। परन्तु यदि हम अपने मनमे कृपा और प्रेमका भाव रक्खें, उदारतापूर्वक दूसरोकी सहायता किया सबके साथ सद्व्यवहार रक्खे, तो हमारा जीवन उन्नत होता है,

चरित्र सुन्दर होता है और प्रवृत्ति श्रेष्ठ होती है। हमारे जीवनपर हमारी मांनसिक प्रवृत्तिसे ही रंग चढ़ता है। हम उसीके अनुसार अच्छे या बुरे वनते है। हमारे जैसे आदर्श होते है वैसे ही हम स्वयं भी होते हैं। जो लोग श्रेष्ठ और सज्जन होते है, वे कभी दूसरोको तुच्छ और घृणित नहीं समझते। ऐसे लोग न तो दूसरोके आचरणोकी आलोचना करते है, न उनके उद्देश्यो या विचारो आदिमे शंकाएँ करते हैं और न कभी उन्हे नीच या स्वार्थी समझते है। दूसरोके सम्बन्धमे व्यर्थ बुरे भाव रखनेका परिणाम यह होता है कि मस्तिष्कमे एक प्रकारका विष उत्पन्न हो जाता है, जो हमे सदा पीडित रखता है, हमे शान्त नहीं रहने देता और हमारा चरित्र नष्ट कर देता है। सदा बुरी और अप्रिय बातोका ध्यान रखनेसे शक्ति और योग्यता क्षीण होने लगती है और आदमी कोई अच्छा काम करनेके योग्य नहीं रह जाता। इसलिए ऐसी वातोको सदाके लिए मनसे निकाल देना ही हमारे लिए सबसे अच्छा है।

हमें सदा और सब वातोका विचार छोड़कर अपनी उन्नतिकी ओर ध्यान रखना चाहिए और अपना चरित्रबल बढ़ानेका प्रयत्न करना चाहिए। हमारे साथ जितनी व्यर्थ और हानिकारक बाते लगी हो और जो हमारी उन्नतिमे वाधक हों उनसे हमे सदा बचना चाहिए। हमें अपनी सारी शक्ति अपनी उन्नति और सुधारमे लगानी चाहिए। मूल और मुख्य वातको छोड़कर निरर्थक ओर तुच्छ बातोकी ओर ध्यान देना और इस प्रकार अपनी भारी हानि करना बड़ी भारी मूर्खता है।

हमें अपना हृदय सदा विशाल, उदार और सहानुभूतिपूर्ण रखना चाहिए। यदि कभी किसीने हमारा कोई अपराध किया हो या हमें कोई हानि पहुँचाई हो तो हमे उचित है कि हम उसे सदाके लिए भूल जायँ और कभी उसका ध्यान भी न करे और न किसीके साथ कोई द्वेष

या वैर रक्खे। हमे अपने मनमें सदा यही समझना चाहिए कि अधिकाश लोगोका हृदय दयापूर्ण होता है और वे कभी किसीको जान बूझकर कोई हानि नही पहुँचाते। हमे सदा लोगोके सामने अपना उदारतापूर्ण पार्श्व उपस्थित करना चाहिए। लोग हमारे सम्बन्धमे जो चाहे कहे और जो चाहे करे, पर हमे सदा प्रसन्न रहना चाहिए और सबके साथ दया तथा सहानुभूतिका व्यवहार करना चाहिए। इस प्रकारके व्यवहारका आपके लिए जो शुभ परिणाम होगा वह तो होगा ही, साथ ही उन लोगोपर और भी अधिक उत्तम प्रभाव होगा जिनके साथ आप इस प्रकारका व्यवहार करेगे। इससे आपके परम शत्रुओके चरित्र और व्यवहार आदिमे बहुत ही शुभ परिवर्तन होगा और वे आपके परम अनुगृहीत तथा मित्र बन जायँगे। परन्तु यदि आप दूसरोंसे बदला लेनेकी चिन्तामे रहेगे या उन्हे हानि पहुँचावेगे, तो आपका भी पतन होगा और उन लोगोका भी जिनसे आप बदला चुकावेगे। सब लोग उसी व्यक्तिके साथ प्रेम करते है और उसीकी प्रशंसा करते है, जो सब लोगोके साथ हँसी खुशीसे मिलता है, सबके साथ प्रेम और दयाका व्यवहार करता है और सबकी भलाई करके उन्हे उन्नत करना चाहता है।

यदि कभी किसीने हमारे साथ कोई अनुचित व्यवहार किया हो, तो हम उसे क्यो स्मरण रक्खे? यदि हम ऐसी बातोको विस्मृत करके घृणाके स्थानपर प्रेम करने लगे, निन्दाके स्थानपर प्रशंसा करने लगें, हानि पहुँचानेके स्थानमें सहायता देने लगें, तो उसका परिणाम हमारे लिए भी र दूसरोके लिए भी कितना शुभ होगा। भलाईसे सदा बुराईका नाश है, उच्चके सामने नीच नहीं ठहर सकता। बुराईसे भलाई कही अच्छी, वढ़कर है।

एक स्त्री थी जिसे अनेक प्रकारके कष्ट भोगने पड़े थे और अनेक प्रकारकी पीड़ाएँ सहनी पड़ी थीं। उसने स्वय अपने अनुभवसे एक अवसरपर कहा था—" अन्तमे मुझे निश्चय करना पड़ा कि अपने दुःखोके कारण कभी औरोको दुखी नही करूँगी। ऐसे अवसरोपर भी जब कि मुझे बहुत रोना आता था मैं अपने आपको सँभालकर हँसा करती थी और लोगोके साथ परिहास किया करती थी। जब कभी मुझपर कोई विपत्ति आती थी तब मै हँसती थी। जो कोई मेर पास आता था वह मेरे सामनेसे हँसता हुआ और अच्छे विचार लेकर जाता था। परिणाम यह हुआ कि आनन्दसे आनन्दकी उत्पत्ति हुई। यदि मै अपने भाग्यको बैठी बैठी रोया करती तो मुझे वह प्रसन्नता कभी प्राप्त न होती जो इस समय प्रसन्न रहनेके कारण प्राप्त है।"

कभी कभी ऐसा होता है कि विफलता, हानि, अपमान या कष्ट आदिके कारण कोई व्यक्ति बहुत ही दुखी, निरुत्साह और खिन्न हो जाता है और अपना कर्तव्य छोड़ बैठता है। उस समय यदि कोई प्रसन्नचित्त व्यक्ति आकर उसे प्रसन्न करनेका प्रयत्न करता है तो वह अपने सारे कष्ट भूल जाता है और फिर नए उत्साहसे अपने काममें लग जाता है। थोड़ी ही देरमें उसकी सब परिस्थितियाँ बिलकुल बदल जाती है और उसकी सारी कठिनाइयाँ, सारे कष्ट दूर हो जाते है। ऐसा क्यो होता है इसी लिए कि एक उच्च भावके सामने नीच या तुच्छ भाव नहीं ठहर सकता। उच्च भाव आकर उस नीच भावको निकाल बाहर करता है। यदि हम उच्च भावोंकी इस शक्तिसे भली भाँति परिचित हो जायँ, तो फिर कभी हमारे लिए दुखी, खिन्न या चिन्तित होनेका कोई कारण ही न रह जाय और हम सब प्रकारके दुःखों और चिन्ताओको मनमें उनके विपरीत और उच्च भाव लाकर निकाल बाहर करें। यही प्रसन्न और सुखी रहनेका सबसे अच्छा उपाय है।

जो बातें हमे दुखी और चिन्तित रखती है, उन्हे यदि हम आरम्भमे ही विस्मृत कर दे, तो हमारे चित्तपर कभी उनका कोई स्थायी प्रभाव हो ही नहीं सकता। हम तभी उनके वशमे होते है जब कि हम उन्हे स्मरण रखते है। उन्हे अपने मनमे स्थान देने, बार बार उनका ध्यान करनेसे ही वे हमारे मनमे डेरा डाले रहते हैं और सदा काँटोकी तरह चुभते रहते है। इस प्रकारकी बातोसे पीछा छुड़ानेका सबसे अच्छा उपाय यही है कि हम अपना मन सत्यसे पूर्ण रक्खे और कभी सत्पथसे विचलित न हो। जब हमारे सब काम सत्यतासे युक्त होगे, जब हमारा-विवेक शुद्ध होगा, तब संसारकी कोई बात हमे दुखी, चिन्तित या खिन्न न कर सकेगी। जो लोग सदा सुखी रहना चाहते हो, उन्हे सबसे पहले सत्यका अनुसरण करना चाहिए।

१९–जैसी करनी वैसी भरनी

सुखस्य दुःखस्य न कोऽपि दाता परो ददातीति कुबुद्धिरेषा ।
अहं करोमीति वृथाभिमानः स्वकर्मसूत्रैर्ग्रथितो हि लोकः ॥

यह बात तो संसारके सभी लोग बहुत अच्छी तरह जानते हैं कि जमीनमे जो चीज बोई जायगी वही पैदा होगी । यदि हम जौ बोएँगे तो जौ उत्पन्न होगा और गेहूँ बोएँगे तो गेहूँ उत्पन्न होगा। यदि हम इमलीका पेड़ लगावें तो उसमें आम फलनेकी आशा नहीं कर सकते और यदि बबूल बोएँ तो उससे गुलाबके फूल प्राप्त करनेकी आशा नहीं कर सकते। लेकिन आश्चर्य तो इस बातका है कि इतना सब कुछ बहुत अच्छी तरह जानते हुए भी जब नित्य प्रतिके व्यवहारोसे काम पड़ता है अथवा जब मानसिक क्षेत्रमें कुछ बोने और उसके फल प्राप्त करनेकी अवस्था आती है, तब हम लोग यह सीधा सादा सिद्धान्त, प्रकृतिका यह दृढ और स्थायी नियम, बिल्कुल भूल जाते हैं।

यदि हम बरसो तक अपने मस्तिष्कमे दुःख और असन्तोषके बीज बोते रहे हों, तो किस सिद्धान्तपर हम सुखी और सन्तुष्ट होनेकी आशा कर सकते हैं? यदि हम बराबर रोगके ही बीज बोते रहे हो, तो हम किस प्रकार स्वस्थ रहनेकी आशा करते है ?

यदि कोई खेतिहर अपने खेतमें बोए तो जौ और आशा रक्खे गेहूँकी तो क्या हम उसे पागल न कहेंगे ? परन्तु हम बीज तो बोते है भयका, चिन्ताका, सन्देहका और फिर भी जब हमें शान्ति नहीं मिलती तब हम चकित होते है । परन्तु हमे अपने मनमें यह बात बहुत अच्छी तरह समझ रखनी चाहिए कि खेतोकी बोआई और उपजकी ही भाँति

हमारे विचारोकी भी उपज या सृष्टि होती है। हमारे विचार भी बीज और फलके ही रूपमें होते हैं। जैसा बीज होता है वैसी ही फसल भी होती है। जो व्यक्ति जिस प्रकारके बीज बोता है उसके सामने उसी प्रकारकी विचारोंकी फसल आती है। अपने विचारोके अनुसार ही वह फसल या तो भारी होती है या हलकी और अच्छी होती है या खराब।

जो व्यक्ति विफलताके विचार वपन करता है, वह ठीक उसी प्रकार सफलताकी फसलकी आशा नही कर सकता, जिस प्रकार कोई कृषक नागफनी बोकर गेहूँकी फसलकी आशा नहीं कर सकता। जो व्यक्ति सदा आशा, स्वास्थ्य, शुद्धता, सत्यता और सम्पन्नताके विचार वपन करता है उसके लिए इन्हीं सब चीजोंकी फसल भी तयार होती है। परन्तु जो व्यक्ति इनके विपरीत विचारोका वपन करता है वह उसी प्रकारके फल भी प्राप्त करता है। अच्छे विचारो और अच्छी आशाओंका फल भी बहुत अच्छा होता है। इसके विपरीत बुरे विचार और कदा-शाएँ उन्नतिमे बाधक होती हैं और अच्छे फलोका नाश कर देती है।

यदि हम यह बात अच्छी तरह समझ ले कि संसारके अन्य सब प्रकारके नियमोकी भाँति हमारे मानासिक नियम भी बिल्कुल वैज्ञानिक है तो हमारे जीवनकी बहुतसी समस्याओं और कठिनाइयोका आपसे आप अन्त हो जाय। हमारे मस्तिष्कमें उत्पन्न होनेवाला प्रत्येक विचार एक बीजका काम करता है और अपने ही रूपकी फसल उत्पन्न करता है। वह फूल भी हो सकता है और काँटा भी, घास भी हो सकता है और गेहूँ भी। हम अपने मस्तिष्कमे जिस प्रकारके बीज वपन करते हैं, उसी प्रकारके फलोसे युक्त हमारा आचरण और जीवन होता है। अगर हम हवा बोएँगे तो अवश्य ही अन्धड़का सामना करना पड़ेगा।

यदि हम सम्पन्नताके बीज वपन करेंगे तो हम सम्पन्न तथा सुखी होंगे। यदि हम तुच्छ और दुष्ट विचारोके बीज वपन करेगे तो हम दुखी तथा चिन्तित रहेंगे। मतलब यह कि हमारे विचार बीज है और हमारा जीवन फसल है। कुछ लोग ऐसे होते है जिन्हे देखते ही लोग समझ जाते है कि ये स्वार्थी, दुष्ट, नीच या वाहियात आदमी है। ऐसा क्यो होता है? इसी लिए कि उनके विचारोकी ही छाया उनकी आकृतिमे दिखलाई देती है। कुछ लोग ऐसे होते है जिनकी आकृतिसे ही शान्ति, गम्भीरता और पवित्रता टपकी पड़ती है। ऐसे लोगोको देखते ही हम समझ लेते है कि इनके विचार बहुत ही पवित्र और उन्नत है। मतलब यह कि सारे ससारमे यह नियम पूर्ण रूपसे देखनेमे आता है कि जो चीज जैसी होती है उससे ठीक वैसी ही चीज उत्पन्न होती हैं।

यदि कोई आदमी चाकू लेकर अपने ही शरीरमेसे माँसके टुकड़े काटने लगे, तो वह पागल समझा जायगा और पागलखाने भेज दिया जायगा। परन्तु आजकल ससारमे समझदार कहलानेवाले लोग ऐसे ही होते है जो घृणा, द्वेष, ईर्ष्या और क्रोध आदिके नुकीले और तेज धार-वाले विचारोसे दिन रात अपने मस्तिष्कके अंग प्रत्यंग काटा करते है और फिर भी अपने आपको समझदार ही समझते रहते है। हम अपने मस्तिष्कमे उत्पन्न तो करते है विषपूर्ण विचार और फिर जब उनके फल भी विषपूर्ण लगते हैं, तब बहुत घबराते और दुखी होते है और अपने भाग्य, समाज, समय या परमेश्वर आदिको दोषी ठहराने लगते है।

यदि हम अपने आपको अपनी कामनाओं और इच्छाओके हाथ बेच देंगे तो उसका फल भी हमारे लिए वैसा ही होगा। जो व्यक्ति सदा स्वार्थपूर्ण जीवन व्यतीत करते है, जो लेना ही लेना जानते है देनेका नाम भी नही जानते, उनका जीवनपथ यदि बुरी तरहसे कंटकाकीर्ण हो तो

इसमे उन्हें किसी प्रकारका आश्चर्य न होना चाहिए। हम जो कुछ बोते हैं, वहीं पाते हैं और जो कुछ देते है वहीं हमे मिलता है। बात यह है कि हम लेना तो वहुत कुछ चाहते हैं, पर उसका मूल्य कुछ भी नहीं देना चाहते और कोई चीज विना पूरा पूरा मूल्य चुकाए मिल नहीं सकती। प्रकृतिकी दूकानमे सब चीजे नगद ही विका करती है, उधारका वहाँ काम नहीं है। हम जिस चीजका जितना ही दाम देते है वह हमे उतनी ही मात्रामे मिलती है। यदि हम दाम दे कम, या बिलकुल ही न दे और चीज चाहे ज्यादा, तो हमे स्वभावतः निराश होना पड़ेगा पर इसके लिए हमे किसी दूसरेकी शिकायत नहीं करनी चाहिए। हम जो कुछ लेना चाहते हो उसके लिए या तो हमे पूरा पूरा दाम देना चाहिए और या चुपचाप बैठना चाहिए।

अब वह समय आ रहा है जब कि लोग यह वात अच्छी तरह समझने लग जायँगे कि सफलता और सम्पन्नताकी फसल प्राप्त करनेके लिए विफलता और दरिद्रताके बीज बोनेसे काम न चलेगा। उस समय लोग वही बोएँगे जिसकी फसल वह चाहते होगे। यदि वे सुख सौन्दर्य और प्रेमकी फसल उत्पन्न करना चाहेंगे, तो दया सहानुभूति और सद्व्यवहारके बीज बोएँगे। क्योकि वे इस बातसे भली भाँति अवगत होगे कि यदि हम ईर्ष्या, द्वेष और घृणा आदिके बीज बोएँगे तो हमारे लिए इसके फल भी इसी प्रकारके उत्पन्न होंगे।

अब वह समय आ रहा है जब कि सब लोग पूर्ण वैज्ञानिक रीतिसे जीवन व्यतीत करेगे। वे समझ लेगे कि जीवनमे सुख, शान्ति और सामर्थ्य प्राप्त करनेका एक ही उपाय है और वह यह कि मस्तिष्क क्षेत्रमे विचार इसी प्रकारके बीज बोए जायँ। उस समय सब लोगोको विचाररूपी

बीजो और फसलोंका भी ठीक उतना ही अच्छा और ठीक ठीक ज्ञान होगा जितना आजकल साधारण कृषकोको अन्नके बीजो और फसलोका होता है।

हमारा शरीर हमारे मनकी प्रतिच्छाया मात्र है, वह इसके सिवा और कुछ नहीं है। यदि मनुष्यके मनमे सुन्दर और प्रेमपूर्ण विचार हो, तो अवश्य ही उसका शरीर और आकृति भी ठीक इन्हीं भावोके अनुसार होगी। मनमे निरन्तर एक प्रकारका विचार रखनेसे हमारे शरीरका संघटन भी ठीक वैसा ही हो जाता है। यदि कोई चोर कहीं जाकर चोरी करता है, तो उसे समझ रखना चाहिए कि वह केवल दूसरोकी ही हानि नही करता है बल्कि स्वयं अपनी भी बहुत बड़ी हानि करता है। वह जिसके यहाँ चोरी करता है, उसे तो थोड़ी बहुत अड़चनमें ही डालकर छोड़ देता है पर स्वयं अपने आपपर वह एक बहुत ही जहरीले हथियारसे आघात करता है। हमारे शरीरका संघटन ही ऐसा है कि हम बिना अपनी बहुत बड़ी हानि किए दूसरोंकी छोटी मोटी हानि भी नही कर सकते। यदि हम अपना भला चाहते हों, तो हमे अवश्य ही दूसरोंका भी भला करना चाहिए। हम बिना अपने आपको चोट पहुँचाए अपने पड़ोसीको एक थप्पड़ भी नहीं मार सकते। अपकारका सबसे बड़ा फल तो स्वयं अपकार करनेवालेको ही मिलता है; परन्तु जिसके साथ वह अपकार किया जाता है उसे तो यों ही थोड़ा बहुत फल मिलकर रह जाता है। यदि हम किसी अपकार करनेवालेका विरोध करते है और बदलेमें उसके साथ वैसा ही अपकार करना चाहते है, तो मानो अपनी शक्तिका नाश करते हुए संसारमें दोषो, अपराधों और बुराइयोंकी वृद्धि करते है। परन्तु यदि हम अपने शत्रुके साथ भी प्रेमपूर्ण व्यवहार करते है, तो स्वयं बलवान् बननेके अतिरिक्त उस शत्रुको सदाचारी बनाते और उन्नत करते हैं।

छोटा बच्चा किसी अंगारेपर हाथ रख देता है और जब वह अंगारा उसका हाथ जला देता है तो उसे सदाके लिए यह शिक्षा मिल जाती है कि आगको नहीं छूना चाहिए—इसे छूनेसे शरीर जल जाता है। अज्ञानके कारण अभी हम लोगोकी दशा भी बच्चोकीसी ही है। जब बार बार घृणा, ईर्ष्या, द्वेष आदि करनेपर हमे भली भाँति यह विदित हो जायगा कि सब प्रकारके दुष्ट विचारोका स्वय हमारे लिए ही बहुत बुरा परिणाम होता है, तब हम भी उन विचारोसे उसी प्रकार दूर भागने लगेगे जिस प्रकार हाथ जलनेके बाद बच्चा आगसे बचता है। बदला चुकानेवाला सौदा हमेशा बहुत ही महँगा पड़ता है; इतना महगा पड़ता है कि कभी कोई समझदार आदमी वह सौदा करना पसन्द नही करेगा।

चाहे इस समय हम अपनी वर्तमान अवस्थासे सन्तुष्ट न हो, परन्तु वह वास्तवमे हमारी ही पहलेकी करनीका फल है। हमारे सामने नित्य जैसी करनी वैसी भरनीका प्रमाण आता रहता है। जो कुछ हमने कल किया है उसीका फल हमे आज भोगना पड़ता है। इसलिए अपनी वर्तमान अवस्थासे दुखी होना अपनी मूर्खताके प्रमाणके अतिरिक्त और कुछ नहीं है। यदि आज दिन हमारी अवस्था अच्छी नहीं है, तो हमें समझ लेना चाहिए कि यह हमारी कलकी करनीका ही फल है जो आज हमे मिल रहा है। और यदि हम यह चाहते हो कि कल फिर हमे इस दुर्दशाका सामना न करना पड़े तो हमे आजसे ही अपने आपको सुधारना चाहिए और कोई ऐसा काम न करना चाहिए जिसके लिए फिर कल हमे पश्चात्ताप करना पड़े। हमें बीज बोनेके समय ही होशियार रहना चाहिए। जब बीज बो चुके हो और फसल काटनेकी बारी आवे, उस समय रोना मूर्खता नहीं तो और क्या है? हमारे मनमे उत्पन्न होनेवाला प्रत्येक विचार एक ऐसा बीज है जो ठीक अपने अनुरूप फल उत्पन्न करता है। बहुतसे लोग अपनी

फसलमे कॉटे और रद्दी घास पात देखकर वहुत घवराते और दुखी होते हैं। परन्तु यदि वे अपने जीवनक्रमपर भली भाँति विचार करे, यदि वे अपने कार्यों और विचारों आदिका विश्लेषण करे, तो उन्हें शीघ्र ही ज्ञात हो जायगा कि जो फल उनके सामने आए हैं वे स्वय उन्हींके बोए हुए हैं। यदि वे ईर्ष्या, द्वेप, क्रोध, स्वार्थ आदिके दुष्ट बीज न वोते, तो उन्हे कभी इस प्रकारके कड़वे और जहरीले फल न मिलते। और जव उन्हे यह वात अच्छी तरह माळूम हो जाय तो कमसे कम भविष्यके लिए उन्हे यह दृढ निश्चय कर लेना चाहिए कि अव हम सदा परोपकार, दया, सहानुभूति, आनन्द और प्रेमके वही बीज वोएँगे जिनके फलोसे हम स्वयं भी सुखी हो सकेंगे और दूसरोंको भी सुखी कर सकेगे।

वह समय दूर नहीं है जव कि लोग निर्दयता, ईर्ष्या, द्वेप, क्रोध, स्वार्थपरता आदि दूपित विचारोको मनमे स्थान देनेसे उतना ही डरेगे जितना कि आजकल वे जलती हुई आगमे हाथ डालनेसे डरते है। हमारी भावी सन्तान कभी अपने मनमे किसी प्रकारके बुरे भाव न आने देगी। वह ईर्ष्या, द्वेप और घृणा आदिके घातक अस्त्रोसे कभी आत्मघात न करेगी और दुष्ट विचारोंसे सदा वहुत ही भयभीत रहा करेगी, क्योंकि उस समय वह यह वात वहुत अच्छी तरह समझ लेगी कि मनुष्यका सर्वस्व नष्ट करनेके लिए दुष्ट विचार भी उतने ही समर्थ है जितनी समर्थ अग्नि है। परमात्मा करे ऐसा ही हो।
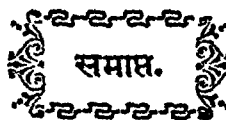
राष्ट्रभाषा हिन्दीकी

सर्वोत्तम और सुप्रसिद्ध ग्रन्थमाला

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर-सीरीज

हिन्दी संसारमें यह सबसे पहली और सबसे अच्छी ग्रन्थमाला है। हिन्दीके ायः सभी साहित्यसेवियों, कवियों और सम्पादकोंने इसकी मुक्तकण्ठसे प्रशंसा ो है। उपन्यास, नाटक, काव्य, जीवनचरित, समालोचना, राजनीति, इति- ास, विज्ञान, सदाचार, आरोग्य आदि विविध विषयोंके कोई ६४ ग्रन्थ इसमें ाकल चुके हैं जिनका हिन्दीप्रेमी पाठकोंने खूब ही आदर किया है।

एक रुपया 'प्रवेश-फीस' जमा करानेसे हर कोई स्थायी ग्राहक बन सकता है। थायी ग्राहकोको सब ग्रन्थ पौनी कीमतमें दिये जाते हैं। आगे सब ग्रन्थोका- ाक्षिप्त परिचय दिया गया है:—

१ **स्वाधीनता।** जान स्टुअर्ट मिलके 'लिबर्टी' नामक ग्रंथका सुबोध और ारल अनुवाद। स्वाधीनताका इतना सुंदर, प्रामाणिक और युक्तियुक्त विचार ायद ही किसी ग्रंथमे किया गया हो। अनुवादक, हिन्दीके आचार्य पं० महा- ीर प्रसादजी द्विवेदी। द्वितीय संस्करण। मू० २)

२ **जॉन स्टुअर्ट मिल।** स्वाधीनताके मूल लेखकका शिक्षाप्रद जीवन- ारित। विद्यार्थियोंके लिए अतिशय उपयोगी। द्वितीयावृत्ति। मूल्य ।।≈)

३ **प्रतिभा।** अतिशय सुरुचिसम्पन्न, भावपूर्ण, मनोरंजक और शिक्षाप्रद उप- न्यास। बालक युवा स्त्री और पुरुष सबके हाथमें देने योग्य। स्त्रियोंके लिए खास तौरसे उपयोगी और मनोरंजक। चतुर्थ संस्करण। मू० १।)

४ **फूलोंका गुच्छा।** अनेक भाषाओंसे अनुवादित बहुत ही उत्कृष्ट ग्यारह गल्पोंका संग्रह। तीसरा संस्करण। मू० ।।-)

५ **आँखकी किरकिरी।** महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुरके सर्वश्रेष्ठ उपन्यासका अनुवाद। यह उपन्यास बहुत ही मनोरंजक और सुशिक्षादायक है। हिन्दीमें इसकी जोड़का एक भी उपन्यास नहीं। इसमें मनुष्यके स्वाभाविक भावोंके चित्र खींचकर उनके द्वारा मित्रकी तरह—आत्माकी तरह—शिक्षा दी गई है। बहुत ही सरस और दिलचस्प है। मू० १।।), राजसंस्करणका २।।)

६ चौबेका चिट्ठा । स्वर्गीय बाबू बंकिमचन्द्रके सुप्रसिद्ध ग्रंथका अनुवाद इसमें हँसी मजाक, चुटीली बातें, इतिहास, राजनीति, समाजनीति, देशप्रे आदि सभी कुछ है। पढ़ते पढ़ते जी नहीं भरता । ती० आ० । मू० ।।।≈)

७ मितव्ययता (गृह-प्रबंध-शास्त्र)। सेमुएल स्माइल्सके 'थ्रिफ्ट' छायानुवाद । किफायतशारी और सदाचार सिखानेवाली सुन्दर पुस्तक । चतु आवृत्ति । यू० पी० और सी० पी० के शिक्षाखातों द्वारा सरकारी स्कूलों लायब्रेरियोके और इनामके लिए स्वीकृत । मू० ।।।≡)

८ स्वदेश । रवीन्द्रबाबूके स्वदेशसंबन्धी आठ निबन्धोका अनुवाद । अपू और अश्रुतपूर्व विचारोका समावेश । चौथी आवृत्ति । मू० ।।≈)

९ चरित्रगठन और मनोबल। चरित्रसंगठनमें सहायता करनेवाली पुस्तक सी० पी० के शिक्षाविभागद्वारा स्वीकृत । पाँचवीं आवृति । मू० ≶)

१२ सफलता और उसकी साधनाके उपाय । इसमें सफलता औ उसके सिद्धान्तोंका सरल भाषामे विचार किया गया है। अनेकानेक ग्रन्थोंके आधा रसे लिखी गई है । इसका एक एक वाक्य बहुमूल्य है । सी० पी० के शिक्षा विभागद्वारा स्वीकृत । दूसरी आवृत्ति । मू० ।।।)

१३ अन्नपूर्णाका मन्दिर । शिक्षाप्रद उपन्यास । मू० ।।।)

१४ स्वावलम्बन। डा० सेमुएल स्माइल्स 'सेल्फ हेल्प' के आधार लिखा हुआ अतिशय शिक्षाप्रद ग्रन्थ । नवयुवकों और विद्यार्थियोंके जीवन उत्साही, उद्योगी और कार्यक्षम बना देनेवाला अपूर्व ग्रन्थ । यू० पी० औ सी० पी० के शिक्षाविभागोंने इसे स्कूलोंकी लायब्रेरियोंमे रखने और इनाम देनेके लिए मंजूर किया है । तीसरी आवृत्ति । मू० १।।)

१५ उपवास-चिकित्सा । उपवास या लंघन नीरोग होनेके लिए सब अच्छी दवा है । भयंकरसे भयंकर और दुःसाध्यसे दुःसाध्य बीमारियाँ उपवास चिकित्सासे आराम हो सकती हैं। इसी बातको इसमें विस्तारके साथ उदाहर देकर समझाया है । तीसरी आवृत्ति । मूल्य ।।।)

१६ सूमके घर धूम । द्विजेन्द्र बाबूके एक प्रहसनका अनुवाद । थके हु ...को घडी भर आराम देनेकी चीज । चौथी आवृत्ति । मू० ।)

१७ दुर्गादास । बंगालमें स्वर्गीय बाबू द्विजेन्द्रलाल राय बहुत ब नाटकलेखक हो गये हैं। देशभक्ति और विश्वप्रेमके भावोंसे उनके नाट

वालव भरे हुए हैं। हमारे यहाँसे उनके १५ नाटक प्रकाशित हो चुके हैं और उनकी हिंदी-संसारमें प   है। यह दुर्गादास भी उन्हींके एक नाटकका अनुवाद है। इसमें जोधपुरनरेश जसवन्तसिंहके सुप्रसिद्ध सेनापति राठोर दुर्गादासका चरित्र अंकित किया गया है। बहुत ही महान् चरित्र है । सी० पी० शिक्षाखातेमें यह पाठ्य पुस्तक है। चौथी आवृत्ति। मू० १)

१९ छत्रसाल। बुन्देलखंडको स्वतंत्रता दिलानेवाले वीरकेसरी छत्रसाल—चरित्रके आधारपर लिखा हुआ अत्यन्त रोचक, उत्कण्ठावर्द्धक और घटनावैचित्र्यपूर्ण उपन्यास। देशभक्ति, आत्माभिमान और वीरताके भाव इसके प्रत्येक पृष्ठ और प्रत्येक पंक्तिमेंसे छलक रहे हैं। तीसरी आवृत्ति। मू० १।।), राजसंस्करण २।।)

२० प्रायश्चित्त। वेल्जियमके नोवल प्राइज पानेवाले सुप्रसिद्ध लेखक मेटरलिंककी एक भावपूर्ण और हृदयद्रावक नाटिकाका सुन्दर अनुवाद । पश्चात्तापकी अग्निमें पापोंके जल जानेकी सुन्दर कल्पना। द्वितीयावृत्ति। मू० ।)

२२ मेवाड़-पतन। स्वर्गीय द्विजेन्द्रबाबूके नाटकका अनुवाद । मेवाड़के राणा अमरसिंह और बादशाह जहाँगीरके इतिहासके आधारपर लिखित। इसके पात्र दाम्पत्य प्रेम, जातीय प्रेम और विश्वप्रेमके सजीव चित्र हैं। मूल्य ।।।=)

२३ शाहजहाँ। यह भी द्विजेन्द्रबाबूका प्रसिद्ध नाटक है। मुगल बादशाह शाहजहाँ इसके प्रधान नायक हैं। बंगालके प्रसिद्ध प्रसिद्ध समालोचकोंकी रायमें यह बंगभाषाका सर्वश्रेष्ठ नाटक है। दूसरी आवृत्ति। मू० १)

२५ उस पार। द्विजेन्द्र बाबूके सामाजिक नाटकका अनुवाद। इसमे एक ओर स्नेह, कृतज्ञता, भक्ति, क्षमा और त्याग और दूसरी ओर कृतघ्नता, अत्याचार, कपटता, निष्ठुरता और हत्याके भाव दिखलाये गये हैं। स्वर्गके साथ नरकका ऐसा तुमुल संग्राम शायद ही किसी नाटकमें दिखलाया गया हो । बहुत ही शिक्षाप्रद है। दूसरी आवृत्ति। मूल्य १=)

२७ देश-दर्शन। तृतीयावृत्ति। पृष्ठसंख्या ३५०, चित्रसंख्या १८, मूल्य साधारण संस्करणका २), राजसंस्करणका ३)। देशकी दुर्दशाका दर्शन करानेवाला अपूर्व ग्रन्थ। ६ हजार कापियाँ बिक चुकी हैं।

२९ नवनिधि। सुप्रसिद्ध उपन्यासलेखक प्रेमचन्दजीकी एकसे एक बढ़कर चुनी हुई नौ गल्पोंका सग्रह। मू० ।।।)

३० नूरजहाँ । द्विजेन्द्रवाबूका ऐतिहासिक नाटक । मुगल बादशाह जहाँगीर और उनकी बेगम नूरजहाँके चरित्रोंके आधारसे लिखित । दूसरी आवृत्ति । मू० १=)

३१ आयर्लैण्डका इतिहास । यों तो आयर्लैण्डका इतिहास सभी पराधीन जातियोंके लिए शिक्षाप्रद है; परन्तु भारतवासियोंके लिए तो यह बहुत ही उपकारक और सच्चा मार्गदर्शक है । यह केसरी-सम्पादक श्रीयुत केलकरका लिखा हुआ है । मू० १॥=)

३२ शिक्षा । साहित्यसम्राट् रवीन्द्रवाबूके शिक्षासम्बन्धी पाँच निबन्धोंका अनुवाद । दूसरी आवृत्ति । मू० ॥)

३३ भीष्म । द्विजेन्द्रवाबूका पौराणिक नाटक । महाभारतके वीर भीष्मपितामह,इसके प्रधान पात्र हैं । बहुत ही शिक्षाप्रद और खेलने योग्य है । मू० १।)

३४ कावूर । इटलीको स्वाधीनता दिलानेवाले वहाँके एक महान् देशभक्त और राजनीतिज्ञका जीवनचरित । मू० १)

३५ चन्द्रगुप्त । द्विजेन्द्रवाबूका हिन्दू राजत्वके समयका ऐतिहासिक नाटक । मौर्यवंशी सम्राट् चन्द्रगुप्तके चरित्रको लेकर इसकी रचना की गई है। मू० १)

३६ सीता । द्विजेन्द्रवाबूका पौराणिक नाटक महासती सीताका आदर्श चरित्र । पढकर पाठक मुग्ध हो जायँगे । द्वितीयावृत्ति । मू० ॥-)

३८ राजा और प्रजा । जगत्प्रसिद्ध विद्वान् रवीन्द्रवाबूके राजनीतिसम्बन्धी ११ निबन्धोंका अनुवाद । दूसरी आवृत्ति । मू० १)

३९ गोबर-गणेश-संहिता । व्यंग और वक्रोक्तियोंसे भरी हुई बहुत ही दिलचस्प चीज । दूसरी आवृत्ति । मू० ॥)

४१ पुष्पलता । अतिशय मनोहर और हृदयद्रावक गल्पगुच्छक । कई चित्रोंसे सुशोभित । दूसरी बार छपाई गई है मू० १)

४२ महादजी सिन्धिया । अँगरेजोंके प्रबल प्रतिद्वन्द्वी, असमसाहसी, वीरकेसरी महादजी सिन्धियाका जीवनचरित । मू० ॥=)

४३ आनन्दकी पगडंडियाँ । अमेरिकाके ज्ञानी और अतर्द्रष्टा लेखक जेम्स एलेनके 'बाइवेज आफ ब्लेसडनेस' नामक वेदान्त ग्रन्थका अनुवाद । मू० सजिल्दका १॥)

४४ ज्ञान और कर्म । बंगालके सुप्रसिद्ध विद्वान्, हाईकोर्टके जज, स्व० गुरुदास बनर्जी, एम० ए०, पी० एच० डी०, डी० एल० के अमूल्य ग्रन्थका अनुवाद ।मू० ३)

४५ सरल मनोविज्ञान । इसमे मनोविज्ञान जैसे कठिन विपयको वहुत ही सरलतासे सुगम भापामें अच्छी तरह उदाहरण आदि देकर समझाया है और प्रत्येक अध्यायके अन्तमें एक रोचक प्रश्नावली दी है जो इस विपयके विद्यार्थियोंके लिए वड़े कामकी है । मू० १॥)

४६ कालिदास और भवभूति । संस्कृतके दो सुप्रसिद्ध कवियोंके अभिज्ञान शाकुन्तल और उत्तररामचरित इन दो नाटकोंकी गुणदोषविवेचिनी, मर्मस्पर्शिनी और तुलनात्मक समालोचना । लेखक सुप्रसिद्ध नाटककार स्व० द्विजेन्द्रलाल राय । मू० १॥)

४७ साहित्य-मीमांसा । यह भी एक समालोचनाका ग्रन्थ है । इसमें पूर्वके और पश्चिमके साहित्यकी—यूरोपियन और आर्यसाहित्यकी—तुलनात्मक समालोचना की गई है और इस देशके साहित्यको सव तरहसे आदरणीय, उत्कृष्ट और महान् सिद्ध किया है । विहार यूनीवर्सिटीने इसे अपने वी० ए० के कोर्सके लिए चुना है । मू० १।≈)

४८ महाराणा प्रतापसिंह । स्वर्गीय द्विजेन्द्रवावूके दुर्लभ नाटकका अनुवाद । इसमें महाराणा प्रताप, उनके भाई शक्तसिंह, राजकवि पृथ्वीराज, उनकी स्त्री जोशीवाई, अकवरकी कन्या मेहरुन्निसा और भानजी दौलतुन्निसा आदि पात्रोंके चरित्र एक अपूर्व ढंगसे चित्रित किये गये है । मू० १॥)

४९ अन्तस्तल । इसमें सुख, दुःख, स्मृति, भय, क्रोध, लोभ, निराशा आशा, घृणा, प्यार, लज्जा, अतृप्ति आदि मानसिक भावोंको विल्कुल ही अनोखे ढंगसे चित्रित किया है । यह हिन्दू यूनीवर्सिटीके वी० ए० के कोर्समें पाठ्य पुस्तक है । मू० ॥≈)

५० जातियोंको सन्देश । मूल-लेखक श्रीयुत पाल रिचर्ड और भूमिका-लेखक साहित्यसम्राट् श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर । इसमें साम्राज्यमदसे मतवाली हुई पाश्चात्य जातियोंको वड़ा ही मार्मिक और चुभनेवाला उपदेश दिया है । पाल रिचर्ड महाशय वड़े भारी विश्वप्रेमी और शान्तिप्रेमी है । मू० ॥–)

५१ वर्तमान एशिया । पाश्चात्य जातियोंने एशियाके अनेक देशों, प्रान्तों और अगणित द्वीपोंपर जिन धूर्तताओं, छलकपटों, अत्याचारों और झूठे प्रलोभनोंसे अधिकार विस्तार किया है और अनेक वड़ी वड़ी जातियोंको अपना गुलाम वनाया है उनका सारा कच्चा चिट्ठा । मू० २)

५२ नीतिविज्ञान। लेखक, बाबू गोवर्धनलाल, एम. ए., बी. एल.। आचा
रशास्त्र या नीतिविज्ञानपर अभीतक हिन्दीमें कोई ग्रन्थ नहीं है। यह सब
पहला ग्रन्थ है। सच्चे सदाचार और सच्चे धर्मको पहिचानिए। मू० २।)

५३ प्राचीन साहित्य। साहित्याचार्य रवीन्द्रनाथ ठाकुरके प्राचीन साहित्य
सम्बन्धी आगे लिखे हुए सात निबन्धोंका अनुवाद—१ रामायण, २ धम्मपद,
कुमारसंभव और शकुन्तला, ४ शकुन्तला, ५ मेघदूत, ६ कादम्बरी चित्र,
काव्यकी उपेक्षिता। हिन्दू यूनीवर्सिटीमें पाठ्य ग्रन्थ। मूल्य ॥-)

५४ समाज। रवीन्द्रबाबूके आगे लिखे हुए, समाजशास्त्रसम्बन्धी आठ निब
न्धोंका अनुवाद—१ आचारका अत्याचार, २ समुद्रयात्रा, ३ विलासकी फाँसी,
४ नकलका निकम्मापन, ५ प्राच्य और प्रतीच्य, ६ अयोग्य भक्ति, ७ पूर्व
और पश्चिम, ८ चिट्ठीपत्री। मू० ॥।=)

५५ अञ्जना। पौराणिक कथाके आधारसे लिखा हुआ श्रीयुत सुदर्शनक
मौलिक नाटक। बहुत ही भावपूर्ण और शिक्षाप्रद। इससे प्रसन्न होकर पंजाबके
सरकारी शिक्षाखातेने लेखकको ५००) इनाम दिया है। पंजाबके स्कूलोंकी लाय
ब्रेरियोंके लिए और इनामके लिए भी यह मंजूर है। मू० १।)

५६ मुक्तधारा। महाकवि रवीन्द्रनाथका नया नाटक। प्रो० धर्मेन्द्रनाथ शास्त्र
एम० ए०, तर्कशिरोमणिकी विस्तृत भूमिकासहित। मू० ॥≤)

५७ सुहराब रुस्तम। स्व० द्विजेन्द्रलाल रायकी वीर और करुणरसं
भरी हुई बंगाली नाटिकाका गद्य और पद्यमय अनुवाद। मू० ॥=)

५८ चन्द्रनाथ। बंगालके इस समयके सर्वश्रेष्ठ लेखक शरच्चन्द्र चट्टोपाध्याय
एक सुन्दर सामाजिक उपन्यासका अनुवाद। बहुत ही मार्मिक और हृदयद्राव
है। समाप्त किये बिना नहीं छोड़ा जाता। मू० ॥।)

५९ भारतके प्राचीन राजवंश। (तीसरा भाग) इस भागमें प्राची
कालसे लेकर अबतकके तमाम राष्ट्रकूटों अर्थात् राठोड़ों और गहड़वालोंक
सिलसिलेवार इतिहास बड़ी खोजसे संग्रह किया गया है। मू० ३), ४)

६० रवीन्द्र-कथाकुञ्ज। महाकवि रवीन्द्रनाथकी तमाम गल्पोंमेंसे चुनी हु
हुई ही उच्च श्रेणीकी ९ गल्पोंका संग्रह।—१ जय पराजय, २ पड़ोसिन
३ राजतिलक, ४ समाप्ति, ५ जासूस, ६ अतिथि, ७ दृष्टिदान, ८ अध्यापक औ
९ दुर्बुद्धि। प्रत्येक गल्प एक एक गद्य खण्डकाव्य है। मू० १)

६१ मेरे फूल। गुरुकुल कांगड़ीके स्नातक पं० वंशीधरजी विद्यालंकारकी कवितापुस्तक। मू० ।॥)

६२ संजीवन-संदेश। भारतके साधुशिरोमणि टी. एल. वास्वानीके नवयुवकोंको लक्ष्य करके लिखे हुए तीन महत्त्वपूर्ण निवन्ध। मू० ॥=)

६३ प्रेम-प्रपंच। जर्मनीके महाकवि 'शिलर' के एक प्रसिद्ध और सुंदर नाटकका अनुवाद। मू० ॥≡)

६४ सामर्थ्य, समृद्धि और शान्ति। डा० ओरिसन स्वेट मार्डेनके प्रसिद्ध आध्यात्मिक ग्रन्थका भावानुवाद। मू० १॥)

नोट—कपडेकी जिल्दवाली पुस्तकोंका मूल्य ऊपर लिखे हुए मूल्यसे आठ आने अधिक है। आगे औ[illegible] अच्छे अच्छे ग्रन्थ निकालनेका प्रवन्ध किया जा रहा है। हिन्दी हितैषियोंको इस ग्रन्थमालाके ग्राहक वढ़ाना चाहिए।

प्रकीर्णक-पुस्तकमाला।

१ अस्तोदय और स्वावलम्बन। सेमुएल स्माईल्सके सुप्रसिद्ध 'सेल्फ-हेल्प' (स्वावलम्बन) ग्रन्थके ढंगका स्वावलम्वनका पाठ सिखानेके लिए वहुत ही उपयोगी ग्रन्थ। मू० १=)

६ कोलम्बस। अमेरिका महाद्वीपका पता लगानेवाले एक असीमसाहसी उत्साही नाविकका जीवनचरित्र। मू० ।॥)

७ सन्तान-कल्पद्रुम। अपने ढगकी एक ही पुस्तक है। मू० १)

१० कर्नल सुरेश विश्वास। एक वंगालीका अद्भुत जीवनचरित। मू० ॥)

११ व्यापारशिक्षा। व्यापारसम्वन्धी वहुत ही उपयोगी पाठ। मू० ।॥)

१२ शान्ति-वैभव। चरित्रगठन और चरित्रसशोधनके लिए वहुत ही उपयोगी है। दूसरी आवृत्ति। मू० ।=)

१३ व्याही वहू। ससुराल जानेवाली लड़कियोंके लिए वहुत ही उत्तम शिक्षा देनेवाली एक अनुभवी विद्वान्‌की लिखी हुई पुस्तक। मू० ।)

१४ पाषाणी (अहल्या)। द्विजेन्द्रवावूका पौराणिक नाटक। इसमे अहल्या और गौतम ऋषिका विचित्र चरित्र अंकित किया गया है। मू० ।॥)

१५ सिंहल-विजय। द्विजेन्द्रवावूका ऐतिहासिक नाटक। मू० १=)

१८ प्राकृतिक चिकित्सा। मू० ।=) १९ योग चिकित्सा। मू =)

२० दुग्ध चिकित्सा। मू० =) २१ सुगम चिकित्सा। मू० =)

२२ देवदूत। सुकवि पं० रामचरित उपाध्यायका देशभक्तिके भावों लबालब भरा हुआ खण्डकाव्य। मू० ।≈)

२३ देवसभा। यह भी पूर्वोक्त उपाध्यायजीकी ही रचना है। मू० ।-

२४ अरबी-काव्य-दर्शन। अरबीके नामी नामी कवियोंकी विविध प्रकारकी रचनाओंका संग्रह। मू० १।)

२५ बूढेका ब्याह। खड़ी बोलीका सुन्दर सचित्र काव्य। मू० ।≈)

२६ सुखदास। श्रीयुत प्रेमचन्दजीने इसे जार्ज इलियटके 'साइलस माइनर' नामक उपन्यासकी छाया लेकर लिखा है। मू० ॥≈)

२७ श्रमण नारद। बौद्ध युगकी सुन्दर कहानी। मू० ≈)

२८ दियातले अँधेरा। मू० ≈) ३० भ[illegible]क एक करुण कहानी। मू० ≈

३१ पिताके उपदेश। मू० ≈)

३२ अच्छी आदतें डालनेकी शिक्षा। मू० ≈)॥

३३ विद्यार्थियोंके जीवनका उद्देश्य। मू० –)॥

३४ जीवन-निर्वाह। असली धर्मका, सच्चे सदाचारका और सच्ची देशोन्नतिका स्वरूप समझानेवाला अतिशय शिक्षाप्रद ग्रन्थ। मू० १)

३५ जननी और शिशु अर्थात् जच्चा और बच्चा। मू० ॥≈)

३७ भारतके प्राचीन राजवंश। द्वितीय भाग। शिशुनाग, नन्द, मौर्य शुङ्ग, कण्व, पल्लव, शक, कुशान, हूण, गुप्त, वैस, आन्ध्र, मौखरी, लिच्छवि ठाकुरी आदि प्राचीन राजवंशोका इतिहास। मू० ३)

३८ विद्यार्थियोंका सच्चा मित्र। आरोग्य या स्वास्थ्यविज्ञानकी अद्वितीय सरल पुस्तक। मू० ॥।≈)

३९ ठोक पीटकर वैद्यराज। प्रहसन। मू० ॥)

४० विधवा-कर्तव्य। विधवाओंको सन्मार्ग सुझानेवाली एक बहुत उत्कृष्ट पुस्तक। द्वितीयावृत्ति। मू० ॥)

४१ चित्रावली। बंगालके नामी नामी लेखकोंकी लिखी हुई सुन्दर गल्पोंका सग्रह। मूल्य ॥≈)

हमारा पता—

मैनेजर, हिन्दी-ग्रंथ-रत्नाकर कार्यालय,

हीराबाग, पो० गिरगांव बम्बई